श्री
प्रकरण माला.

(भाषान्तर)

आ पुस्तक
श्री चतुर्विध संघने भणवा तथा वांचवा
योग्य जाणी
ते
हेमशंकर लक्ष्मीशङ्कर वर्द्धमानकर पासे
गुजरातीमां भाषान्तर करावी

छपावी प्रसिद्ध कर्त्ता,
शा भोगीलाल ताराचंद
तथा
भाषान्तर कर्त्ता

अमदावाद
युनियन प्रिन्टिंग प्रेस कंपनी लिमिटेड

संवत् १९५८ सन १९०१

किंमत रु १—०—०

प्रस्तावना

आ प्रकरण मालानु पुस्तक स्वधर्माभिलाषी जैन श्रावकोना हाथमा अर्पण करवानी साथे अमो तेमनी विनती करीए छीए के, आजसुधीमा जैनधर्मना बहु पुस्तको छपाइ बहार पड्या छे पण फक्त एक पुस्तकथी तेवा अनेक पुस्तकोनो लाभ मली शके तेवा पुस्तको तो घणा थोडा बहार पडेला दीठामा आवे छे जीवाजीवादि पदार्थोने जाणवाना हेतुथी जीवविचार नवतत्व विगेरे बहु पुस्तकोनो संग्रह करवो पडे अने तेमा द्रव्यनो बहु खर्च थाय ते करता थोडा खर्चथी तेवा बहु पुस्तकोनो लाभ मली शके तेवु एकज पुस्तक होय तो तेथी गरीब अने तवंगर एम सहुने सरखो लाभ थइ पडे अने तेवा कारणथीज अमे आ प्रकरणमाला नामनु पुस्तक छपाव्यु छे आ पुस्तकमा जीवविचार विगेरे अढारीश प्रकरणोनो समावेश थयो छे तेमा उत्तरोत्तर वधारे रसीक अने बोधकारक प्रकरणोनो समावेश करवामा आव्यो छे प्रथम जीवविचार, नवतत्व, दंडक अने संग्रहणीनु ज्ञान थया पछी इंद्रियोने नियममा राखवाना हेतुथी इंद्रियपराजयशतक अने पछी वैराग्यदर्शक वैराग्यशतक दाखल कर्यु छे तेना पछी गौतमकुलक विगेरे कुलकोनो समावेश कर्या पछी शाश्वता जीननी स्तुति अने शत्रुंजयकल्प विगेरे महात्म्यदर्शक प्रकरणनो समावेश कर्यो छे छेवटे आत्मज्ञाननु जाणपणु थवाना कारणरूप समाधिशतक अने सज्जनचित्त वल्लभ दाखल कर्यु छे छेवटे त्रण प्रकरणो मूलपाठ दाखल करी आ पुस्तकने पूर्ण करवामा आव्यु छे

अमो आशा राखीए छीए के, जैन श्रावको जूदा जूदा आचार्योए उपकारना हेतुथी बनावेला आ प्रकरणने वाचवानो तथा अभ्यास करवानो लाभ लइ ते आचार्योनो उपकार भूली जशे नही

आ पुस्तक छपाती वखते जे काइ दृष्टिदोषथी अथवा मतिदोषथी भूल थइ छे तेनु शुद्धिपत्र पाछल दाखल कर्यु छे छता कोइ भूल रही होय तो ते सज्जन पुरुषोए माफ करी सुधारी लेवी

ली प्रसिद्धकर्ता

अनुक्रमणिका.



॥ श्री महावीरस्वामीने नमः ॥

॥ प्रकरणमाला ॥

॥ जीवविचार प्रकरण पहेलुं ॥

ग्रंथकर्त्ता मंगळाचरणपूर्वक प्रयोजन सूचवे छे

भुवणपईवं वीरं, नमिऊण भणामि अबुह बोहत्थं ॥
जीवसरूवं किंचिवि, जह भणियं पुव्वसूरीहिं ॥ १ ॥

शब्दार्थ—त्रणभुवनमां दीवा समान श्री वीरप्रभुने नमस्कार करीने जेम पूर्वना आचार्योए कह्युं छे तेम अज्ञानि जीवोने बोध थवाने अर्थे काइक पण जीवनुं स्वरूप हुं कहुं छुं ॥ १ ॥

हवे जीवना भेदो कहे छे

जीवा मुत्ता संसा-रिणो य तस थावरा य संसारी ॥
पुढवि जल जलण वाऊ वणस्सई थावरा नेआ ॥२॥

शब्दार्थ—जीवो बे प्रकारना छे एक मुक्तिना अने बीजा संसारी, संसारी जीवो बे प्रकारना एक त्रस अने बीजा स्थावर पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वाउकाय अने वनस्पतिकाय ए पांच स्थावर जाणवा. ॥ २ ॥

हवे पृथ्वीकायना भेदो कहे छे

फलिहमणिरयणविद्दुम ॥ हिंगुलहरियालमणसिलरसिंदा
कणगाइधाउ सेढी, वन्नि अरणेट्टय पलेवा ॥ ३ ॥

अप्भय तूरी ऊसं, मट्टी पाहाणजाइ‍उ णेगा ॥
सोवीरंजण लूणा-इ पुढविन्नेआइ इच्चाई ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—स्फटिक, मणि, रत्न, प्रवालां, हिंगलो, हरताल, मणसिल, पारो, सोनादि सात धातुउ, खडी, रमजी, पाषाणनी साथे मलेली धोली माटी, पारेवो पाषाण, पांच वर्णनो अबरख, तेजंतुरी, खारीमाटी, माटी, अनेक पाषाणनी जातियो, सुरमो अने सिंधव आदि, इत्यादि पृथ्वीकायना भेदो जाणवा. ४

हवे अप्कायना भेदो कहे छे.

भोमंतरिक्खमुदगं, उसा हिम करग हरितणू महिआ॥
हुंति घणोदहिमाई, भेया णेगा य आउस्स ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—पृथ्वीनुं पाणि, आकाशनुं पाणि, उसनुं पाणि, हिमनुं पाणि, करानुं पाणि, लीला घास उपरनुं पाणि, धुवरनुंपाणि अने घनोदधिनुं पाणि, इत्यादि अप्कायना अनेक भेदो होय छे. ५

हवे अग्निकाय जीवोना भेदो कहे छे.

इंगालजालमुम्मुर-उक्कासणिकणगविज्जुमाईआ ॥
अगणिजिआणं भेआ, नायव्वा निउणबुद्धीए ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—अंगारानो अग्नि, जालनो अग्नि, भरसाडनो अग्नि, उल्कापातनो अग्नि, वज्रनो अग्नि, कणियानो अग्नि अने विजलीनो अग्नि, इत्यादि अग्निकाय (तेउकाय) जीवोना भेदो सूक्ष्म बुद्धिथी जाणवा. ॥ ६ ॥

हवे वायुकायना भेदो कहे छे.

उब्भामगउक्कलिया, मंडलिमहसुद्धगुंजवाया य ॥
घणतणुवायाईया, भेया खलु वाउकायस्स ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—उद्भ्रामकवायु, उत्कलितवायु, मंडलिवायु, महावायु, शुद्धवायु, गुंजारव करतो वायु अने घनवायु तथा तनवायु

विगेरे वायुकायना भेदो निश्चे जाणवा ॥ ७ ॥

हवे वनस्पति कायना भेदो कहे छे

साहारणपत्तेया, वणस्सइजीवा दुहा सुए भणिआ ॥
जेसिमणंताणं तणु, एगा साहारणा तेऊ ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—साधारण अने प्रत्येक एवा वनस्पतिकाय जीवोना वे भेदो सूत्रमा कह्या छे तेमा जे अनत जीवोनु एक शरीर होय ते साधारण जाणवा ॥ ८ ॥

हवे साधारण वनस्पतिकायना भेदो कहे छे

कंदा अंकुरकिसलय पणगा सेवाल भूमिफोडा य ॥
अल्लतियगज्जरमो–त्थ वत्थुला थेगपल्लंका ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—सूरण विगेरे सर्व जातिना कद, अकुरा, कुंपलो, पाचवर्णनी लीलफुल, सेवाल, बीलाडोना टोप अने त्रण जातनु आदु, गाजर, मोथ, वथुलो, थेऊ, पल्लकानी भाजी ॥ ९ ॥

कोमलफलं च सव्वं, गूढसिराइ सिणाइपत्ताइं ॥
थोहरिकुंआरिगुग्गुलि–गलोयपमुहा य छिन्नरुहा १०

शब्दार्थ—वली सर्व जातिना कोमल फल, जेनो कणसलो, नसो, साधो प्रगट न देखातो होय ते, शण विगेरेना पादडा, सर्व जातनो थोर, गुगल, गलो ए विगेरे जे छेद्या छता फरी ऊगे ते. १०

इच्चाइणो अणेगे, हवंति भेया अणंतकायाणं ॥
तेसि परिजाणणत्थं, लक्खणमेयं सुए भणियं ॥११॥

शब्दार्थ—इत्यादि अनतकाय जीवोना अनेक भेदो होय छे. तेमने जाणवा माटे आ नीच लखेलु लक्षण सूत्रमा कह्यु छे ११

हवे अनतकाय वनस्पति जीवोनु लक्षण कहे छे

गूढसिरसंधिपव्वं, समभंगमहीरुगं च छिन्नरुहं ॥
साहारणं सरीरं, तव्विवरीयं च पत्तेयं ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—जेनां कणसला, सांधा के गांठ्यो न देखाती होय, भागी नाखवाथी जेना सरखा बे भाग थता होय, जे रेसा विनाना होय, तथा जे छेदीने वावीएतो पण फरीने उगे ते साधारण वनस्पति कायनां शरीर कहेवाय अने तेनाथी विपरीत लक्षणवाली वनस्पति होय ते प्रत्येक जाणवी. ॥ १२ ॥

हवे प्रत्येक वनस्पतिकायनुं लक्षण कहे छे.

एगशरीरे एगो, जीवो जेसिं तु ते य पत्तेया ॥
फलफूलछल्लिकठ्ठा, मूलगपत्ताणि बीयाणि ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—वली जेमनां एक शरीरने विषे एक जीव होय ते प्रत्येक जाणवा. ते प्रत्येक वनस्पति कायना सात भेद छे. सर्व जातिनां फल, फुल, छाल, लाकडां, मूल, पांदडां अने बीज ए सर्व प्रत्येक वनस्पतिकाय जाणवा. ॥ १३ ॥

हवे पांच स्थावर सूक्ष्मनुं वर्णन करे छे.

पत्तेयतरु मुत्तं, पंचवि पुढवाइणो सयललोए ॥
सुहुमा हवंति नियमा, अंतमुहुत्ताउ अदिस्सा ॥१४॥

शब्दार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकायने मूकीने चौद राजलोकने विषे सूक्ष्म एवा पांचे पृथ्वीकायादि निश्चे अंतर्मुहूर्त्तनां आयुष्यवाला अने अदृश्य (चर्मचक्षुथी न देखी शकाय तेवा) होयछे.

हवे बे इंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

संखकवड्डय गंडुल—जलोयचंदणगअलसलहगाई ॥
मेहरिकिमिपूअरगा, बेइंदिय माइवाहाई ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—शंख, कोडा, गंडोला, जलो, चंदनक (अरिया) अलसिया, लालीया, मेर, (लाकडाना कीडा) करमीया, पोरा अने चूडेल विगेरे बेंद्रिय जीवो जाणवा. ॥ १५ ॥

हवे तेंद्रिय जीवोना भेद कहे छे

गोमीमंकणजूआ, पिपीलि उद्देहिया य मक्कोडा ॥
इल्लियघयमिल्लीओ, सावय गोगीडजाईओ ॥ १६ ॥
गद्दहय चोरकीडा, गोमयकीडा य धन्नकीडा य,
कुंथुगुवालियइल्लिया, तेइंदिय इंदगोवाई ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—कानखजूरा, माकड, जू, कीडीयो, उधइ, वली मंकोडा, एलो, घीमेलो, सवा, गीगोडानी जातियो गधैया, चोरकीडा, छाणनाकीडा, धान्यनाकीडा, कुंथुआ, गोपालिका, एलो अने इंद्रगोप ए सर्वे तेरिन्द्रिय जीवो जाणवा ॥ १६–१७ ॥

हवे चउरिंद्रिय जीवोना भेद कहे छे

चउरिंदिया य विच्छू, ढिंकुणभमरा य भमरिया तिडा
मच्छियडसा मसगा, कंसारी कविलडोलाई ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—वली विछी, बगाई, भमरा तेमज भमरी, तीड, माखी, डास, मच्छर, कसारी, कपिल अने खडमाकडी ए चउरिन्द्रिय जीवो जाणवा ॥ १८ ॥

हवे पचेंद्रिय जीवोना भेद कहे छे

पंचिंदिया य चउहा, नारयतिरिया मनुस्सदेवा य ॥
नेरइया सत्तविहा, नायव्वा पुढविभेएणं ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—वली पचेन्द्रिय जीवो चार प्रकारना छे तेमा १ नारकी, २ तिर्यंच, ३ मनुष्य अने ४ देवता. तेमा नारकी जीवो रत्नप्रभादि पृथ्वीना भेदथी सात प्रकारना जाणवा ॥ १९ ॥

हवे पचेंद्रिय तिर्यंचना भेद कहे छे

जलयरथलयरखयरा, तिविहा पंचेंदिया तिरिक्खा य ॥
सुसुमारमच्छकच्छव–गाहा मगराइ जलचारी ॥ २० ॥

शब्दार्थ—वली तिर्यंच पचेन्द्रिय जीवो त्रण प्रकारना छे ते

जलचर, थलचर अने खेचर तेमां [1]सुसुमार, माछला, काचबा कुर्म अने मगर ए विगेरे जलचर जीवो जाणवा. ॥ २० ॥

हवे थलचर जीवोना भेदो कहे छे.

चउपयउरपरिसप्पा, भुयपरिसप्पा य थलयरा तिविहा॥
गोसप्पनउलपमुहा, बोधव्वा ते समासेणं ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—थलचर जीवो त्रण प्रकारना छे. ते [2]चतुष्पद, [3]उरपरिसर्प अने [4]भुजपरिसर्प. ते अनुक्रमे गाय, सर्प अने नोलीया विगेरे संक्षेपथी जाणी लेवा. ॥ २१ ॥

हवे खेचर जीवोना भेदो कहे छे.

खयरा रोमयपक्खी, चम्मयपक्खी य पायडा चेव ॥
नरलोगाउ बाहिं, समुग्गपक्खी वियथपक्खी ॥ २२ ॥

शब्दार्थ—खेचर जीवो बे प्रकारना छे. १ [5]रोमजपक्षी, २ [6]चर्मजपक्षी. ते प्रसिद्धज छे. वली मनुष्यलोकनो बहार संकोचेली पांखोवाला अने विस्तारेली पांखोवाला एम बे जातना पक्षीयो छे.

हवे जलचर थलचर अने खेचरना बबे भेदो कहे छे

सव्वे जलथलखयरा, संमुच्छिमा गब्भया दुहा हुंति ॥
कम्माकम्मगभूमि—अंतरदीवा मणुस्सा य ॥ २३ ॥

शब्दार्थ—सर्वे जलचर, थलचर अने खेचरजीवो सम्मूर्छिम तथा गर्भज एवा बे प्रकारना छे. वली मनुष्यो कर्मभूमिना, अकर्मभूमिना अने अंतर्द्वीपना एम त्रण प्रकारना छे. ॥२३॥

हवे चार निकायना देवोना भेदो कहे छे-

दसहा भवणाहिवई, अट्ठविहा वाणमंतरा हुंति ॥
जोइसिया पंचविहा, दुविहा वेमाणिया देवा ॥ २४ ॥

---

१ आ जीवो पाडाना आकारे थाय छे. २ चार पगवाला. ३ पेटवती चालनारा. ४ हाथवती चालनारा. ५ रुंवाटानी पांखोवाला, ६ चांमडानी पांखोवाला.

शब्दार्थ—ज्ञवनपति देवता दश प्रकारना, वाणव्यंतर देवता आठ प्रकारना, ज्योतिषी देवता पांच प्रकारना अने वैमानिक देवता बे प्रकारना होय छे ॥ २४ ॥

हवे सिद्धना भेद कहे छे

सिद्धा पनरसन्नेया, तिह्नातिह्नाइसिद्धन्नेएणं ॥
एए संखेवेणं, जीवविगप्पा समक्खाया ॥ २५ ॥

शब्दार्थ—तीर्थंकर अने अतीर्थंकरादि सिद्धना भेदे करीने सिद्धो पंदर प्रकारना छे आ संक्षेपे करीने जीवना भेदो कह्या छे

हवे आगली वात कहे छे

एएसिं जीवाणं, सरीरमाऊ ठिइ सकायंमि ॥
पाणा जोणिपमाणं, जेसिं जं अत्थि तं न्नणिमो॥२६॥

शब्दार्थ—ए जीवोनुं शरीर, आयुष्य, पोतानी कायामां स्थिति, प्राण, योनिनुं प्रमाण ए जेने जेटलुं छे ते कहीये छीये.

हवे सात गाथाथी सर्व जीवोना शरीरनुं प्रमाण कहे छे

अंगुलअसंखन्नागो, सरीरमेगिंदियाण सव्वेसिं ॥
जोयणसहस्समहियं, नवरं पत्तेयरुक्खाणं ॥ २७ ॥

शब्दार्थ—सर्व एकेंद्रिय जीवोनुं शरीर अंगुलना असंख्यातमा न्नाग जेटलुं छे तेमां एटलुं विशेष जाणवानुं छे के, प्रत्येक वनस्पतिकायनुं शरीर एक हजार योजनथी कांइक अधिक होयछे.

बारसजोयणतिन्नि—गाउआ जोयणं च अणुकमसो ॥
बेइंदियतेइंदिय—चउरिंदिय देहमुच्चत्तं ॥ २८ ॥

शब्दार्थ—बार जोजन, त्रण गाउ अने एक जोजन एम अनुक्रमे बेंद्रिय तेंद्रिय अने चउरिंद्रियना शरीरनुं उंचपणुं जाणवुं

धणुसयपंचपमाणा, नेरइया सत्तमाइपुढवीए ॥
तत्तो अद्धद्धूणा, नेया रयणप्पहाजाव ॥ २९ ॥

शब्दार्थ—सातमी तमस्तमःप्रभा पृथ्वी आदिकमां रहेनारा नारकी जीवो पांचसो धनुष्यनां शरीर प्रमाणवाला छे. त्यार पछी अर्द्ध अर्द्ध उंचा शरीर प्रमाणवाला जीवो रत्नप्रभा नामनी पहेली नरक सुधी जाणवा. ॥ २९ ॥

जोयणसहस्समाणा, मच्छा उरगा य गप्नया हुंति ॥
धणुअपुहुत्तं पक्खिसु, जुयचारी गाउअपुहुत्तं ॥३०॥

शब्दार्थ—गर्भज एवा मत्स्य अने सर्पादि उरपरि सर्प एक हजार जोजन शरीर प्रमाणवाला होय छे. पक्षीयोनां शरीरनुं प्रमाण बे धनुष्यथी मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय छे अने नोलीया विगेरे जुजपरि सर्पनुं शरीर प्रमाण बे गाउथी नव गाउ सुधीनुं होयछे.

खयरा धणुअपुहुत्तं, भुयगा उरगा य जोयणपुहुत्तं ॥
गाउयपुहुत्तमित्ता, समुच्छिमा चउपया जणिया ॥३१॥

शब्दार्थ—सम्मूर्छिम एवा खेचर (पक्षीयो)नां शरीरनुं प्रमाण बे धनुष्यथी मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय छे अने सर्पादि उरपरि सर्पनां शरीरनुं प्रमाण बे जोजनथी मांडीने नव जोजन सुधीनुं होय छे. समुर्छिम हाथी विगेरे चार पगवाला जीवोनां शरीरनुं प्रमाण बे गाउथी नवगाउ सुधीनुं कह्युं छे. ३१

छच्चेव गाउआइं, चउप्पया गप्नया मुणेयव्वा ॥
कोसतिगं च मणुसा, उक्कोससरीरमाणेणं ॥३२॥

शब्दार्थ—गर्भज चार पगवाला हाथी विगेरे जीवो छ गाउनां शरीर प्रमाणवाला मनाय छे अने मनुष्यो उत्कृष्ट शरीरना प्रमाणे करीने त्रण गाउ होय छे. ॥ ३२ ॥

ईसाणंतसुराणं, रयणीउ सत्त हुंति उच्चत्तं ॥

दुग दुग दुग चउगेवि-ज्जणुत्तरे इक्किक्कपरिहाणी ॥३३॥

शब्दार्थ-बीजा ईशान देवलोकना अंत सुधीना भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी देवोना शरीरनी उंचाइ सात हाथनी छे त्यार पछी बे, बे, बे, चार, नव ग्रैवेयक अने पांच अनुत्तर ए देवलोकोमा अनुक्रमे एक एक हाथ शरीर प्रमाण उंछु जाणवुं ॥३३॥

हवे छ गाथावडे सर्व जीवोनु आयुष्य कहे छे

वावीसा पुढवीए, सत्तय आउस्स तिन्नि वाउस्स ॥
वाससहस्सा दस तरु-गणाण तेउ तिरित्ताउ ॥३४॥

शब्दार्थ-पृथ्वीकायनु बावीस हजार वर्षनु, अप्कायनु सात हजार वर्षनु, वायुकायनु त्रण हजार वर्षनु, प्रत्येक वनस्पतिकायनुं दश हजार वर्षनुं अने तेउकायनु त्रण अहोरात्रनुं उत्कृष्ट आयुष्य होय छे ए सर्वे जीवोनु जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्तनु आयुष्य होय छे

वासाणि बारसाउ, बेइंदियाणं तेइंदियाणं तु ॥
अउणापन्नदिणाइं, चउरिंदीणं तु छम्मासं ॥३५॥

शब्दार्थ-बेइंद्रिय जीवोनु आयुष्य बार वर्षनुं, तेरिंद्रिय जीवोनुं उगणपचास दिवसनु अने चतुरिंद्रिय जीवोनु छ मासनु होय छे आ सर्व उत्कृष्ट आयुष्य जाणवु अने ए सर्वे जीवोनु जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्तनु आयुष्य जाणवु ॥ ३५ ॥

सुरनेरइयाण ठिई, उक्कोसा सागराणि तित्तीसं ॥
चउपयतिरियमणुस्सा, तिन्निपलियोवमा हुंति ॥३६॥

शब्दार्थ-देवता अने नारकीयोनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति तेत्रीस सागरोपमनी होय छे अने चार पगवाला तिर्यंच तथा मनुष्योनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति त्रण पल्योपमनी होय छे ॥३६॥

जलयरउरभुयगाणं, परमाउ होइ पुव्वकोमीउ ॥
पक्कीणं पुण जणिउ, असंखभागो अ पलियस्स ३७

१

शब्दार्थ—सुसुमार विगेरे जलचर, सर्प विगेरे उरपरिसर्प अने नोलीया विगेरे भुजपरिसर्प ए सर्वेनुं उत्कृष्ट आयुष्य एक पूर्वकोडीनुं होयछे. तेमज पक्षीयोनुं उत्कृष्ट आयुष्य पल्योपमना असंख्यातमां भाग जेटलुं कह्युं छे. ॥ ३७ ॥

सव्वे सुहुमा साहा–रणा य संमुच्छिमा मनुस्सा य ॥
उक्कोसजहन्नेणं, अंतमुहुत्तं चिय जियंति ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ—पृथ्वीकायादि पांचे सूक्ष्म तथा साधारण जीवो तेमज सम्मूर्छिम मनुष्यो उत्कृष्ट अने जघन्यथी एक अंतर्मुहूर्त्त निश्चे जीवे छे. ॥ ३८ ॥

ओगाहणाउमाणं, एवं संखेवउ समक्खायं ॥
जे पुण इत्थ विसेसा, विसेससुत्ताउ ते नेया ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ—एवी रीते अवगाहणा अने आयुष्यनुं मान संक्षेपथी कह्युं. वली एमां जे कांइ विशेष जाणवानुं होय ते विशेष सूत्रथी जाणी लेवुं. ॥ ३९ ॥

हवे बे गाथाथी त्रीजुं स्वकायस्थितिद्वार कहे छे.

एगिंदिया य सव्वे, असंखउस्सप्पिणी सकायंमि ॥
उववज्जंति चयंति अ, अणंतकाया अणंताउ ॥४०॥

शब्दार्थ—वली सर्वे एकेंद्रिय जीवो पोतानी कायामां असंख्य उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल सुधी उत्पन्न थाय छे अने चवे छे तेमज अनंतकाय जीवो पण अनंतीवार पोतानी कायामां उत्पन्न थाय छे अने चवे छे. ॥ ४० ॥

संखिज्जसमा विगला, सत्तठभवा पणिंदितिरिमणुया ॥
उववज्जंति सकाये, नारयदेवा अ नो चेव ॥४१॥

शब्दार्थ—विगलेंद्रिय[1] जीवो संख्याता वर्ष सुधी लागट पो-

---

१ बेइंद्रिय, तेरिंद्रिय, चउरिंद्रिय.

तानी कायामां उत्पन्न थाय पंचेंद्रिय, तिर्यंच अने मनुष्यो सात आठ नव तेज गतिमा लागट उत्पन्न थाय अने नारकी तथा देवता तेज नवमा लागट वे वखत पण उत्पन्न थता नथी.॥४१॥

दशहा जियाण पाणा, इंदि उसासाउ जोग बलरूवा ॥
एगिंदिएसु चउरो, विगलेसु छसत्तअठेव ॥४२॥

शब्दार्थ–जीवोने इंद्रिय, श्वासोच्छ्वास, आयुष्य, मन, वचन अने काया ए त्रण जोगना त्रण बल मली दश प्राणो होय छे तेमा एकेंद्रियने चार, तथा विगलेंद्रियने छ, सात अने आठ प्राण अनुक्रमे होय छे ॥ ४२ ॥

असन्निसन्निपंचि–दिएसु नवदश कमेण बोधव्वा ॥
तेहिं सह विप्पउगो, जीवाणं भणए मरणं ॥४३॥

शब्दार्थ–असंज्ञी पंचेंद्रिय अने सज्ञी पंचेंद्रिय जीवोने विषे अनुक्रमे नव अने दश प्राणो होय छे ते प्राणोनी साथे जे वियोग थवो ते जीवोनु मरण कहेवाय छे ॥ ४३ ॥

एवं अणोरपारे, संसारे सायरंमि भीमंमि ॥
पत्तो अणंतखुत्तो, जीवेहि अपत्तधम्मेहि ॥४४॥

शब्दार्थ–धर्मने नहि पामेला जीवोए ए प्रमाणे अपार अने भयकर एवा संसार समुद्रमा अनतीवार जन्ममरण प्राप्त कर्युं

तह चउरासी लक्खा, संखा जोणीण होइ जीवाणं ॥
पुढवाईण चउण्ह, पत्तेयं सत्तसत्तेव ॥४५॥

शब्दार्थ–तेवीज रीते जीवोनी योनीनी सख्या चोरासी लाख छे तेमा पृथ्वी आदि चार निकायना दरेक जीवोनी योनी-नी सख्या सात सात लाखनी छे ॥ ४५ ॥

दस पत्तेयतरूणं, चउदसलक्खा हवंति इयरेसु ॥
विगलिंदिएसु दोदो, चउरो पंचिंदितिरियाणं ॥४६॥

शब्दार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवोनी दशलाख योनी अने साधारण वनस्पतिकायनी चौदलाख योनी होय छे. वली विगलेंद्रिय जीवोनी बबे लाख योनी जाणवी तेमज पंचेंद्रितिर्यंचनी चार लाख योनी जाणवी. ॥ ४६ ॥

चउरो चउरो नारय—सुरेसु मणुआण चउदस हवंति ॥
संपिंडियाय सव्वे, चुलसीलरकाउ जोणीणं ॥४७॥

शब्दार्थ—नारकी अने देवतानी चार चार लाख तथा मनुष्यनी चौद लाख योनी होय छे. ए सर्व एकठी करीये तो सर्व मली योनीनो चोरासी लाखनी संख्या थाय छे. ॥ ४७ ॥

सिद्धाण नत्थि देहो, न आउ कम्मं न पाणजोणीउ ॥
साइअणंता तेसिं, ठिई जिणंदागमे जणिया ॥४८॥

शब्दार्थ—सिद्धोने देह नथी, आयुष्य नथी, कर्म नथी, प्राण नथी अने योनी पण नथी. वली तेउनी सादि अनंतस्थिति जिनेश्वरना आगममां कही छे. ॥ ४८ ॥

काले अणाइनिहणे, जोणीगहणंमि जीसणे इछ ॥
जमिया जमिहंति चिरं. जीवा जिणवयणमलहंता ४९

शब्दार्थ—अनादि अनंत एवा कालने विषे जिन वचनने नहि पामेला जीवो चोराशी लाख योनिये करीने गहन अने जयंकर एवा आ संसारने विषे बहुकाल जम्या छे अने बहुकाल जमशे. ॥

ता संपइ संपत्ते, मणुअत्ते डुल्लहेवि सम्मत्ते ॥
सिरिसंतिसूरिसिठे, करेह जो उजमं धम्मे ॥५०॥

शब्दार्थ—ते कारण माटे हे जव्यजनो! हवणा डुर्लज एवुं मनुष्यपणुं प्राप्त थये छते अने सम्यक्त्व पण प्राप्त थये छते श्री शांतिसूरिये उपदेश करेला धर्मने विषे उद्यम करो. ॥५०॥

एसो जीववियारो, संखेवरुईणजाणणाहेउं ॥
संखित्तो उद्धरिओ, रुद्दाओ सुयसमुद्दाओ ॥५१॥

शब्दार्थ—आ जीवविचार थोडी बुद्धिवाला जीवोने जाणवा माटे विस्तारवत एवा श्रुतसमुद्र थकी संक्षेपे उद्धर्यो छे. ॥५१॥

॥ इति जीवविचार प्रकरण पेहेलुं समाप्त ॥

ओ

॥ नवतत्त्व प्रकरण बीजुं ॥

(आर्यावृत्तम्)

प्रथम गाथामां नवतत्त्वना नाम गणावे छे

जीवाऽजीवा पुण्णं, पावासवसंवरो य निज्जरणा ॥
बंधो मुक्खो य तहा, नवतत्ता हुंति नायव्वा ॥ १ ॥

शब्दार्थ—जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर अने निर्जरा वली बंध तेमज मोक्ष ए नवतत्त्वो जाणवा योग्य छे ॥

हवे नवतत्त्वना भेदनी संख्या कहे छे

चउदस चउदस बाया-लीसा बासी अ हुंति बायाला ॥
सत्तावन्नं बारस, चउ नव भेया कमेणेसिं ॥ २ ॥

शब्दार्थ—पहेला तत्त्वना चौद, बीजाना चौद, त्रीजाना बें-तालीश, चोथाना ब्यासी अने पांचमाना बेंतालीस, छठाना सत्ता-वन, सातमाना बार, आठमाना चार अने नवमाना नव एवा अनुक्रमे करीने भेदो थाय छे. ॥ २ ॥

हवे जीवोनी छ जाति कहे छे.

एगविहदुविहतिविहा, चउव्विहा पंचछव्विहा जीवा ॥
चेयणतसइयरेहिं, वेयगईकरणकाएहिं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—चेतना, त्रस अने स्थावर ए भेदोए करीने वली त्रण वेद, चार गति, पांच इंद्रिय अने छ काये करीने जीवो एक प्रकारना, बे प्रकारना, त्रण प्रकारना, चार प्रकारना, पांच प्रकारना अने छ प्रकारना जाणवा. ॥ ३ ॥

हवे बीजा प्रकारथी जीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे.

एगिंदिय सुहुमियरा, सन्नियरपणिंदियाय य सबितिचक॥
अपजत्ता पजत्ता, कमेण चउदस जियट्ठाणा ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—सूक्ष्म अने बादर एवा एकेंद्रिय, बादर बेइंद्रिय, तेरिंद्रिय अने चउरिंद्रिय, संज्ञी अने असंज्ञी पंचेंद्रिय ए सात भेद पर्याप्ता अने अपर्याप्ता. जेथी अनुक्रमे जीवना चौद भेद होय ॥

हवे जीवनुं लक्षण कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा ॥
वीरियं उवओगो अ, एअं जीवस्स लक्कणम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने तप तेमज वीर्य अने उपयोग ए प्रकारे जीवनुं लक्षण छे. ॥ ५ ॥

हवे पर्याप्तिनुं स्वरूप कहे छे.

(आर्यावृत्तम्)

आहार शरीर इंदिय, पजत्ती आणपाणभासमणे ॥
चउ पंच पंच छप्पिअ, इग विगलासन्नि सन्निणं ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—आहारपर्याप्ती, शरीरपर्याप्ती, इंद्रियपर्याप्ती, श्वासोश्वासपर्याप्ती, भाषापर्याप्ती, मनपर्याप्ती. तेमां चारपर्याप्ती एकेंद्रियनी, पांच पर्याप्ती विकलेंद्रियनी, पांच पर्याप्ती असंज्ञीनी अने छ पर्याप्ती संज्ञी जीवोनी होय छे. ॥ ६ ॥

हवे प्राणनु स्वरूप कहे छे.

पणिंदिअत्तिबलूसा-साउ दश पाण चउ छ सग अठ॥
इगडतिचउरिंदीणं, असन्निसन्नीण नव दस य ॥७॥

शब्दार्थ—पाच इंद्रिय, त्रण बल, श्वासोश्वास अने आयुष्य ए दश प्राण छे तेमा एकेंद्रियने चार प्राण होय छे बेंद्रियने छ प्राण होय छे, तेरिंद्रियने सात प्राण होय छे चउरिंद्रियने आठ प्राण होय छे अने असंज्ञी तथा संज्ञीने नव तथा दश एम अनुक्रमे प्राण होय छे ॥ ७ ॥ इति जीवतत्त्व ॥

हवे अजीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे

धम्माधम्मागासा, तियतियभेया तहेव अद्धा य ॥
खंधादेसपयेसा, परमाणु अजीव चउदसहा ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय अने आकाशास्तिकाय ए त्रणना खंध, देश अने प्रदेश एवा त्रण त्रण भेदो छे. एटले ते नव भेद थया तेवीज रीते वली काल, अने पुद्गलना खंध, देश, प्रदेश तथा परमाणु ए प्रमाणे अजीवतत्त्व चौद प्रकारे छे ॥ ८ ॥

अजीवतत्त्वना पाच मूलभेद अने तेना लक्षण कहे छे

धम्माधम्मा पुग्गल, नह कालो पंच हुंति अजीवा ॥
चलणसहावो धम्मो, थिर संठाणो अहम्मो अ ॥ ९ ॥
अवगाहो आगासं, पुग्गलजीवाण पुग्गला चउहा ॥
खंधा देसपएसा, परमाणुं चेव नायव्वा ॥ १० ॥

शब्दार्थ—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल ए पाच अजीव द्रव्य होय छे तेमा चलन स्वभाव गुणवालो धर्मास्तिकाय छे अने स्थिर स्वभाव गुणवालो अधर्मास्तिकाय छे अवकाश आपवाना स्वभाववालो आ-

काशास्तिकाय जाणवो. पुद्गलो चार प्रकारना छे. ते खंध, देश, प्रदेश तथा परमाणु निश्चयथी जाणवा. १०

पुद्गलनुं लक्षण कहे छे.

(अनुष्टुम् वृत्तम्)

सद्दंधयार उज्जोअ, पभा छाया तवेहि आ ॥
वण्णगंधरसा फासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—शब्द, अंधकार रत्नादिकनो प्रकाश, चंद्र विगेरेनो कांति, छाया तडको अथवा वर्ण, गंध, रस अने स्पर्श ए वली पुद्गलोनुं लक्षण छे. ॥ ११ ॥

हवे एक मुहूर्त्तनुं स्वरूप कहे छे.

एगा कोडि सतसठि—लक्खा सत्तहुत्तरी सहस्सा य ॥
दोयसया सोलहिया, आवलिया इगमुहुत्तम्मि ॥१२॥

शब्दार्थ—एकक्रोड, सडसठलाख, सत्योतरहजार अने बसो उपर सोल अधिक एटली आवलीयो एक मुहूर्त्तने विषे थाय छे.॥

तेज वातने बीजी रीते कहे छे

तिन्निसहस्सा सत्त, यसयाणि तेहुत्तरं च उस्सासा ॥
एस मुहुत्तो भणीउ, सव्वेहिं अणंतनाणीहिं ॥१३॥

शब्दार्थ—सर्व अनंत ज्ञानियोए त्रणहजार, सातशो अने तोंतेर एटला श्वासोश्वास थाय. एटले काल मुहूर्त्त कह्यो छे. ॥१३॥

हवे कालनुं स्वरूप कहे छे.

समयावली मुहुत्ता, दीहा पक्खा य मास वरिसा य ॥
भणिउ पलिया सागर, उस्सप्पिणी सप्पिणी कालो ॥

शब्दार्थ—समय, आवली, मुहुर्त्त, दिवस, पक्ष, मास, वर्ष, पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी अवसर्पिणी ए प्रमाणे काल कह्यो छे. ॥ १४ ॥ इति अजीवतत्त्व.

हवे पुण्यतत्त्वना बेंतालीश भेद कहे छे

सा उच्चगोअ मणुडुग, सुरडुग पंचेदिजाइ पणदेहा ॥
आइतितणूणुवगा, आइमसघयणसंठाणा ॥१५॥

शव्दार्थ—सातावेदनी कर्म, उच्चगोत्र, मनुष्यद्विक, सुरद्विक, पचेंद्रि जाति अने पाच देह तेमा पहेला त्रेण शरीरना अंग अने उपांग, अने पहेलु [वज्रऋषभनाराच] सघयण तथा पहेलु [समचतुरस्त्र] संस्थान ॥ १५ ॥

वन्न चउक्कागुरुलहु, परघा ऊसास आय वुज्जोअ ॥
सुभखगइ निमिण तसदस, सुरनरतिरिआउ तित्थयरं ॥

शव्दार्थ—वर्णचतुष्क नामकर्म, अगुरु लघु, परघात, श्वासोश्वास, आताप, उद्योत, हंस वृषभनो पेठे सारी चाल ते शुभ विहायोगति, सुघाट रूप निर्माण, त्रसदसक, देव, मनुष्य अने तिर्यचनु आयुष्य अने तीर्थंकर नामकर्म ॥ १६ ॥

हवे त्रस दशकनु स्वरूप कहे छे

तस वायर पज्जत्तं, पत्तेय थिर सुभं च सुभगं च ॥
सुस्सर आइज्ज जसं, तसाइदसगं इमं होइ ॥ १७ ॥

शव्दार्थ—त्रस, वादर, पर्याप्ती प्रत्येक, स्थिरता, शुभ, सौभाग्य, सुस्वर, आदेय अने जस पुण्यना भेदमा आ त्रस विगेरे दश नाम कर्म होय छे ॥ १७ ॥ इति पुण्यतत्त्व

हवे पापकर्मना बासी भेद कहे छे

नाणंतरायदशगं, नव बीए नीअसायमिच्छत्तं ॥
थावरदस नरयतिगं, कसायपणवीस तिरियडुग ॥१८॥

[१] औदारिक, वैक्रिय, आहारक [२] बे हाथ, बे पग, पीठ, मस्तक, उदर अने हृदय. [३] आगला विगेरे [४] आ त्रस दशनु स्वरूप आगली गाथामां कहेशे

शब्दार्थ—ज्ञानावरणीनां पांच अने अंतरायनां पांच एम बन्ने मलीने दश पापकर्मना भेद, बीजा दर्शनावरणी कर्मना नवभेद, नीच गोत्र पापकर्म, अशातावेदनी पापकर्म, मिथ्यात्व पापकर्म, [1]स्थावर दशक पापकर्म, [2]नरकत्रिक पापकर्म, पच्चीश कषाय रूप पापकर्म, तिर्यंचद्विक पापकर्म. ॥ १८ ॥

इगबितिचउजाईओ, कुखगइ उवघाय हुंति पावस्स ॥
अपसत्थं वन्नचउ, अपढम संघयणसंठाणा ॥१९॥

शब्दार्थ—एकेंद्रिय, बेंद्रिय, तेरिंद्रिय अने चोरेंद्रिय जातिरूप पापकर्म, ऊंट विगेरेनी पेठे अशुभ विहायोगति पापकर्म, उपघात नाम पापकर्म, माठा एवा रूप, रस, गंध अने स्पर्श रूप पापकर्म, तेमज पहेला संघयण अने पहेला संस्थान विनाना बीजा संघयण अने संस्थान रूप पापकर्म. ॥ १९ ॥

हवे स्थावर दशकनुं स्वरूप कहे छे.

थावर सुहुम अपज्जं—साहारणमथिरमसुभदुभगाणि ॥
दुस्सरणाइज्जजसं, थावरदशगं विवज्जत्थं ॥२०॥

शब्दार्थ—स्थावर नामकर्म, सूक्ष्म नामकर्म, अपर्याप्त नाम कर्म, साधारण नामकर्म, अस्थिर नामकर्म, अशुभ नामकर्म, दौर्भाग्य नामकर्म, दुःस्वर नामकर्म, अनादेय नामकर्म, अजश नामकर्म. आ स्थावर दशक त्यजी देवाना अर्थरूप छे. ॥२०॥

हवे बीजा दर्शनावरणी कर्मना नव भेद कहे छे.

चक्खुदिठि अचक्खु, सेसिंदिअओहि केवलेहिं च ॥
दंसणमिह सामन्नं, तस्सावरणं तयं चउहा ॥२१॥

शब्दार्थ—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन अने केवल

---

१ आ स्थावर दशकनुं स्वरूप आगली गाथामां कहेशे.

२ नरकगति, नरकानुपूर्वि अने नरकायु.

दर्शन आ ठेकाणे दर्शन ते सामान्यज्ञान ते ज्ञाननुं जे आवर्ण, ते आवर्ण चार प्रकारनु छे ॥ ७१ ॥

सुहपडिबोहा निद्दा, निद्दानिद्दा य दुक्खपडिबोहा ॥
पयला ठिओवविठस्स, पयलपयला उ चंकमओ ॥७३॥

शब्दार्थ—सुखे जगाय ते निद्रा, दुःखे जगाय ते निद्रा निद्रा, उभा उभा तथा बेठा बेठा उंघे ते प्रचला अने हालता चालता उंघे ते प्रचला प्रचला कहेवाय ॥ ७३ ॥

दिणचिंतिअत्थकरणी, थीणद्धी अद्धचक्किअद्धबला ॥
एवं जिणेहिं जणियं, वित्तिसमं दंसणावरणं ॥७४॥

शब्दार्थ—दिवसे चितवेला कार्यने [रात्रीये उंघमा] करनारी थीणद्धी नामनी निद्रा अर्धचक्री वासुदेवथी अर्ध बलवाली छे आ प्रमाणे जिनेश्वरोए छडीदार समान दर्शनावरण कह्यु छे ॥७४॥

हवे कषायनी स्थिति तथा फल कहे छे

जावजीववरिसचउमा—स पक्खगानिरयतिरियनरअमरा॥
समाणुं सव विरइ—अहरकायचरित्त घायकरा ॥७५॥

शब्दार्थ—अनतानुबंधी कषायनी स्थिति जीवीत सुधी, अप्रत्याख्यान कषायनी स्थिति एकवर्ष सुधी, प्रत्याख्यान कषायनी स्थिति चारमास सुधो, संजलना कषायनी स्थिति एक पखवाडीया सुधी होय छे तेमा अनंतानु बंधी कषाय नरक गतिरूप फल आपे छे अप्रत्याख्यानी कषाय तिर्यंच गतिरूप फल आपे छे, प्रत्याख्यानी कषाय मनुष्य गतिरूप फल अने संजलनो कषाय देवगतिरूप फल आपे छे वली ते चारे कषायो अनुक्रमे समकीतने, अणुव्रतने, सर्व विरतिने अने यथाख्यात चारित्रने घात करनारा छे. ॥ ७५ ॥

जलरेणु पुढवि पव्वय-राईसरिसो चउव्विहो कोहो ॥
तिणिसलयाकठ्ठठिअ-सेलत्थंजोवमो माणो ॥१९॥

शब्दार्थ-जलमां, रजमां, पृथ्वी उपर अने पर्वत उपर करेली रेखा सरखो क्रोध चार प्रकारनो छे अने तृणना, सलीना, काष्टना, हाडकाना अने पथ्थरना स्थंभ सरखो मान छे. १९

माया वलेहिगोमुत्ति-मिंढसिंगघणवंसिमूलसमा ॥
लोहो हलिद्दखंजण-कदमकिमिरागसारिछो ॥२०॥

शब्दार्थ-माया वांसनो छाल, वृषभनुं मूत्र, बोकडानुं सिंगडुं अने नीबिड एवा वांसना मूल सरखो छे. वली लोभ हलदर, गाडानी मली, कादव अने करमजी रंग सरखो छे. ॥२०॥

जस्सुदया होइ जिए, हासरइअरईसोगभयकुछा ॥
सनिमित्तमन्नहा वा, तं इह हासाईमोहणियं ॥२१॥

शब्दार्थ-जीवने जेना उदयथी निमित्त सहित अथवा निमित्त विना हास्य, रति, अरति, शोक, भय अने दुगंछा होय छे. तेने अहिं हास्यादिक मोहनीय जाणवुं. ॥ २१ ॥

पुरिसि त्थीतउभयंपइ, अहिलासो जव्वसा हवइ सोउ ॥
थीनरनपुंवेउदउ, फुंफुमतणनगरदाहसमो ॥२२॥

शब्दार्थ-जे कर्मना वशथी पुरुषनो, स्त्रीनो अने ते बन्नेनो पण अभिलाष होय छे. ते अनुक्रमे स्त्रीवेद, पुरुषवेद अने नपुंसकवेद, बकरानो लींडी, घास अने नगरना दाह सरखो जाणवो. ॥२२॥

हवे संघयणनां नाम तथा स्वरूप कहे छे.

संघयणमठिनिचउ, तं छद्धा वज्जरिसहनारायं ॥
तह रिसहनारायं, नारायं अद्धनारायं ॥२३॥

शब्दार्थ-संघयण ते हाडकानो समूह. ते छ प्रकारनो छे.१ वज्रऋषभनाराच तेमज २ ऋषभनाराच, ३ नाराच, ४ अर्द्धनाराच.

कीलिअ छेवट्ठं इह, रिसहो पट्टो अ कीलिया वज्जं॥
उभओ मक्कडबंधो, नारायं इम मुरालंगे ॥३०॥

शब्दार्थ—५ कीलिका, ६ सेवार्त, आदि रुषभनाराच ते खीलो रहित पाटो अने मर्कटबंध ते जाणवो बन्ने बाजुए मर्कटबंध ते नाराच जाणवु ए उदारिक शरीरवालाने होय ॥ ३० ॥

हवे संस्थानना नाम तथा स्वरूप कहे छे

समचउरंस निग्गोह, साइ वामण खुज्ज हुंडे अ ॥
जीवाण छ संठाणा, सव्वत्थ सुलक्खणं पढमं ॥३१॥

शब्दार्थ—समचतुरस्र, न्यग्रोध, सादि, वामन, कुब्ज अने हुंड जीवोने ए छ संस्थान होय छे तेमा सर्व प्रकारे उत्तम लक्षणवालु पहेलु संस्थान छे ॥ ३१ ॥

नाहिउवरि बीअं, तइअं मुह पिट्ठिउअरउरवज्जं ॥
सिरगिवपाणीपाए, सुलक्खणं तं चउत्थं तु ॥३२॥

शब्दार्थ—नाभीना उपरनो भाग सारा लक्षणवालो होय ते बीजु संस्थान जाणवुं अने मुख, पीठ, पेट तथा छाती वर्जीने बाकी जे सुलक्षण अंग ते त्रीजु संस्थान वली माथु,कंठ, हाथ तथा पग ए सर्व सारा लक्षणवालु होय ते चोथुं संस्थान जाणवु ॥३२॥

विवरियं पंचमगं, सव्वत्थलक्खणं भवे छट्ठं ॥
संघाणविहा भणिआ, जिणंदवरवीयरागेहिं ॥३३॥

शब्दार्थ—उपर कह्याथी जे विपरीत ते पाचमु अने सर्व प्रकारे खोटा लक्षणवालु होय ते छठ्ठु होय आ प्रमाणे सामान्य केवलीनो मध्ये उत्तम एवा वीतराग पुरुषोए संस्थानना प्रकारो कह्या छे ॥ ३३ ॥ इति पाप तत्त्व ॥

हवे आश्रव तत्त्वना बेंतालीश भेद कहे छ

इंदिअकसायअव्वय–जोगा पंच चउपंचतिन्नि कमा ॥
किरिआउ पणवीसं, इमा उ ताउ अणुक्कमसो ॥३४॥

शब्दार्थ–इंद्रिय, कषाय, अव्रत अने जोग ते अनुक्रमे पांच, चार, पांच अने त्रण छे अने क्रियाउ पच्चवीश छे. ए सर्व मलीने आश्रवना बेंतालीश भेद थया. वली क्रीयाउ अनुक्रमे आ हवे पछी कहेवाशे ते जाणवो. ॥ ३४ ॥

हवे पच्चीस क्रियाओ कहे छे.

काइअ अहिगरणीया, पाउसिया पारितावणी किरिया ॥
पाणाइवाया रंभिय–परिग्गहिया मायवत्तीया ॥३५॥

शब्दार्थ–कायिकी, अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपातिकी, आरंभिकी, पारिग्रहिकी अने माया प्रत्ययिकी.

मिच्छादंसणवत्ती, अप्पच्चक्खाण दिठि पुठिअ ॥
पाडुच्चिअ सामंतो–वणीअ नेसत्थिसाहत्थी ॥३६॥

शब्दार्थ–मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, अप्रत्याख्यानिकी, दृष्टिकी, स्पृष्टिको, प्रातित्यकी, सामंतोपनिपातिकी, नैशस्त्रिकी अने स्वहस्तिकी. ॥ ३६ ॥

आणवणिविआरणिआ, अणभोगा–अणवकंखपच्चइआ
अन्ना पउगसमुदा–णपिज्जदोसेरिआवहिआ ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ–आनयनिकी, विदारणिका, अनाभोगिकी, अनवकांक्ष प्रत्ययिकी, ए विना बीजी ते प्रायोगिकी, समुदानकी, प्रेमिकी, द्वेषिकी अने ईर्यापथिकी ॥ ३७ ॥

हवे संवरतत्त्वना सत्तावन भेद कहे छे.

समिइ गुत्ति परीसह, जइधम्मो भावणा चरित्ताणि ॥
पण तिदुवीस दसबार–पंच भेएहिं सगवन्ना ॥३८॥

शब्दार्थ—समिति, गुप्ति, परीसह, यतिधर्म, भावना अने चारित्र ते अनुक्रमे पाच, त्रण, बावीश, दश, बार अने पाच एवा भेदोए करीने संवरना सत्तावन भेदो छे ॥ ३८ ॥

हवे पाच समिति अने त्रण गुप्ति कहे छे

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

ईरिया भासेसणादाणे—उच्चारे समिइसु अ ॥
मणगुत्ति वयगुत्ति, कायगुत्ति तहेव य ॥३९॥

शब्दार्थ—इर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानसमिति, उच्चारसमिति ए पाच समिति वळी मनगुप्ति, वचनगुप्ति तेमज कायगुप्ति ए त्रण गुप्ति जाणवी ॥ ३९ ॥

हवे बावीस परीसह कहे छे

खुहा पिवासा सी उण्ह, दसा चेला रइत्थिओ ॥
चरिआ निसिहिया सिज्जा, अक्कोस वह जायणा ४०

शब्दार्थ—क्षुधा, पासा, सीत, उष्ण, दंस, अचेल, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, सय्या, आक्रोश, वध अने याचना ॥ ४० ॥

अलाभरोगतणफासा, मलसक्कार परीसहा ॥
पन्नाभाणसम्मत्त, इअ बावीस परीसहा ॥४१॥

शब्दार्थ—अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार, प्रज्ञा, अज्ञान अने सम्यक्त्व ए प्रकारे बावीस परिसह जाणवा ॥४१॥

हवे दश प्रकारे यतिधर्म कहे छे

खती मदव अज्जव, मुत्ती तवसजमे अ बोधव्वे ॥
सच्च सोअ आकि—चण च बम्भ च जइधम्मो ॥४२॥

शब्दार्थ—क्षमा, मार्दव, आर्जव, मुक्ति, तप, सयम, सत्य, शोच अकिंचन अने ब्रह्मचर्य ए दश प्रकारे यतिधर्म जाणवो

हवे बार भावनानु स्वरूप कहे छे

पढममणिच्च मसरणं, संसारो एगया य अन्नत्तं ॥
असुइत्तं आसव सं–वरो अ तह णिज्जरा नवमी ४३

शब्दार्थ–पहेली अनित्य, बीजी असरण, त्रीजी संसार, चोथो एकत्व, पांचमी अन्यत्व, छठो असुचित्व, सातमी आश्रव, आठमी संवर, तेमज नवमो निर्जरा भावना जाणवी. ४३

लोगसहावो बोही, दुल्लहा धम्मस्स साहगा अरिहा॥
एआउ भावणाउ, भावेअव्वा पयत्तेणं ॥४४॥

शब्दार्थ–दशमी लोक स्वभाव, अग्यारमो बोधी, बारमी धर्मनी साधक अरिहंत भावना दुर्लभ छे. ए भावना प्रयत्ने करीने भाववी. ॥ ४४ ॥

हवे पांच प्रकारनां चारित्रनुं वर्णन करे छे.

सामाइ अत्थ पढमं, छेओवठावणं भवे बीअं ॥
परिहारविसुद्धीअं, सुहुमं तह संपरायं च ॥४५॥

शब्दार्थ–अहिं पहेलुं सामायक, बीजुं छेदोपस्थापनीय, त्रीजुं परिहार विशुद्धि, अने तेमज चोथुं सुक्ष्मसंपराय चारित्र. ४५

तत्तो अ अहक्खायं, खायं सव्वंमि जीवलोगंमि ॥
जं चरिऊण सुविहिया, वच्चंति अयरामरं ठाणं ॥४६॥

शब्दार्थ–वली त्यारपछी सर्व लोकमां प्रसिद्ध एवुं पांचमुं यथाख्यात चारित्र छे के, जे चारित्रने पाली सुविहित पुरुषो मोक्ष स्थानने पामे छे. ॥ ४६ ॥

हवे निर्जरातत्त्वना बार भेद छे.

अणसणमुणोअरिया, वित्तीसंखेवणं रसच्चाउ ॥
कायकिलेसा संलो–णया य बज्झो तवो होई ॥४७॥

शब्दार्थ–अनशन, ऊनोदरिका, वृत्तिसंक्षेप, रसत्याग, काय

क्लेश, अने सलीनता ए ७ प्रकारे बाह्य तप होय छे. ॥ ४७ ॥

पायच्छितं विणओ, वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ॥
झाणं उस्सग्गोवि अ, अभितरओ तवो होइ ॥४८॥

शब्दार्थ–प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, तेमज स्वाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग ए आभ्यंतर तप होय छे ॥४८॥

हवे आभ्यंतर तपमाना प्रायश्चित तपनु स्वरूप कहे छे

(अनुष्टुपवृत्तम्)

आलोयण पडिक्कमणो–भयविवेगमुसग्गो ॥
तवछेयमूलअणव–ट्याय पारंचिय चेव ॥४९॥

शब्दार्थ–आलोयण लेवी, पडिक्कमण करवु, आलोयण अने पडिक्कमण ए बन्ने करवा, विवेक राखवो, कायोत्सर्ग करवो, वली तप, व्रत पर्यायछेद, सर्व व्रत पर्यायछेद अने गच्छव्हार, क्षेत्रव्हार, तथा लीगव्हार रहेवुं ॥ ४९ ॥

हवे विनयनु स्वरूप कहे छे

(आर्यावृत्तम्)

भत्ती बहुमाणो व–न्नजणणं नासणमवन्नवायस्स ॥
आसायणपरिहाणो, विणओ संखेवओ एसो ॥५०॥

शब्दार्थ–भक्ती करवी, हृदयमा प्रेम राखवो, गुण गावा, अवर्णवादनु गोपववुं, आशातनानो त्याग करवो ए प्रमाणे संक्षेपथी विनय कह्यो छे ॥ ५० ॥

हवे दश प्रकारे वैयावच्च कहे छे

आयरियउवज्झाय–तवस्सिसेहे गिलाणसाहुसु ॥
समणुन्नसंघकुलगण–वेयावच्चं हवइ दसहा ॥५१॥

शब्दार्थ–आचार्यनी, उपाध्यायनी, तपस्वीनी, शिष्यनी, रोगीनी, साधुनी, साधर्मीनी, संघनी, एक साधुनी अने गणनी

एम वैयावच्च दश प्रकारे थाय छे. ॥ ५१ ॥

हवे ध्यानना भेद कहे छे.

झाणं चउविहं खलु, अट्टं रूद्दं तहेव धम्मं च ॥
सुक्कं पुण पत्तेयं, चउविहं चेव नायव्वं ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ—ध्यान निश्चय चार प्रकारनुं छे. आर्तध्यान, रौद्रध्यान तेमज धर्मध्यान अने शुक्लध्यान. वली ते प्रत्येक चार प्रकारनुं निश्चय जाणवुं. ॥ ५२ ॥

हवे निर्जरा तत्त्वनो विचार कहे छे.

बारसविहं तवो नि-ज्जराय बंधो य चउविगप्पोय ॥
पयइठीइअणुन्नागो—पयेसन्नेएहिं नायव्वो ॥५३॥

शब्दार्थ—आ उपर कहेलुं बार प्रकारनुं तप ते निर्जरा जाणवी. अने बंध ते चार प्रकारनो छे, ते प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुन्नागबंध अने प्रदेशबंध एवा न्नेदोये करीने जाणवो. ॥५३॥

पूर्वे कहेला बंधतत्त्वना चार भेदनुं वर्णन करे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

पयइ सहावो वुत्तो, ठिइ कालावहारणं ॥
अणु न्नागो रसो होउ, पएसो दलसंचउ ॥५४॥

शब्दार्थ—प्रकृतिबंध ते स्वन्नाव, स्थितिबंध ते कालनो निश्चय, अनुन्नागबंध ते रस जाणवो अने प्रदेशबंध ते दलसमूह जाणवो. ॥ ५४ ॥

हवे आठे कर्मनो प्रत्येके उत्तर प्रकृतीनी संख्या कहे छे.

(आर्यावृत्तम्)

इह नाणदंसणावर—णवेयमोहाउनामगोआणि ॥
विग्धं च पणनवउअ—ठवीसचउ तीसयउपणविहं ५५

शब्दार्थ—अहिं ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनी, मोहनी,

आयु, नाम अने गोत्र वली अंतराय ए आठ कर्मनी पांच, नव, बे, अगावीश, चार, एकसो त्रण, बे अने पांच एम अनुक्रमे प्रकृति जाणवी सर्व मली १५८ थाय. ॥ ५५ ॥

हवे आठे कर्मोनो उत्कृष्ट स्थितिबंध कहे छे.

नाणे अ दंसणावर-णे वेअणिए चेव अंतराए अ ॥
तीसं कोमाकोमी, अयराणं ठिइ अ उक्कोसा ॥५६॥

शब्दार्थ—ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, वेदनी, अंतराय, ए चारे घाती कर्मनी उत्कृष्ट स्थिति त्रीश कोमी कोमी सागरोपमनी जाणवी ॥ ५६ ॥

सत्तरी कोमाकोमी, मोहणीए वीस नामगोएसु ॥
तित्तीसं अयराइं, आउठिइबंध उक्कोसा ॥५७॥

शब्दार्थ—मोहनी कर्मनी सीत्तेर कोमी कोमी सागरोपमनी स्थिति जाणवी नामकर्म तथा गोत्रकर्मनी वीश कोडा कोडी सागरोपमनी स्थिति जाणवी वली आयु कर्मनी स्थितिनो उत्कृष्ट बंध तेत्रीश सागरोपमनो जाणवो ॥ ५७ ॥

हवे आठे कर्मोनो जघन्य स्थितिबंध कहे छे

बारस मुहुत्त जहन्ना, वेयणिए अठ नामगोएसु ॥
सेसाणंतमुहुत्तं, एयं बंधठिई माणं ॥५८॥

शब्दार्थ—वेदनीय कर्मनी स्थिति जघन्य बार मुहूर्त्तनी छे अने नामकर्म तथा गोत्रकर्मनी स्थिति आठ मुहूर्त्तनी जाणवी. बाकीना कर्मनी अंतमुहूर्त्तनी जाणवो. ए प्रमाणे बंध स्थितिनु मान छे ॥ ५८ ॥ इति बंधतत्त्व ॥

हवे मोक्षतत्त्वना नव भेद कहे छे

संतपयपरूवणाया दव्वपमाणं च खित्त फुसणा य ॥
कालो अ अंतरभाग-भावे अप्पाबहु चेव ॥५९॥

शब्दार्थ—सत्पदप्ररूपणा, द्रव्यप्रमाण अने खेत्रमान. वली स्पर्शना, काल, अंतर, भाग, भाव अने अल्पबहुत्व. ए प्रमाणे मोक्षतत्त्वना निश्चे नव द्वार छे. ॥ ५९ ॥

हवे प्रथम सत्पदप्ररूपणा द्वार कहे छे.

संतं सुद्धपयत्ता, विज्जंतं खकुसुमंव न असंतं ॥
मुक्ति पयं तस्सउ, परूवणा मग्गणाईहिं ॥६०॥

शब्दार्थ—मोक्ष ए पद शुद्ध एटले एक पदपणाथी सत् (विद्यमान) छे. आकाश फुलनी पेठे असत्य नथी. ते सत्पदरूप मोक्षनी प्ररूपणा गत्यादि मार्गणा द्वारे करवी. ॥ ६० ॥

हवे सतपद प्ररूपणा द्वारना पेटामां मार्गणा द्वार कहे छे.

गइ इंदीए काए, जोए वेए कसाय नाणे य ॥
संजम दंसणलेसा, भवसम्मे सन्निआहारे ॥६१॥

शब्दार्थ—चार गति मार्गणा, पांच इंद्रिय मार्गणा, छ काय मार्गणा, त्रण योग मार्गणा, त्रण वेद मार्गणा, चार कषाय मार्गणा, आठ ज्ञान मार्गणा, सात संयम मार्गणा, चार दर्शन मार्गणा, छ लेश्या मार्गणा, बे भव्य मार्गणा, छ सम्यक्त्व मार्गणा, बे संज्ञी मार्गणा अने बे आहार मार्गणा. ए सर्व मली बासठ मार्गणा थाय.

हवे सिद्धिपद आपनारी मार्गणानां नाम कहे छे.

नरगइ पणिंदि तसभव, सन्निअहक्खायखइअसम्मत्ते॥
मुक्खोणाहारकेवल–दंसणनाणे न सेसेसु ॥६२॥

शब्दार्थ—मनुष्य गति, पंचेंद्री जाति, त्रस, भव्यत्व, संज्ञी, यथाख्यात चारित्र, क्षायिक सम्यक्त्व, अणाहारी, केवलदर्शन अने केवलज्ञान. एटली मार्गणावाला जीवो मोक्ष पामे छे. बीजी मार्गणाओने विषे मोक्ष नथी. ॥ ६२ ॥

हवे द्रव्यप्रमाणादि बे द्वार कहे छे.

दव्वपमाणे सिद्धा-णं जीवदव्वाणि हुंति णंताणि ॥
लोगस्स असंखिज्जे, भागे एक्को य सव्वेवि ॥६३॥

शब्दार्थ—द्रव्य प्रमाण द्वार विचारे छते सिद्धना जीवद्रव्य अनंता छे वली लोकाकाशना असख्यातमे भागे एक सिद्ध छे. अथवा सर्व सिद्ध पण होय छे ॥ ६३ ॥

हवे स्पर्शनादि त्रण द्वार कहे छे

फुसणा अहिया कालो, इग सिद्ध पडुच्च साइणंतो ॥
पडिवाया भावाउ, सिद्धाणं अंतरं नत्थि ॥६४॥

शब्दार्थ—सिद्धना जीवोनी स्पर्शना अधिक छे एक सिद्धने आश्रीने काल सादि अनंत छे अने सर्वने आश्री अनादि अनंत छे वली सिद्धोने चववानो अभाव छे, माटे सिद्धोने अंतर नथी ॥

हवे भागद्वार अने भावद्वार कहे छे

सव्वजियाणमणंते, भागे ते तेसिं दंसणं नाणं ॥
खइए भावे परिणा-मिए अ पुण होइ जीवत्तं ॥६५॥

शब्दार्थ—सर्वे संसारी जीवोना अनंतमे भागे ते सिद्धना जीवो छे वली ते सिद्ध जीवोने क्षायिक भावने विषे केवलदर्शन अने केवलज्ञान होय छे. वली परिणामिक भावने विषे ए सिद्धना जीवोने जीवितपणुं पण होय छे ॥ ६५ ॥

हवे सिद्धना पंदर भेद कहे छे

जिणअजिणतित्थतित्था, गिहिअन्नसलिंगथीनरनपुंसा॥
पत्तेयसयंबुद्धा, बुद्धबोहियसिद्धणिक्काय ॥६६॥

शब्दार्थ—जिनसिद्ध, अजिनसिद्ध, तीर्थसिद्ध, अतीर्थसिद्ध, गृहस्थलिंगसिद्ध, अन्यलिंगसिद्ध, स्वलिंगसिद्ध, स्त्रीसिद्ध, पुरुषसिद्ध, नपुंसकसिद्ध, प्रत्येकबुद्ध सिद्ध, स्वयंबुद्ध सिद्ध, बुद्धबोधित सिद्ध, एकसिद्ध अने अनेक सिद्ध ए सिद्धना पंदर भेद जाणवा. ॥६६॥

हवे ए पंदर भेदना उदाहरण कहे छे.

जिणसिद्धा अरिहंता, अजिणसिद्धाय पुंडरिआपमुहा ॥
गणहारि तित्थसिद्धा, अतित्थसिद्धा य मरुदेवी ॥६७॥

शब्दार्थ—जिनसिद्ध ते अरिहंतो, अजिनसिद्ध ते पुंडरिक विगेरे गणधर जाणवा. तीर्थसिद्ध ते गणधर अने अतीर्थसिद्ध ते मरुदेवी जाणवा. ॥ ६७ ॥

गिहिलिंगसिद्ध भरहो, वक्कलचीरीय अन्नलिंगम्मि ॥
साहु सलिंगसिद्धा, थीसिद्धा चंदणापमुहा ॥६८॥

शब्दार्थ—गृहस्थलिंग सिद्ध भरत, अन्यलिंग सिद्ध वक्कल चीरी, स्वलिंग सिद्ध साधु अने स्त्री सिद्ध चंदनबाला विगेरे जाणवा. ॥ ६८ ॥

पुंसिद्धा गोयमाई, गांगेयपमुह नपुंसया सिद्धा ॥
पत्तेय सयंबुद्धा, भणिया करकंडुकविलाई ॥६९॥

शब्दार्थ—पुरुष सिद्ध ते गौतम विगेरे, नपुंसक सिद्ध ते गांगेय विगेरे, प्रत्येकसिद्ध ते करकंडु अने स्वयंबुद्धसिद्धते कपील जाणवा.

तह बुद्धबोहि गुरुबो—हिय इगसमय इगसिद्धा य ॥
इगसमयेवि अणेगा, सिद्धा ते णेगसिद्धा य ॥७०॥

शब्दार्थ—तेमज बुद्धबोधित सिद्ध ते गुरुथी बोध पामेला, एक समयमां सिद्ध थनाराना एक सिद्ध अने एक समयमां अनेक सिद्ध थाय ते अनेकसिद्ध कहेवाय. ॥ ७० ॥

हवे नवमुं अलपबहुत्वद्वार कहे छे.

थोवा नपुंससिद्धा, थीनरसिद्धा कमेण संखगुणा ॥
इअ मुक्खतत्तमेयं, नवतत्ता लेसओ भणिया ॥७१॥

शब्दार्थ—नपुंसक सिद्धो थोडा छे. स्त्री पुरुष सिद्धो अनुक्रमे

सख्यात गुणा छे ए प्रमाणे मोक्षतत्त्व कह्युं आ नव तत्त्वो लेश मात्र कह्यां छे ॥ ७१ ॥

हवे नव तत्त्वने जाणवानुं फल कहे छे

जीवाइनवपयत्थे, जो जाणइ तस्स होइ सम्मत्तं ॥
भावेण सद्दहंतो, अयाणमाणेवि सम्मत्तं ॥७२॥

शब्दार्थ—जे प्राणी जीवादि नव पदार्थने जाणे छे, तेने सम्यक्त्व होय छे वली भावे करीने सद्दहणा राखवाथी जीवादि नव तत्त्वना अजाणने पण सम्यक्त्व होय छे ॥ ७२ ॥

हवे सम्यक्त्वनुं स्वरूप कहे छे

सवाइ जिणेसर भा–सिआइं वयणाइ नन्नहा हुंति ॥
इइ बुद्धि जस्स मणे, सम्मत्तं निच्चलं तस्स ॥७३॥

शब्दार्थ—‘ सर्व जिनेश्वरे कहेला वचनो खोटा न होय ” एवी बुद्धि जे माणसनां मनमा होय छे तेनुं सम्यक्त्व निश्चल छे, एम जाणवुं ॥ ७३ ॥

हवे सम्यक्त्व पाम्यानुं फल कहे छे

अंतोमुहुत्तमित्तं–पि फासिअं हुज जेहिं सम्मत्तं ॥
तेसिं अवड्ढपुग्गल, परिअट्टो चेव संसारो ॥७४॥

शब्दार्थ—जेणे एक अंतर्मुहूर्त्त मात्र पण सम्यक्त्व फरस्युं छे, तेमने ससार अर्द्धपुद्गल परावर्त्त निश्चे थाय छे ॥ ७४ ॥

हवे आठ प्रकारे पुद्गल परावर्त कहे छे

दव्वे खित्ते काले, भावे चउह दुह वायरो सुहमो ॥
होइ अणंतुस्सप्पिणि, परिमाणो पुग्गलपरट्टो ॥७५॥

शब्दार्थ—द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भाव ए चार भेद, ते चारभेदना सूक्ष्म अने बादर एवा बे भेदथी अनत उत्सर्प्पिणी परिमाण एवो जे काल ते पुद्गल परावर्त्त होय छे ॥ ७५ ॥

उरलाइसत्तगेणं, एग जिउ मुअइ फुसिय सवअणु ॥
जित्तिअकालि स थूलो, दवे सुहुमो सग्गनयरा ॥७६॥

शब्दार्थ—एक जीव उदारादिक सातेनी वर्गणाने स्पर्श करीने सर्व प्रमाणु प्रत्ये जेटलो काल मूके, ते थूल द्रव्य पुद्गल परावर्त काल थाय. द्रव्यथी सूक्ष्म सात बीजी वर्गणा जाणवी.

लोगपएसोसप्पिणि—समया अणुनागबंधठाणे य ॥
तहतह कममरणेणं, पुठा खित्ताइ थुलियरा ॥७७॥

शब्दार्थ—लोकाकाशना प्रदेश, उत्सर्पिणीना समय अने अणुनाग बंधना सर्व स्थानक. तेम तेम अनुक्रम मरणे करीने ते क्षेत्रादि स्पर्शेला होय ते क्षेत्रादि स्थूल सूक्ष्म पल्योपम थाय.

हवे पुद्गल परावर्त्तनुं मान कहे छे.

उस्सप्पिणी अणंता, पुग्गलपरिअट्टउ मुणेअवो ॥
ते णंतातीअद्धा, अणागयद्धा अणंतगुणा ॥७८॥

शब्दार्थ—अनंती उत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी जाय ए पुद्गल परावर्त काल जाणवो. अनंत एवा ते पुद्गलपरावर्त्त काल गया अने अनंतगुणा जाशे. ॥ ७८ ॥

हवे छ द्रव्य दश द्वारे कहे छे.

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एक खित्त किरिआय ॥
णिच्चं कारण कत्ता, सवग दमिदिरहि अपवेसे ॥७९॥

शब्दार्थ—परिणामि, जीव, मूर्त्ति, सप्रदेश, एक, क्षेत्र, क्रिया, नित्यपणुं, कारण, कर्ता. ए सर्वमां रहेला विचारथी अप्रवेशपणे रह्या छे. ॥ ७९ ॥

॥ इति नवतत्त्व. ॥

अथ चोवीश दंडक.

मंगलाचरण पूर्वक कर्त्तव्य कहे छे

नमिउं चउवीसजिणे, तस्सुत्तवियारलेसदेसणाउ ॥
दंडगपएहिं ते चिय, थोसामि सुणेह जोभवा ॥ १ ॥

शब्दार्थ—चोवीश जिनेश्वरोने नमस्कार करीने तेमना सूत्रना विचारना लेश मात्रने कहेवाथी दंडकना पदे करीने ते जिनेश्वरोने निश्चे हु स्तवन करुं छु, माटे हे भव्यजनो! तमे सांभलो १

हव चोवीश दंडक गणावे छे

नेरइया असुराई, पुढवाई बेंदियादउ चेव ॥
गब्भयतिरियमणुसा, वंतरजोइसियवेमाणी ॥ २ ॥

शब्दार्थ—१ सात नारकीनु, १० असुरकुमारादिना, ५ पृथ्वीकायादिकना, ३ विगलेंद्रियना, २ गर्भजतिर्यंच अने मनुष्यना, ३ व्यंतर, ज्योतसि अने वैमानीकना ॥ २ ॥

हवे द्वार कहे छे

संखित्तयरीउ इमा, सरीर मोगाहणा य संघयणा ॥
सन्ना संठाण कसा—य लेस इंदिय दुसमुग्घाया ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—आ संघयणी संक्षेप मात्र छे शरीर ५, अवगाहना २, संघयण ६, सज्ञा ४-१०, संस्थान ६, कषाय ४,लेस्या ६, इंद्रिय ५, बे भेदे समुद्घात ७ ॥ ३ ॥

दिठिदंसणनाणे, जोगुवओगोववायचवणठिइ ॥
पज्जत्तिकिमाहारे, सन्नी गइ आगइ वेय ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—दृष्टि ३, दर्शन ४, ज्ञान ५, योग १५, उपयोग १२, उपपात १, चवन १, स्थिति२, पर्याप्ति ६, किमाहार १, सज्ञा ३, गति १, आगति १, वेद ३ ॥ ४ ॥

हवे छ गाथाथी शरीरद्वार तथा अवगाहनाद्वार कहे छे.

चउ गब्भतिरियवाउसु, मणुआणं पंच सेस तिसरीरा ॥
थावरचउगे दुहउ, अंगुल असंखभागतणू ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—गर्भजतिर्यंच अने वाउकायने विषे चार शरीर, मनुष्यने पांच शरीर, बाकीना त्रण शरीरवाळा होय. (इति शरीर द्वार) थावर चतुष्कने विषे उत्कृष्ट तथा जघन्यथी अंगुलना असंख्य भागवालुं शरीर जाणवुं. ॥ ५ ॥

सव्वेसिंपि जहन्ना, साहाविय अंगुलस्ससंखंसो ॥
उक्कोस पणसयधणू, नेरइया सत्तहत्थ सुरा ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—बाकीना वीश दंडकने स्वाभाविक जघन्यथी अंगुलनो असंख्यातमो भाग शरीर होय छे. नारकी जीवो उत्कृष्टा पांचसो धनुष्य उंचा होयछे. देवता उत्कृष्टे सात हाथ होयछे. ६

गब्भतिरि सहसजोयण, वणस्सई अहियजोयणसहस्सं ॥
नर तेइंदि तिगाउ, बेइंदिय जोयण बार ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—गर्भज तिर्यंच एक हजार जोजन, वनस्पति एक हजार जोजनथी कांइक अधिक, मनुष्य अने तेरिंदि त्रण गाउ अने वे इंद्रिय वार योजनना उत्कृष्ट शरीर प्रमाणवाळा होयछे.

जोयणमेगं चउरिं—दिदेहमुच्चत्तणे सुए भणियं ॥
वेउव्वियदेहं पुण, अंगुलसंखं सयारंभे ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—चउरिंद्रिनुं शरीर उंचपणे एक जोजन सूत्रने विषे कह्युं छे. वळी उत्तर वैक्रिय देह हमेशां आरंभे अंगुलनो असंख्यातमो भाग होय छे. ॥ ८ ॥

देवनरअहियलक्खं, तिरियाणं नवयजोयणसयाइं ॥
दुगुणं तु नारयाणं, भणियं वेउव्वियसरिरं तु ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—देव अने मनुष्योनु वैक्रिय शरीर एक लाख जोजन थी काइक अधिक होय छे तिर्यंचोनु नवसो योजननु होयछे वली नारकीनु पोताना शरीर प्रमाणथी बमणुं कह्युं छे ॥ ए ॥

अंतमुहुत्तं निरये, मुहुत्तचत्तारि मणुअतिरिएसु ॥
देवेसु अद्धमासो, उक्कोसविउव्वणा कालो ॥१०॥

शब्दार्थ—नरकमां एक अंतर मुहूर्त्त, मनुष्य अने तिर्यंचमा चार मुहूर्त्त अने देवताने विषे अर्धो मास ए उत्कृष्ट उत्तर वैक्रिय शरीरनो काल जाणवो (इति अवगाहनाद्वार) ॥१० ॥

हवे एक गाथाथी सघयण द्वार कहे छे

थावरसुरनेरइया, असंघयणा य विगलछेवट्ठा ॥
संघयणछगं गब्भय—नरतिरिएसु मुणेअव्वं ॥११॥

शब्दार्थ—पाच थावर, देवता अने नारकी ए सर्व सघयण रहित छे विगलेंद्रियने सेवार्त्त सघयण होय छे गर्भज मनुष्य अने तिर्यंचने विषे छ सघयण जाणवु (इति सघयणद्वार) ॥११॥

हवे वे गाथाथी सज्ञा तथा सस्थानद्वार कहे छे

सव्वेसि चउ दह वा—सणा सव्वे सुरा य चउरंसा ॥
नरतिरिछसठाणा, हुंमा विगलिंदिनेरइया ॥१२॥

शब्दार्थ—सर्वे दंडकोने चार अथवा दश सज्ञा छे (इति सज्ञाद्वार) अने सर्वे देवताओ समचतुरस्र छे मनुष्य अने तिर्यंच छ संस्थानवाला होय छे तथा विगलेंद्रि अने नारकी हुंड सस्थानवाला होय छे

नाणाविहधयसूई—बुब्बुयवणवाउतेउअपकाया ॥
पुढवी मसूरचदा—कारा संठाणउ भणिया ॥१३॥

शब्दार्थ—वनस्पतिकाय जीवो नाना प्रकारना सस्थानवाला छे वाउकाय जीवो ध्वजा सरखा सस्थानवाला छे, अग्निकाय जीवो सुइयाना समूह सरखा संस्थानवाला अने अप्काय जीवो

परपोटाना सरखा संस्थानवाला होयछे. पृथ्वीकाय जीवो मसूरनी दाल अने चंद्रना सरखा संस्थानवाला कह्या छे. (इति संस्थानद्वार)

हवे चार गाथाथी कषाय, लेश्या, इंद्रिय अने समुद्घात द्वार कहे छे.

सव्वेवि चउकसाया, लेसछगं गब्भतिरियमणुएसु ॥
नारयतेउवाउ—विगलाविमाणियतियल्लेसा ॥१४॥

शब्दार्थ—सर्वे एवा जीवो पण चार कषायवाला होय छे. (इति कषायद्वार) गर्भज तिर्यंच अने मनुष्य छ लेश्यावाला होय छे. वली नारकी, अग्निकाय, वाउकाय, विगलेंद्री अने वैमानिक देवता ए सर्वे त्रण लेश्यावाला होय छे. ॥ १४ ॥

जोइसियतेउल्लेसा, सेसा सव्वेवि हुंति चउल्लेसा ॥
इंदियदारं सुगमं, मणुआणं सत्त समुग्घाया ॥१५॥

शब्दार्थ—ज्योतसि तेजो लेश्यावाला छे. बाकीना सघला पण चार लेश्यावाला होयछे. (इति लेश्याद्वार) इंद्रियद्वार सुगम छे. (इति इंद्रिद्वार) मनुष्यने सात समुद्घात होयछे. ॥ १५ ॥

वेयणकसायमरणे, वेउव्वियतेयएय आहारे ॥
केवलियसमुग्घाए, सत्त इमे हुंति सन्नीणं ॥१६॥

शब्दार्थ—वेदना, कषाय, मरण, वैक्रीय, तेजस, आहारक, अने केवली ए सात समुग्घात संज्ञी मनुष्यने होय छे. ॥ १६ ॥

एगिंदियाण केवलि—तेउआहारगविणु चत्तारि ॥
तेवउव्वियवज्जा, विगला सन्नीण ते चेव ॥१७॥

शब्दार्थ—एकेंद्रियने, केवली तेजस अने आहारक वर्जिने चार समुद्घात होय छे. ते पूर्वे कहेला त्रण अने वैक्रिय ए चार विना बाकीना त्रण समुद्घात विकलेंद्रिने जाणवा अने असंज्ञीने पण ते त्रणज समुद्घात निश्चे होय छे. ॥ १७ ॥

हवे बे गाथाथी दृष्टि अने दर्शनद्वार कहे छे.

पण गप्रतिरिसुरेसु, नारयवाऊसु चउर तिय सेसे ॥
विगलडुदिठी थावर-मिन्नत्ति सेस तियदिठी ॥१८॥

शब्दार्थ—गर्भज तिर्यंच अने देवताने विषे पाच, नारकी अने वाउकायने विषे चार अने बाकीनाने विषे त्रण समुद्घात होयछे. (इति समुद्घातद्वार) विकलेंडि बे दृष्टिवाला छे. थावर मिथ्यात्वी छे अने बाकीना त्रण दृष्टिवाला छे ॥ १८ ॥ (इति दृष्टिद्वार)

थावरबितिसु अचक्खु, चउरिंदिसु तह्नुग सुए जणिय ॥
मणुआ चउदसणिणो, सेसेसु तिगं तिगं जणियं॥१९॥

शब्दार्थ—स्थावर, बेइंद्रिय अने तेरिंद्रियने विषे एक अचक्षु दर्शन होयछे चौरिंद्रिने विषे चक्षुदर्शन अने अचक्षुदर्शन सूत्रमा कह्यु छे मनुष्यो चार दर्शनवाला होयछे अने बाकीनाने विषे त्रण त्रण दर्शन होयछे ॥ १९ ॥ (इति दर्शनद्वार)

हवे एक गाथाथी ज्ञानद्वार कहे छे

अन्नाणनाणतियतिय, सुरतिरिनिरये थिरे अन्नाणडुगं
नाणानाण डुविगले, मणुए पणनाणतिअन्नाण ॥२०॥

शब्दार्थ—देवता, तिर्यंच अने नारकोने विषे त्रण अज्ञान अने त्रण ज्ञान होय छे थावरमा बे अज्ञान होयछे विकलेंद्रियने विषे बे ज्ञान अने बे अज्ञान होयछे. मनुष्यने विषे पाच ज्ञान अने त्रण अज्ञान होयछे ॥ २० ॥ (इति ज्ञानद्वार)

हवे एक गाथाथी योगद्वार कहे छे

इक्कारस सुरनिरये, तिरिएसु तेर पन्नर मणुएसु ॥
विगले चउ पण वाए जोगतिगं थावरे होइ ॥२१॥

शब्दार्थ—देवता अने नारकीने विषे अगीयार, तिर्यंचने विषे तेर, मनुष्यने विषे पंदर, विकलेंद्रियने विषे चार, वाउकायने विषे पाच अने स्थावरने विषे त्रण योग होय छे ॥२१॥ (इति योगद्वार)

हवे एक गाथाथी योगनां नाम कहे छे

सच्चेअरमीसअसच्च—मोस मणावयवेउव्विआहारे ॥
उरलंमिसा कम्मण, इय जोगा देसिया समए ॥२२॥

शब्दार्थ—सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, सत्यामृषा मनो योग, असत्यामृषा मनोयोग, ए प्रमाणे मन अने वचनना योग जाणवा. वैक्रिय योग, आहारक योग तेमज औदारिक योग ए त्रण मिश्र सहित. अने वली कार्मण योग, ते साते, कायाना योग आगमने विषे कह्या छे. ॥ २२ ॥ (इति योगद्वार)

हवे वे गाथाथी उपयोग द्वार कहे छे.

तिअन्नाण नाणपण, चउदंसण बार जिअलक्खणुवउगा ॥
इअ बारस उवउगा, भणिआ तिलुक्कदंसीहिं ॥ २३ ॥

शब्दार्थ—त्रण अज्ञान, पांच ज्ञान, चार दर्शन, ए बार जी-वना लक्षणरूप उपयोग छे. ए बार उपयोग त्रीलोक दर्शी एवा श्री जिनेश्वरोए कह्या छे. ॥ २३ ॥

उवउगा मणुएसु, बारस नव निरय तिरय देवेसु ॥
विगलदुगे पण छक्कं, चउरिंदिसु थावरे तिअगं ॥२४॥

शब्दार्थ—मनुष्यने विषे बार, नारकी, तिर्यंच अने देवताने विषे नव, बेइंद्रिय अने तेरिंद्रिने विषे पांच, चोरिंद्रिने विषे छ अने थावरने विषे त्रण उपयोग होय छे.॥२४॥ (इति उपयोगद्वार)

हवे दोढ गाथाथी उत्पत्ति अने चवनद्वार कहे छे.

संखमसंखा समए, गब्भयतिरिविगलनारय सुरा य ॥
मणुआ नियमा संखा, वणणंता थावर असंखा॥२५॥

शब्दार्थ—एक समयने विषे गर्भजतिर्यंच, विकलेंद्रि, नारकी अने देवता संख्याता अने असंख्याता उत्पन्न थाय छे.

नियमथी मनुष्यो संख्याता उत्पन्न थाय छे वनस्पतिकाय अनंता उत्पन्न थाय छे अने थावर असख्याता उत्पन्न थाय छे ॥२५॥

असन्नीनर असंखा, जह उववाउ तहेव चवणेवि ॥

हवे चार गाथाथी स्थितिद्वार कहे छे

वावीससगतिदसवा–ससहस्स उक्किठ पुढवाइ ॥२६॥

शब्दार्थ–असज्ञी मनुष्यो असंख्याता उत्पन्न थाय छे जेवी रीते उत्पन्न थवानी वात कही तेवीज रीते चवनपणु जाणवु (इति उत्पत्ति चवनद्वार) पृथ्वीकाय, अप्काय, वाउकाय अने वनस्पतिकायनु आयुष्य अनुक्रमे वावीस हजार, सात हजार, त्रण हजार अने दस हजार वर्षनु उत्कृष्टु होय छे- ॥ २६ ॥

तिदिणग्गि तिपल्लाउ, नरतिरि सुरनिरय सागरतित्तीसा॥

वंतर पल्लं जोइस, वरिसलक्खाहियं पलियं ॥२७॥

शब्दार्थ–त्रण दिवस अग्निकायनु आयुष्य होय छे- मनुष्य अने तिर्यंच त्रण पल्योपम आयुष्यवाला होय छे देवता अने नारकी तेत्रीस सागरोपमना आयुष्यवाला होय छे व्यतर देवता एक पल्योपमना आयुष्यवाला अने ज्योतसी देवता एक लाख वर्ष अधिक एवी एक पल्योपमना आयुष्यवाला होयछे

असुराण अहियअयर, देसूणदुपल्लयं नवनिकाए ॥

वारसवासूणपणदिण–छमास उक्किठ विगलाऊ ॥२८॥

शब्दार्थ–असुर कुमारोनु एक सागरोपमथी काइक अधिक आयुष्य होयछे नव निकायनुं देसे उणा वे पल्योपमनुं, विकलेन्द्रिय [वेइन्द्रि, तेरिन्द्रि अने चौरिन्द्रि]अनुक्रमे वारवर्ष, उगणपचास दिवस अने छ मासनु ए सर्व उत्कृष्ट आयुष्य जाणवु २८

पुढवाइदसपयाणं, अंतमुहुत्तं जहन्नआउठिइ ॥

दससहसवरसठिइआ भवणाहिवनिरयवतरिया २९

शब्दार्थ–पृथ्वी कायादि [पांच स्थावर, त्रण विकलेंद्रिय, तिर्यंच अने मनुष्य] ए दशनी जघन्यथी आयुष्यनो स्थिति एक अंतमुहूर्त्तनी छे, भवनपति, नारकी अने व्यंतर देवताउ दश हजार वर्षनी जघन्य स्थीतिवाला छे. ॥ २९ ॥

वैमाणिय जोइसिया, पल्लतयट्ठंसआउआ हुंति ॥

हवे त्रण गाथाथी पर्याप्ति, किमाहार अने संज्ञा ए त्रण द्वार कहे छे.

सुरनरतिरिनिरएसुं, छपज्जती थावरे चउगं ॥३०॥

शब्दार्थ–वैमानीक अने ज्योतसी देवताउ एक पल्योम अने तेनो आठमो भाग एम अनुक्रमे आयुष्यवाला होयछे. (इति स्थीति द्वार) देवता, मनुष्य, तिर्यंच अने नारकीने विषे छ पर्याप्ती होयछे. तथा थावरने विषे चार पर्याप्ती होयछे. ॥ ३० ॥

विगले पंच पज्जती, छद्दिसि आहार होइ सव्वेसिं ॥

पणगाइपए भयणा, अह सन्नीतिय भणिस्सामि ३१

शब्दार्थ–विकलेंद्रियने विषे पांच पर्याप्ती होयछे. (इति पर्याप्ति द्वार) सर्वे जीवोने छ दिशाने विषे आहार होयछे. पांच दिशा आदि पदने विषे भजना छे. (इति किमाहारद्वार) हवे त्रण संज्ञा भणीश.॥

चउविहसुरतिरिएसु, निरएसु य दीहकालगी सण्णा ॥

विगले हेउवएसा, सन्नारहिआ थिरा सव्वे ॥३२॥

शब्दार्थ–चार प्रकारना देवता, तिर्यंच अने नारकीने विषे दीर्घकालिकी संज्ञा होयछे. विगलेंद्रियने विषे हेतुपदेशिकीसंज्ञा होयछे अने सर्वे थावरो संज्ञा रहित होयछे. ॥३२॥

मणुआण दीहकालिअ, दिठिवाउवएसिआ केवि ॥

हवे साडा छ गाथाथी गति संज्ञा कहे छे.

पज्जपणतिरि मणुअ च्चिय, चउविहदेवसु गच्छंति ॥३३॥

शब्दार्थ–मनुष्यने दीर्घकालिकी संज्ञा होयछे अने केटलाक

तेऊवाऊगमणं, पुढवीपमुहंमि होइ पयनवगे ॥
पुढवाइठाणदसगा, विगलाइं तिअ तहिं जंति ॥३८॥

शब्दार्थ—तेउकाय अने वाउकायनुं जवुं पृथ्वी कायादि नव पदने विषे होयछे. पृथ्वीकायादि दश स्थानकना जीवो त्रण विकलेंद्रिय थाय छे अने ते त्रण विकलेंद्रिय ते पृथ्वीकायादि दश पदमां जाय छे. ॥ ३८ ॥

गमणागमणं गप्नय, तिरियाणं सयलजीवठाणेसु ॥
सव्वछ जंति मणुआ, तेऊवाऊसु नो जंति ॥३९॥

शब्दार्थ—गर्भज तिर्यंचोनुं सर्वे दंडकोने विषे जवुं आववुं थायछे. मनुष्यो सर्वे दंडकोने विषे जायछे. पण तेउकाय अने वाउकायने विषेथी मनुष्यो न थाय. (इति गतिद्वार) ॥ ३९ ॥

हवे त्रण गाथाथी आगति द्वार कहे छे.

अंतरदीवा जुअला, तेसिं गईउ हवंति इक्कारा ॥
दशनवणा इक्कवणे, आगईउ मणुअतिरिएसु ॥४०॥

शब्दार्थ—अंतरद्वीपना युगलीयानुं आववुं दश भवनपति अने एक व्यंतर एम अग्यारमां होय छे, अने ए अंतरद्वीपना जुगलीयामां उत्पन्न थवुं मनुष्य अने तिर्यंचथी होय छे. ॥४०॥

असन्नितिरिए गईउ, बावीसा जोइसविमाणविणा ॥
आगईउ थावरपंच, विगलपंचिंदितिरियनरा ॥४१॥

शब्दार्थ—असन्नि तिर्यंचनी गति ज्योतसी अने वैमानीक विना बावीश दंडकमां होयछे अने असन्नि तिर्यंचमां उत्पन्न थवुं ते पांच थावर, त्रण विकलेंद्रिय, पंचेंद्रियतिर्यंच अने मनुष्यो मांथी होय छे. ॥ ४१ ॥

संमुछिम मणुआणं, दह गईउ पंचथावरा विगला ॥
पंचिंदिय तिरियनरा, आगईउ तेउवाउविणा ॥४२॥

शब्दार्थ -समुर्छिम मनुष्योनी गति पांच थावर, त्रण विक लेंद्रिय, पचेंद्रिय तिर्यंच अने मनुष्य ए दशमा थायछे अने समुर्छि म मनुष्यमा उत्पन्न थवुं ते तेउकाय अने वाउकाय विना ते आठ माथी थाय छे ॥ ४२ ॥ (इति आगतिद्वार)

हवे एक गाथाथी वेदद्वार कहे छे.

वेयतिय तिरियनरेसु, इत्थीपुरिसो चउव्विहसुरेसु ॥
थिरविगलनारएसु, नपुंसवेउ हवइ एगो ॥४३॥

शब्दार्थ–तिर्यंच अने मनुष्यने विषे त्रण वेद होय चार प्र कारना देवताने विषे स्त्रीवेद अने पुरुषवेद होय पाच थावर, त्रण विकलेंद्रिय अने नारकीने विषे एक एक नपुसकवेद होय छे. ४३

हवे व गाथाथी अल्प बहुत्वद्वार कहे छे

पज्जमणुबायरग्गी, वेमाणीभवणनिरयवंतरिया ॥
जोइसचउपणतिरिआ, बेइंदितेइंदिभूआऊ ॥४४॥

शब्दार्थ–पर्याप्ता मनुष्य सर्व दंडकथी थोडा, तेथी असंख्या त गुणा बादर अग्निकाय, तेथी असंख्यात गुणा वैमानीक, तेथी असंख्यात गुणा भवनपति, तेथी असंख्यात गुणा नारकी, तेथी असंख्यात गुणा व्यंतर, तेथी असंख्यात गुणा ज्योतसी, तेथी संख्यात गुणा चउरिंद्रिय, तेथी अधिक पचेंद्रिय तिर्यंच, तेथी अधिक बेइंद्रिय, तेथी अधिक तेरिंद्रिय, तेथी असंख्यात गुणा पृ थ्वीकाय, तेथी असंख्यात गुणा अप्काय छे ॥ ४४ ॥

वाउवणस्सइ चिय, अहिया अहिया कमेणिमे हुंति ॥
सव्वेवि इमे भावा, जिणा मये णंतसो पत्ता ॥४५॥

शब्दार्थ–तेथी असंख्यात गुणा वाउकाय अने तेथी अनंत गुणा वनस्पतिकाय छे, निश्चे ए सर्व अनुक्रमे अधिक अधिक होय छे हे जिनेश्वर ! आ सर्व पण भावो में अनंतीवार प्राप्त कर्या छे,

हवे एक गाथाथी प्रार्थना करे छे.

संपइ तुम्हंभत्तस्य, दंमगपयभमणभग्गहियस्य ॥
दंमतियविरयसुलहं, लहु मम दिंतु मुक्खपयं ॥४६॥

शब्दार्थ—हवणां चोवीस दंमकना स्थानने विषे भमवाथी निवृत्त थयुं छे मन जेनुं, एवा तमारा भक्त एवा मने, मन वचन अने कायाना त्रण दंमना विरामथी सुलभ एवुं मोक्षपद ऊट आपो.

हवे एक गाथाथी ग्रंथकर्त्ता पोतानुं नाम जणावे छे.

सिरिजिणहंसमुणीसर, रज्जे सिरिधवलचंदसीसेण ॥
गजसारेण लिहिआ, एसा विन्नत्ति अप्पहिआ ॥४७॥

शब्दार्थ—श्री जिनहंस मुनीश्वरना राज्यने विषे श्री धवलचंद्रना शिष्य एवा गजसार मुनिये आ आत्महितकारी विनंती लखी छे. ॥ ४७ ॥ इति चोवीश दंमक समाप्तः ॥

लघु संग्रहणी.

एक गाथाथी मंगलाचरण पूर्वक कर्त्तव्य कहे छे.

नमिय जिणं सव्वन्नुं, जयपूज्ज जयगुरू महावीरं ॥
जंबूदीवपयच्छे, वुच्छं सुत्ता सपरहेज्जं ॥ १ ॥

शब्दार्थ—सर्वज्ञ, जगत्ने पूज्य, जगत्ना गुरु एवा श्री महावीर जिनश्वरने नमस्कार करी सूत्रने अनुसारे जंबूद्वीपना शाश्वता पदार्थोने हुं पोताना अने परना माटे कहुं छुं. ॥१॥

एक गाथाथी दश द्वार कहे छे,

खंमा जोयण वासा, पव्वय कूमा य तिच्छ सेढीत ॥
विजय द्दह सलिलात, पिंमेसिं होइ संघयणी ॥ २ ॥

शब्दार्थ—१ खंडवा, २ जोजन, ३ क्षेत्र, ४ पर्वत, ५ कूट, ६

तीर्थ, ७ श्रेणी, ८ विजय, ए इह अने १० नदीयो ए दश द्वारना समूहथी संग्रहणी थाय छे ॥२॥

हवे त्रण गाथाथी पहेलु द्वार कहे छे.

नउअ सयं खंमाणं, जरहपमाणेण जाइए लक्के ॥
अहवा नउअसयगुण, जरहपमाण हवइ लक्कं ॥३॥

शब्दार्थ—एक लाख जोजनने जरतक्षेत्रना प्रमाणे [५२६ जोजन ६ कलाथी] जागाकार करीय त्यारे एकसोने नेवुं खाडवा थाय. अथवा जरतक्षेत्रना प्रमाणने एकसोन नेवु गुणा करे तो पण लाख जोजन थाय ॥३॥

अहविगखंमं जरहे, दो हिमवंते अ हेमवइ चउरो ॥
अठ महाहिमवते, सोलसखमाइ हरिवासे ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—अथवा एक खामवानु जरतक्षेत्र, बे खामवानो हिमवत पर्वत, चार खाडवानु हेमवत क्षेत्र, आठ खामवानो महाहिमवंत पर्वत अने सोल खामवानुं हरिवर्ष क्षेत्र छे ॥४॥

वत्तिसं पुण निसढे, मिलिया तेसठि बीयपासेवि ॥
चउसठिउ विदेहे, ति रासि पिंडेइ नउअसय ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—वली बत्रीश खाडवानो निषध पर्वत ए सर्व मलीने त्रेसठ खामवा थाय एवा बीजा पासाने विषे पण त्रेसठ खामवा जाणवा तेमज महाविदेहक्षेत्रने विषे चोसठ खामवा छे ए त्रणे एकठा करीये त्यारे एकसो नेवुं खामवा थाय ॥५॥

हवे पाच गाथाथी बीजु द्वार कहे छे

जोयणपरिमाणाइं, समचउरसाइं इज्ञ खंमाइं ॥
लक्कस्सयपरिहीए, तप्पाय गुणेणय हुंतेव ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—समचतुरस्र जोजनना परिमाणे खामवा करवा.

एकलाख जोजनना परिधीने तेना चोथे भागे [पच्चिसहजारे] गुणवाथी गणीत पद थाय छे. ॥६॥

विक्खंभवग्गदहगुण–करणी वट्टस्स परिरउ होइ ॥
विक्खंभपाय गुणिउ, परिरउ तस्स गणियपयं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–विष्कंभ(पोहोलाइ)ना वर्गने दश गुणा करीने ते आंकनुं वर्गमूल काढवुं, तेथी गोल परिधी थाय. पछी विष्कंभने तेना चोथे भागे गणीये तो तेनुं क्षेत्रफल थाय. ॥७॥

परिही तिलक्खसोलस–सहस्स दोयसय सत्तवीस हिया
कोसतिगं अठावीसं, धणुसय तेरंगुलद्ध हियं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–त्रणलाख, सोलहजार, बसो सत्तावीस जोजन; त्रण गाउ; एकसो अठावीस धनुष्य अने साडातेर आंगल एटली जंबूद्वीपनी सर्वपरिधीथाय. ३१६२२७जो०३गा०१२८ध०१३॥आं०

सत्तेवयकोडिसया, नउआ छप्पन्नसयसहस्साइं ॥
चउणउयं च सहस्सा, सयंदिवड्ढं च साहियं ॥ ९ ॥
गाउअमेगं पन्नरस, धणुसया तह धणूणि पन्नरस ॥
सठिं च अंगुलाइं, जंबुद्दीवस्स गणियपयं ॥१०॥

शब्दार्थ–सातसो ने नेवुं क्रोड, छप्पन्न लाख, चोराणुं हजार अने एकसो पच्चास जोजन;–एक गाउ; पंदरसो पंदर धनुष्य अने साठ आंगुल, एटलुं जंबूद्वीपनुं गणितपद जाणवुं. ॥ ९-१० ॥

हवे बे गाथाथी क्षेत्रद्वार अने पर्वत संख्याद्वार कहे छे.

भरहाई सत्तवासा, वियड्ढ चउचउरतिंस वट्टियरे ॥
सोलस वक्खारगिरि, दो चित्तविचित्त दोजमगा ॥११॥

शब्दार्थ–भरत विगेरे सात क्षेत्र छे, (इति ३ क्षेत्रद्वार) वैताढ्य चार वाटला अने चोत्रीश लांबा, सोल वखारा पर्वत, बे चित्र

विचित्र पर्वत अने बे जमग समग पर्वत छे ॥ ११ ॥

दो सय कणयगिरीणं, चउ गयदंता य तह सुमेरू य ॥
छ वासहरा पिंडे, एगुणसत्तरि सयाउन्नि ॥१२॥

शब्दार्थ—बसो कंचन पर्वत, चार गजदंता पर्वत, तेमज एक सुमेरु अने छ क्षेत्रमर्यादा धारक पर्वत, ए सर्व एकठा करता ब सोने उगणोत्तेर थाय छे. ॥१२॥

हवे पाच गाथाथी कुट (शिखर) द्वार कहे छे

सोलस वक्खारेसु, चउचउ कुडाय हुंति पत्तेयं ॥
सोमणस गंधमायण, सत्तठ्ठय रूप्पिमहाहिमवे ॥१३॥

शब्दार्थ—सोल वक्खारा पर्वतने विषे दरेक उपर चार चार शिखर छे, सोमनस अने गधमादन ए बे गजदंता पर्वत उपर सात सात शिखर छे, अने रूपी तथा महा हिमवंत ए बे पर्वत उपर आठ आठ शिखरो छे. ॥१३॥

चउतीस वियड्ढेसु, विज्जुप्पहनिसढनिलवंतेसु ॥
तह मालवंतसुरगिरि, नव नव कुडाइ पत्तेयं ॥१४॥

शब्दार्थ—वैताढ्य पर्वत उपर चोत्रीस, विद्युत्प्रभगजदंतो, नैषध, नीलवंत, मालवंतगजदंतो अने मेरु ए दरेक पर्वतो उपर नव नव शिखरो छे ॥१४॥

हिमसिहरिसु इक्कारस, इय इगसठ्ठी गिरिसु कुडाणं ॥
एगत्ते सव्वधणं, सयचउरो सत्तसठ्ठीय ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—हिमवत अने शिखरी ए प्रत्येक पर्वत उपर अगीयार अगीयार शिखरो छे एम एकसठ पर्वत उपर सर्व मलीने चारसो सडसठ शिखरो थाय छे, ॥१५॥

चउ सत्त अठ्ठ नवगे—गारसकुडेहिं गुणह जहसंखं ॥
सोलस दुदु गुणयालं, दुवेय सगसठ्ठ सयचउरो ॥१६॥

शब्दार्थ—चार, सात, आठ, नव अने अगीयार एटला शिखरोनी संख्याये करीने अनुक्रमे सोल बे, बे, ओगणचालीस अने बे ए पर्वतोने गुणतां सर्व मली चारसो सम्सठ शिखरो थायछे.

चउतीसं विजयेसु, उसुकुम्मा अठ मेरूजंबूम्मि ॥
अठय देवकुराइं, हरीकुम्महरिस्सहे सठी ॥१७॥

शब्दार्थ—चोत्रीस विजयने विषे ऋषभशिखर चोत्रीस छे. मेरू अने जंबूवृक्ष उपर आठ आठ शिखर छे. देवकुरुने विषे आठ शिखर,हरिशिखर अने हरिसशिखर ए सहित साठ भूमीशिखर छे.

हवे एक गाथाथी तीर्थद्वार कहे छे.

मागहवरदामपभा–सं तिछ विजयेसु एरवयभरहे ॥
चउतीसा तिहिंगुणिया, डुरुत्तरसयं तु तिछाणं ॥१८॥

शब्दार्थ—बत्रीस विजय, एरव्रत अने भरत ए चोत्रीसमां मागध, वरदाम अने प्रभास एवा एक नामनां चोत्रीस तीर्थ छे. तेथी ते चोत्रीसने त्रण गुणा करतां सर्व मलीने एकसोने बे तीर्थ थाय छे.

हवे एक गाथाथी श्रेणीद्वार कहे छे.

विज्जाहर अभिउगी–य सेढीउ डुन्नि डुन्नि वेअड्ढे ॥
इय चउगुण चउतीसा, छत्तीससयं तु सेढीणं ॥१९॥

शब्दार्थ—दरेक वैताढ्य पर्वत उपर विद्याधर अने अभियोगीकदेव तेमनी दरेकनी बबे बबे श्रेणीयो छे; तेथी ते चार श्रेणीयोने चोत्रीस गुणी करतां एकसो छत्रीस श्रेणीयो थायछे. ॥१९॥

हवे एक गाथाथी विजयद्वार अने द्रहद्वार कहे छे.

चक्कीजेयव्वाइं, विजयाइं इछ हुंति चउतीसा ॥
मह दह छ पउमाई, कुरुसु दसगं ति सोलसगं ॥२०॥

शब्दार्थ—अहिं चक्रवर्त्तीये जीतवी विजया चोत्रीस छे. तेमज अहि पद्मादि म्होटा द्रहो छ छे अने कुरुक्षेत्रमां दश द्रह छे.

सर्व मली सोल हृद थाय छे. ॥ २० ॥

इवे छ गाथाथी नदीद्वार कहे छे

गंगा सिंधु रत्ता, रत्तवई चउ नइउ पत्तेयं ॥

चउदसहिं सहस्सेहिं, समगं वच्चंति जलहिंमि ॥२१॥

शब्दार्थ–गगा, सिधु, रक्ता अने रक्तवती ए चार नदीयो छे ते दरेक नदी चौदहजार परिवार सहित समुद्रमा जाय छे. चारे नदीयोनो परिवार छपन्न हजार छे ॥ २१ ॥

एवं अभ्भंतरिया, चउरो पुण अठविस सहस्सेहिं ॥

पुणरवि छप्पन्नेहिं, सहस्सेहिं जंति चउसलिला ॥२२॥

शब्दार्थ–वली एवीज रीत हिमवतादिकनी अभ्यतर चार नदीयो प्रत्येक अठावीस हजार नदीयोनो परिवार सहित जाय छे. [चार नदीयोनो परिवार ११२०००] अने हरिवर्ष क्षेत्रनी अने रम्यक क्षेत्रनी चार नदीयो प्रत्येक छप्पन्न हजार नदीयोना परिवार सहित जाय छे [चार नदीयोनो परिवार–२२४०००]

कुरूमज्झे चउरासी, सहस्सा तहय विजय सोलसेसु ॥

बत्तीसाण नईणं, चउदस सहस्साइं पत्तेयं ॥२३॥

शब्दार्थ–देवकुरू उत्तरकुरुमा छ नदीयोनो सर्व परिवार चोरासी हजारनो छे अने सोल विजयमा बत्रीस नदीयो छे, तेमा दरेकने चौदहजार नदीयोनो परिवार छे ॥ २३ ॥

चउदस सहस्स गुणिया, अमतीस नइउ विजयमज्झिला॥

सीउयाए निवमति, तहय सीयाइएमेव ॥२४॥

शब्दार्थ–ए बत्रीस नदीयोने चौद हजारे गुणता चारलाख आडत्रीस हजार थाय छे तेमज विजयमादेली आडत्रीस नदी योने पण चोदहजारे गुणता सर्व मली पाचलाख बत्रीस हजार थाय. एटली नदीयो सीतोदामा तेमज सोतामा मले छे. २४

सीया सीओयावि य, बत्तीस सहस्स पंचलरकेहिं ॥
सव्वे चउदस लरका, छप्पन्न सहस्स मेलविया ॥२५॥

शब्दार्थ—सीता अने सीतोदा ए बे नदीयो प्रत्येक पांचला ख बत्रीस हजारना परिवारवाली छे. ते सर्वे एकठी करतां चौद लाख छप्पन्नहजार थाय. [१४५६०००] ॥ २५ ॥

छ जोयण सकोसे, गंगासिंधूण विच्छरो मूले ॥
दसगुणिउ पज्जंते, इय डुडुगुणणेणं सेसाणं ॥२६॥

शब्दार्थ—गंगा अने सिंधु नदीनो मूलमां विस्तार सवा छ जोजन छे. तथा छेहे तेथी दश गुणो [६२॥ जोजन] विस्तार छे ए प्रमाणे बीजी नदीयोनो तेथी बमणो विस्तार जाणवो. २६

जोयणसयमुच्चिद्दा, कणयमया सिहरिचुल्लहिमवंता ॥
रूप्पिमहाहिमवंता, डुसु उच्चा रूप्पकणयमया ॥२७॥

शब्दार्थ—सुवर्णमय शिखरी अने लघुहिमवंत ए बे पर्वतो एक सो योजन उंचा छे. रूपानो रूपीपर्वत अने सुवर्णनो महाहि मवंत पर्वत ए बे बसो जोजन उंचा छे. ॥ २७ ॥

चत्तारि जोयण सए, उच्चिद्धो निसढनीलवंतो य ॥
निसढो तवणिज्जमउ, वेरुलिउ नीलवंतो य ॥२८॥

शब्दार्थ—नैषध अने नीलवंत ए बे पर्वतो चारसो जोजन उंचा छे. तेमां नैषध तपावेला सुवर्ण सरखो अने नीलवंत लीला रत्नना वर्ण सरखो छे. ॥ २८ ॥

सव्वेवि पव्वयरा, समयखीतंमि मंदरविहुणा ॥
धरणीतले मुवगाढा, उस्सेय चउछ भायंमि ॥२९॥

शब्दार्थ—फक्त अढीद्वीपना मेरु विना काल अथवा क्षेत्र ए वेयने विषे सर्वे साश्वतापर्वतो उंचपणाना चोथाभागेपृथ्वीमां उंडाहोयछे.

खंमाई गाहाहिं, दसहिं दारेहिं जंबूदीवस्स ॥
संघयणी सम्मत्ता, रइया हरिभद्दसूरिहि ॥३०॥

शब्दार्थ--खाम्वादिकनी गाथाए करीने दश द्वारथी हरिभ इसूरिये रचेली जंबूद्वीपनी सग्रहणी समाप्त थइ ॥३०॥

चैत्यवदन भाष्य.

वंदित्तु वंदाणिज्जे, सव्वे चिइवंदणाइसुविचारं ॥
बहुवित्तिभासचुण्णी--सुयाणुसारेण वुच्छामि ॥ १ ॥

शब्दार्थ--वदन करवा योग्य एवा सर्वे (पाच) परमेष्ठीने वादीने चैत्यवदन, गुरुवदन अने पच्चखाणना उत्तम विचारने वहु वृत्ति, भाष्य अने चूर्णिरूप सूत्रना अनुसारे हु कहीश ॥१॥

चार गाथाथी २४ द्वार कहेछे

दहतिगअहिगम पणगं, दुदिसितिहुग्गहतिहाउवंदणया
पणिवायनमुक्कारा, वण्णा सोलसयसीयाला ॥ २ ॥

शब्दार्थ--१ नैषधिक आदि दशत्रिक, २ पाच अभिगम, ३ स्त्री पुरुषने उभा रहेवानी वे दिशा, ४ जघन्य अध्यम, उत्कृष्ट त्रण अवग्रह, ५ त्रण प्रकारनुं चैत्यवंदन, ६ पाच अगे प्रणिपात, ७ नमस्कार, ८ नवकार प्रमुख नव सूत्रना सोलसोने सुम्तालीश अक्षर--॥ २ ॥

इगसीइसयं तु पया, सगनउइसंपयाउ पणदम्ा ॥
वारअहिगार चउवं--दणिज्जसरणिज्जचउहजिणा ॥३॥

शब्दार्थ--वली ए नवकार प्रमुख नव सूत्रना एकसोने एकासी पद, १० ए नवसूत्रनी सत्ताणु सपदा, ११ नमुत्थुणादि पाच दड, १२ वार अधिकार, १३ वादवायोग्य, १४ शरण करवा योग्य, १५ नामस्थापनादिक चार प्रकारना जिन--॥३॥

चउरो थुइ निमित्तठ—बारहहेउअ सोलआगारा ॥
गुणवीसदोसउस्स—ग्गमाणथुत्तं च सगवेला ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—१६ चार प्रकारनी स्तुति, १७ पापक्षपणादिक आठ निमित्त, १८ फल साधवाना बार हेतु अने १९ अपवादथी सोल आगार, २० काउस्सग्गमां उगणीश दोष, २१ काउस्सग्गनुं प्रमाण, २२ वीतरागनीस्तुति अने २३ दररोज सात वखत चैत्यवंदन

दसआसायणचाउ, सव्वे चिइवंदणाइं ठाणाइं ॥
चउवीसदुवारेहिं, दुसहस्सा हुंति चउसयरा ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—२४ देरामां चैत्यवंदन वखते तांबुल प्रमुख दश आशातनानो त्याग. आ उपर चारे गाथामां कहेला चोवीश द्वारे करीने सर्वे मली चैत्यवंदननां स्थानको बे हजार अने चुमो तेर थाय छे. ॥ ५ ॥

हवे दश त्रिकनां नाम कहेछे.

तिन्नि निसिहि तिन्निउ, पयाहिणा तिन्नि चेव य पणामा
तिविहा पूया य तहा, अवठतियभावणं चेव ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—१ त्रण निसिही, २ त्रण प्रदक्षिणा अने ३ त्रण प्रणाम, ४ त्रण प्रकारी पूजा, वली तेमज ५ त्रण अवस्थानुं भाववुं-

तिदिसिनिरक्खणविरई, पयभूमिपमज्जणं च तिक्खुत्तो ॥
वन्नाइतियं मुद्दा—तियं च तिविहं च पणिहाणं ॥७॥

शब्दार्थ—६ त्रण दिशामां जोवानुं विरमण अने ७ त्रणवार पग मूकवानी भूमिनुं प्रमार्जन, ८ वर्णादिकनुं आलंबन, ९ वली त्रण मुद्रा अने १० त्रण प्रकारनुं प्रणिधान. ए दशत्रिकनां नाम जाणवा. ॥

त्रण निसिही कये कये ठेकाणे कहेवी ते कहेछे.

घरजिणहरजिणपूआ—वावारच्चायउ निसिहितिगं ॥
अग्गद्दारे मज्झे, तइया चिइवंदणासमये ॥ ८ ॥

शव्दार्थ–घर, जिनमंदिर अने जिनपूजाना व्यापारना त्या गथी त्रण निसिहि थायछे तेमा प्रथम जिनमदिरना आगला वा रणामा, गन्नारामा अने चैत्यवंदनने अवसरे एम त्रण निसिहि साचववी ॥ ७ ॥

हवे प्रणाम त्रिक कहेछे

अंजलिवद्धो अद्धो–णउ अ पचगउ अ तिपणामा ॥
सव्वछ वा तिवारं, सिराइनमणे पणामतियं ॥ ए ॥

शव्दार्थ–१अजलीवद्दप्रणाम, २अर्द्धवनत प्रणाम,३ पचाग प्रणाम ए त्रण प्रणाम जाणवा अथवा सर्व प्रणाम करवाने व खते त्रणवार मस्तक नमाववु ए पण त्रण प्रणाम जाणवा ए

हवे पूजा त्रिक कहेछे

अगग्गन्नावन्नेया, पुप्फाहारथुइहि पूयतिगं ॥
पचोवयारा अठो–वयारसव्वोवयारा वा ॥१०॥

शव्दार्थ–पुष्प केशरादिके करीने अगपूजा, फलादि मूकवा थी अग्रपूजा अने स्तुतिथी न्नावपूजा एम त्रण जातनी पूजा थायछे अथवा पचोपचार पूजा, अष्टोपचार पूजा अने सर्वोपचार पूजा ए पूजात्रिक थायछे ॥ १० ॥

हवे अवस्था त्रिक कहेछे

न्नाविज्ज अवछतियं, पिम्छपयछरूवरहियत्तं ॥
छउमछकेवलित्तं, सिद्धत्त चेव तस्सछो ॥ ११ ॥

शव्दार्थ–हे न्नव्यजीव! तु न्नगवतनी पिम्रुस्थादि त्रण अव स्था न्नाव्य तेमा पिम्रुस्थावस्थाने छद्मस्थावस्थाये, पदस्थावस्था ने केवलीज्ञानावस्थाये अने रूपरहितावस्थाने सिद्धावस्थाये न्नाववी, एज निश्चे ते पिंडस्थावस्थानो अर्थछे ॥ ११ ॥

ए त्रण अवस्था क्यां भाववी तेनां नाम कहेछे

एह्वणाचगेहिं ठउम—ब्वत्न पमिहारगेहिं केवलियं ॥
पलियं कुस्सग्गेहि य, जिणस्स ज्ञाविज्ज सिद्धत्तं ॥१२॥

शब्दार्थ—जिनराजनी न्हवण, पखाल अने पूजाये करीने ठद्मस्थावस्था ज्ञाववी; आठ प्रातिहार्ये करीने केवली अवस्था ज्ञाववी अने पलोंठीवालीने काउस्सग्गने आकारे करीने सिद्धावस्था ज्ञाववी. ॥ १२ ॥

हवे छ दिशामां जोवाथी निवर्तवानुं त्रिक कहेछे.

उड्ढाहोतिरियाणं, तिदिसाणनिरक्कणं चइज्जहवा ॥
पञ्चिमदाहिणवामण, जिणमुहन्नदिठिजुत्त ॥१३॥

शब्दार्थ—उंचे, नीचे अने आडुं अवलुं ए त्रण दिशाए जोवुं त्यजी देवुं. अथवा पोतानी पाठल, जमणीवाजु अने डावीवाजुं जोवुं त्यजी दइ फक्त जिनेश्वरनां मुखने विषे दृष्टि राखवी. १३

हवे आलंबन अने मुद्रा त्रिक कहेछे.

वन्नतियं वन्नत्था—लंवणमालंवणं तु पमिमाई ॥
जोगजिणमुत्तिसुत्ती—मुद्दाञ्जेएणं मुद्दतियं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—वर्णलंवन, अर्थालंवन, अने प्रतिमालंवन ए त्रण वर्णत्रिक जाणवा. तेमां प्रतिमादिक शब्दथी ज्ञाव अरिहंतादिनुं तथा स्थापनादिकनुं ग्रहण करवुं. वली योगमुद्रा, जिनमुद्रा अने मुक्तासुक्तिमुद्रा एवा मुद्राना ज्ञेदथी मुद्रात्रिक जाणवुं. १४

प्रथम योगमुद्रानुं स्वरूप कहे छे.

अन्नुन्नंतरिअंगुलि—कोसागारेहिं दोहिं हत्थेहिं ॥
पिट्टोवरि कुप्परसं—ठिएहिं तह जोगमुद्दत्ति ॥१५॥

शब्दार्थ—परस्पर वन्ने हाथनी दसे आंगुली अंतरित करेला कमलना डोमाना आकारवाला तेमज पेटनी उपर वन्ने कोणीउ मूकेली एवा वे हाथ करीने रहेवुं. ते जोगमुद्रा कहेवाय ठे. १५

हवे जिनमुद्रानु लक्षण कहे छे

चत्तारि अंगुलाइं, पुरउ ऊणाइं जच्छ पच्छिमउ ॥
पायाणं उस्सग्गो, एसा पुण होइ जिणमुदा ॥१६॥

शब्दार्थ—वली जेमा पगना आगला पहोचाने परस्पर चार आगलनो आतरो राखीने अने पाछली पानीनो बाजुनो काइ ठंगो आतरो राखीने जे काउस्सग्ग करवो ए जिनमुद्रा होयछे.

हवे मुक्ता शुक्ति मुद्रा कहेछे

मुत्तासुत्तीमुद्दा, जच्छ सुमा दोवि गच्छिआ हच्छा ॥
ते पुण निलाडदेसे, लग्गा अन्ने अलग्गति ॥१७॥

शब्दार्थ—जेमा बन्ने पण हाथ सरखी रीते गर्भित राखी अने ते बन्ने हाथ ललाटना मध्ये लगाड्या होय (अहि कोइ आचार्यने मते) न लगाड्या होय तोपण मुक्ताशुक्तिमुद्रा कहेवाय छे

हवे कइ मुद्राये कइ क्रिया करवी ते कहे छे

पंचंगो पणिवाउ, थयपाठो होइ जोगमुद्दाए ॥
वंदण जिणमुदाए, पणिहाणं मुत्तिमुदाए ॥१८॥

शब्दार्थ—जोगमुद्राये करीने पचाग प्रणिपात अने स्तवपाठ थायछे, जिनमुद्राये वदन अने मुक्ताशुक्ति मुद्राये प्रणिधान थायछे

हवे प्रणिधानत्रिकनु स्वरूप कहे छे

पणिहाणतिगं चेइय—मुणिवंदणपच्छणासरूव वा॥
मयवयकाएगत्तं, सेसतियच्छो उ पयडुत्ति ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—चैत्यवदन, मुनिवदन अने प्रार्थनास्वरूप ए त्रण प्रणिधानत्रिक जाणवु अथवा मन, वचन अने कायानुं एकाग्रपणु करवु ते पण प्रणिधानत्रिक कहेवाय बाकी बीजा अने सातमा त्रिकनो अर्थ तो प्रगटज छे ॥१९॥

हवे बीजुं पांच प्रकारनुं अभिगमद्वार कहे छे.

सचित्तदव्वमुज्झण—मचित्त मणुज्झणं मणेगत्तं ॥
एगसाडिउत्तरासं—ग अंजलि सिरसि जिणदिट्ठे २०

शब्दार्थ—१ सचित्त द्रव्यनो त्याग, २ अचित्त वस्तुने न तजवानी अनुज्ञा, ३ मननुं एकाग्रपणुं, ४ एकसाडी उत्तरासंग अने ५ जिनेश्वरनां दर्शन थये माथा उपर अंजलि जोडवी. ए पांच अभिगम जाणवा. ॥ २० ॥

इय पंचविहाभिगमो, अहवा मुच्चंति रायचिन्हाइं ॥
खग्गं छत्तोवाणह, मउडं चमरे अ पंचमए ॥२१॥

शब्दार्थ—ए पूर्वे कहेला पांच प्रकारना अभिगम देवगुरु पासे आवता साचववा. अथवा राजचिन्ह त्यजी देवां. ते राजचिन्ह आ प्रमाणे. १खड्ग, २छत्र, ३मोजडी, ४मुकुट, अने ५चामर.

हवे बे दिशिनुं त्रीजुं अने त्रण अवग्रहनुं चोथुं द्वार कहे छे.

वंदंति जिणे दाहिण—दिसि ठिआ पुरिस वामदिसि नारी
नवकरजहन्नु सट्ठि—करजिट्ठ मज्झुग्गहो सेसो ॥२२॥

शब्दार्थ—जिनेश्वरनी दक्षिण दिशा एटले जमणी बाजुये उभा रहीने पुरुषो वंदना करे अने वामदिशा एटले डाबी बाजुए उभा रहीने स्त्रीयो वंदना करे. प्रभुथी नवहाथ दूर रहेवाथी जघन्य, साठ हाथ रहेवाथी उत्कृष्ट अने नव तथा साठनी अंदर उभा रहेवाथी मध्यम अवग्रह थाय छे. ॥ २२ ॥

हवे चैत्यवंदन करवानुं पांचमुं द्वार कहे छे.

नमुक्कारेण जहन्ना, चिइवंदण मज्झ दंडथुइजुअला ॥
पणदंड थुइचउक्कग—थयपणिहाणेहिं उक्कोसा ॥२३॥

शब्दार्थ—नवकार बोली नमस्कार करवाथी जघन्य, अरिहंत चेइयाणानुं युगल तथा चार स्तुति बोली नमस्कार करवाथी

मध्यम अने पाच नमुत्थुणरूप दण्डक तथा आठ स्तुतिना स्तवन अने त्रण प्रणिधाने करीने उत्कृष्ट चैत्यवदना जाणवी. २३

अन्ने विति गेणं, सक्कत्थएणं जहन्नवंदणया ॥
तदुगतिगेण मझा, उक्कोसा चउहिं पंचहिं वा ॥२४॥

शब्दार्थ–केटलाक आचार्यों एम कहे छे के, एकवार नमुत्थुण बोलवाथी जघन्य, बे अथवा त्रणवार नमुत्थुण बोलवाथी मध्यम अने चार अथवा पाचवार नमुत्थुण बोलवाथी उत्कृष्ट चैत्यवदन थाय छे

हवे छट्ठु प्रणिपात तथा सातमु नमस्कार द्वार कहे छे

पचंगो पणिवाओ, दोजाणू करदुगुत्तमगं च ॥
सुमहत्थनमुक्कारा, इग दुग तिग जाव अठसयं॥२५॥

शब्दार्थ–बे ढीचण बे हाथ अने मस्तक ए पाच अग पृथ्वी ने अडाडी नमस्कार करवा ते पचाग प्रणिपात कहेवाय तेमज एक, बे, त्रणथी माडी एकसो आठ नवकार कहेवा ते नमस्कार कहेवाय ॥ २५ ॥

हवे अक्षर, पद अने संपदानी सख्याना त्रणद्वार एकठा कहे छे

अडसठि अठवीसा, नवनउयसयं च दुसयसगनउया॥
दोगुणतिस दुसठा, दुसोलअडनउयसयदुवन्नसय २६

शब्दार्थ–१ नवकारना अडसठ, २ इच्छामि खमासमणना अठावीश, ३ इरिया वहियाना एकसोने नवाणु, ४ नमुत्थुणना बसोने सत्ताणु, ५ अरिहत चेइयाणना बसो उगणत्रीस, ६ लोगस्सना बसोने साठ, ७ पुरकरवरदीना बसोने सोल, ८ सिद्धाण बुद्धाणना एकसो अठाणु, ए जावति चेइयाइ, जावति केविसाहु अने जयवियराय ए त्रणना एकसो बावन अक्षर छे सर्व मली १६४७ थायछे

इअ नवकारखमासण–इरियसक्कत्थाइदंडेसु ॥
पणिहाणेसु अ अदुरुत्त–वन्नसोलसयसीयाला॥२७॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे नवकार, खमासमण, इरियावहि, शक्र स्तवादि दंडकमां अने प्रणिधानमां एम सर्व मली फक्त एकवार उच्चार करेला अक्षरो सोलसोने सुडतालो थाय छे. ॥२७॥

नववत्तीसतित्तीसा, तिचत्तअडवीससोलवीसपया ॥
मंगलइरियासक्क—थयाइसु इगसीइसयं तु पदा ॥२८॥

शब्दार्थ—नवकार, इरियावहि अने नमुत्थुणादि सात पदमां नव, बत्रीश, तेत्रीश, तेंतालीश, अठावीश, सोल अने वीश एटला पदो होय छे. सर्व मलीने एकसो एकाशी पद थाय छे. २८

अठ ठ नव ठ य अ—ठवीस सोलस य वीस वीसामा ॥
कमसो मंगलइरिया—सक्कथयाईसु सगनउई ॥२९॥

शब्दार्थ—नवकार, इरियावहि अने नमुत्थुणादिक सात सूत्र मां अनुक्रमे आठ, आठ, नव, आठ, अठावीस, सोल अने वीश एटला विसामा एटले संपदा होय छे. सर्व मलीने सत्ताणुं थाय.

तेज वातने फरीथी कहे छे.

वण्णठसठि नवपय, नवकारे अठसंपया तत्थ ॥
सयसंपय पयतुल्ला, सत्तरक्खरअठमी दुपया ॥३०॥

शब्दार्थ—नवकारमां अडसठ अक्षर, नव पद तथा आठ संपदा होय छे. तेमां सात संपदा तो सात पदनी छे अने सत्तर अक्षरनी आठमी संपदा छेल्ला बे पदनी छे. ॥ ३० ॥

पणिवायअक्खराइं, अठावीसं तहा य इरियाए ॥
नवनउयमक्खरसयं, दुतीसपय संपया अठ ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ—इच्छामिखमासमणनां अक्षर अठावीश तेमज इरियावहिनां एकसो नवाणुं अक्षर, बत्रीश पद अने आठ संपदा छे

दुगदुगइगचउइगपण—इगारछगइरियसंपयादिपया ॥
इच्छाइरिगमपाणा—जेमेएगिंदिअभितस्स ॥ ३२ ॥

शव्दार्थ–इरियावहिनी आठ सपदाना अनुक्रमे वे, वे, एक चार, एक, पाच, अगीयार अने ७ एटला पदो जाणवा अने आदि पद तो इच्छामि, इरियावहियाए, गमणागमणे, पाणक्कमणे, जे मे जीवा, एगिंदिया, अभिहया अने तस्सउत्तरी ए आठ जाणवा

हवे इरियावहिनो आठ सपदानां नाम कहे छे

अप्पुवगमो, निमित्तं, उहेअरहेतुसंगहे पंच ॥
जीवविराहणपडि–क्कमणभेयउ तिन्नि चूलाए ३३

शव्दार्थ–अभ्युपगम, निमित्त, उध, इतरहेतु अने पाचमी संग्रह वली जीव, विराधना अने प्रतिक्रमणएवा भेदथी इरियावहिनी आठ सपदा छे तेमा प्रथमनी पाच मूलसपदा अने पाछलनी त्रण चूलिका सपदा जाणवी ॥ ३३ ॥

हवे नमुत्थुणना प्रत्येक सपदाना पदनी सख्या तथा आदिपद कहे छे

दुतिचउपणपणपणदुच–उतिपदसक्कत्थयसपयाइपया॥
नमुआइगपुरिसोलो–गअभयधम्मप्पजिणसव्वं ॥३४॥

शव्दार्थ–नमुत्थुणनी नवसपदामा अनुक्रमे वे, त्रण, चार, पांच, पाच पाच, वे, चार अने त्रण एटला पदनी सख्या होयछे तेमा दरेकनु आदि पद, नमुत्थुण, आइगराणं, पुरिसुत्तमाण, लोगुत्तमाण, अभयदयाण, धम्मदयाणं, अपडिहयवरनाण, जिणाण, सव्वनूण, सव्वदरिसिणं ए जाणवां ॥ ३४ ॥

हवे नमुत्थुणनी नव सपदाना नाम कहे छे

थोअव्वसंपया उह–इयरहेऊवउगतद्धेऊ ॥
सविसेसुवउगसरूव–हेऊ नियसमफल मुखे॥३५॥

शव्दार्थ–स्तोतव्य सपदा, सामान्य हेतु सपदा, विशेष हेतु सपदा, उपयोग संपदा, तद्हेतु सपदा, सविशेषउपयोगहेतु सपदा, स्वरूपहेतुसपदा, निजसमफलदसपदा अने मोक्षसपदा,

ए नमुत्थुणनी नवसंपदानां नाम कह्यां. ॥ ३५ ॥

हवे नमुत्थुणनां अक्षर, संपदा अने पदनी सर्व संख्या कहे छे.

दोसगनवञ्चा वन्ना, नवसंपय पयतित्तीस सक्कथए ॥
चेइयथयट्ठसंपय, तिचत्तपय वन्नदुसयगुणतीसा ॥३६॥

शब्दार्थ—नमुत्थुणमां सर्व मली बसोने सत्ताणुं अक्षर, नव संपदा अने तेत्रीश पद जाणवा. वली अरिहंत चेइयाणंमां सर्व मली आठ संपदा, त्रेंतालीश पद अने बसोने ओगणत्रीश अक्षर जाणवा.

चैत्यस्तव (अरिहंत चेइयाणंनी) संपदाना पदनी संख्या तथा आदि पद कहेछे.

दुछसगनवतियछचउ—छप्पयचिइसंपयापया पढमा ॥
अरिहंवंदणसिध्धा—अन्नसुहुमएवजाताव ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—आठ संपदामां अनुक्रमे पहेलेथी बे, छ, सात, नव, त्रण, छ, चार अने छ एटलां पदो होय छे. तेमज तेनां अरिहंत चेइयाणं, वंदण वत्तियाए, सध्धाए, अन्नथ्थ ऊससिएणं, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, एवमाइएहिं, जाव अरिहंताणं अने तावकायं. ए नव आदि पदो जाणवां. ॥ ३७ ॥

हवे चैत्यस्तवनो संपदानां नाम कहे छे.

अप्पुवगमो निमित्तं, हेउइगबहुवयंतआगारा ॥
आगंतुगआगारा, उस्सग्गावहिसरूवठ ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ—अभ्युपगम संपदा, निमित्त संपदा. हेतु संपदा, एक वचनांत आगार संपदा, बहु वचनांत आगार संपदा, आगंतुक आगार संपदा, कायोत्सर्गावधि संपदा अने रूप संपदा ए अरिहंत चेइयाणंनी आठ संपदाउ जाणवी. ॥ ३८ ॥

हवे नामस्तवादिकनां पद विगेरेनी संख्या कहे छे.

नामथयाइसु संपय—पयसम अमवीस सोलवीस कमा॥
अडुरुत्तवन्न दोसठ—दुसय सोलठ नउअसयं ॥३९॥

शब्दार्थ–नामस्तवादिकने विषे पद समान अठावीस, सोल अने वीस अनुक्रमे संपदा जाणवी तेमज बीजोवार नहि उचरे ला अक्षरो बसो साठ, बसो सोल अने एकसो अठाणु अनुक्र मे जाणवा ॥ ३९ ॥

पणिहाण डुवन्नसयं, कमेण सगति चउवीस तित्तीसा॥
गुणतीस अठवीसा, चउतीसिगतीस बार गुरुवन्ना ४०

शब्दार्थ–प्रणिधान सूत्रमां एकसो बावन अक्षरो जाणवा हवे नवकारमां सात, खमासमणमां त्रण, इरियावहिमां चोवीस, नमुत्थुणमां तेत्रीस, अरिहंत चेइयाणमां उगणत्रीस, लोगस्समां अठावीश, पुरकरवरमां चोत्रीस, सिद्धाणमां एकत्रीस अने प्रणि धान त्रणमां बार गुरु अक्षर जाणवा ॥ ४० ॥

हवे पांच दंडकनुं अने तेने विषे नेववान्वाना बार अधिकारनुं
११–१२ मुं द्वार कहे छे

पणदंमा सक्कत्थय, चेइअ नामसुअ सिद्धत्थयइत्थ ॥
दो इग दोदो पंच य, अहिगारा बारस कमेण ॥४१॥

शब्दार्थ–शक्रस्तव, चैत्यस्तव, नामस्तव, श्रुतस्तव अने सि द्धस्तव ए पांच दंडक छे तेमां बे, एक, बे, बे अने पांच एम अनु क्रमे सर्व मलीने बार अधिकार छे ॥ ४१ ॥

हवे ए बार अधिकारना प्रथम पद कहे छे

नमु जेअइअ अरिहं, लोग सव्व पुरक तम सिद्ध जोदेवा ॥
उज्जिं चत्ता वेआ, वच्चग अहिगार पढमपया ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ–नमुत्थुण, जे अइआ, अरिहंत चेइयाण, लोगस्स, सव्वलोए, पुरकरवर, तमतिमिर, सिद्धाण बुद्धाण, जो देवा, उज्जित,

---

१ लोगस्स, पुक्खरवरवदी अने सिद्धाण बुद्धाण
२ जावंति चेइआइं, जावंत केविसाहु अने आभवमखंडा सुधी जय वीयराय

चत्तारि अठ,वेयावच्च गराणं, ए बार अधिकारनां प्रथम पद जाणवा.

हवे कया अधिकारे कोने वांदवा ते कहे छे.

पढम अहिगारे वंदे, जावजिणे बीयएउ दव्वजिणे ॥
इगचेइय ठवणजिणे, तइय चउत्थंमि नामजिणे ॥४३॥

शब्दार्थ—प्रथम पदना अधिकारमां भावजिनने, बीजा अधिकारमां द्रव्यजिनने, त्रीजा अधिकारमां एक चैत्य स्थापना जिनने अने चोथा अधिकारमां नामजिनने वांदु छुं. ॥ ४३ ॥

तिहुअणठवणजिणे पुण, पंचमए विहरमाण जिणछट्ठे॥
सत्तमए सुयनाणं, अठमए सव्व सिद्ध थुई ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ—वली पांचमां अधिकारमां त्रण भुवनना स्थापना जिनने, छठा अधिकारमां विचरता जिनने, सातमा अधिकारमां श्रुतज्ञानने अने आठमा अधिकारमां सर्व सिद्धनी स्तुति जाणवी.

तित्थाहिव वीरथुइ, नवमे दसमे य उज्जयंतथुई ॥
अठवयाइ इगदिसि, सुदिठि सुरसमणा चरिमे ॥४५॥

शब्दार्थ—नवमा अधिकारमां तीर्थपति श्री वीरप्रभुनी स्तुति अने दशमा अधिकारमां रेवताचलनी स्तुति जाणवी. तथा अगीयारमा अधिकारमां अष्टापदादिकनी अने छेला अधिकारमां सुदृष्टि देवताना स्मरणरूप स्तुति जाणवी. ॥ ४५ ॥

नव अहिगारा इह ललि-अविछरा वित्तिआइ अणुसारा
तिन्नि सुयपरंपरया, बीयउ दसमो इगारसमो ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ—ए बार अधिकारमां १-३-४-५-६-७-८-९-१२-ए नव अधिकार ललित विस्तार नामना भाष्यनी वृत्ति आदिना अनुसारे जाणवा अने २-१०-११, ए त्रण श्रुतनी परंपराथी जाणवा.

आवस्सय चुन्नीए, जं भणियं सेसया जहिच्छाए ॥
तेणं उज्जंताइवि, अहिगारा सुयमया चेव ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ–जेम आवश्यक सूत्रनो चूर्णीने विषे कह्युं छे ते उ
च्चितादि शेष अधिकार इहा प्रमाणे जाणवा ते कारण माटे उ
च्चिंत सेल इत्यादिक गाथाथी पण ते सर्व अधिकार निश्चे श्रुत
मय जाणवा ॥ ४७ ॥

बीउ सुयत्थयाइ, अत्थउ वन्निउ तहिं चेव ॥
सक्कत्थयंते पढिउ, दव्वारिहवसरि पयमत्थो ॥४८॥

शब्दार्थ–बीजो श्रुतस्तवादि अधिकार अर्थथी श्रुतस्तवमा
ज वर्णव्यो छे वली शक्रस्तवना अंते जे कहेलो छे ते द्रव्य अरिह
तने वांदवाना अवसरे प्रगट अर्थपणे जाणवो ॥ ४८ ॥

असढाइन्नणवज्जं, गीअत्थ अवारिअंति मज्झत्था ॥
आयरणावि हु आणा, ति वयणउ सु बहु मन्नंति॥४९॥

शब्दार्थ–"पापरहित अने गीतार्थोए नहि वारेला एवा मध्य
स्थ पण्डित गीतार्थ पुरुषोए करेली आचरणा पण निश्चे भगवत
नी आज्ञा जाणवी," एवा वचनथी भला पुरुषो ते आचरणाने
बहु माने छे ॥ ४९ ॥

हवे चार वांदवा योग्यनु १३–१४–१५ मु द्वार कहे छे

चउ वंदणिज्ज जिणमुणि, सुयसिद्धा इह सुराइ सरणिज्जा
चउह जिणा नाम ठवणा, दव्वभावजिण भेएणं ॥५०॥

शब्दार्थ–जिन, मुनि, श्रुत अने सिद्ध ए चार वांदवा योग्य छे
अने ए जिनशासनना अधिष्ठायक सम्यक् दृष्टि देवता स्मरण क
रवा योग्य छे वली नाम, स्थापना, द्रव्य अने भाव एवा जिनना
भेदे करीने जिनेश्वरना चार भेद छे ॥ ५० ॥

हवे ए चार प्रकारना जिननु स्वरूप चार निक्षेपाथी कहे छे

नामजिणा जिणनामा, ठवणजिणा पुण जिणदपडिमाउ
दव्वजिणा जिणजीवा, भावजिणा समवसरणत्था ॥५१॥

शब्दार्थ -जिनेश्वरनां नाम ते नामजिन, जिनेश्वरनी प्रतिमा ते स्थापनाजिन, जिन नामकर्म बांधनारा जीवो द्रव्यजीन अने समवसरणमां विराजित थयेला भावजिन जाणवा.

हवे चार स्तुतिनुं १६ मुं द्वार कहे छे.

अहिगयजिण पढमथुई, बीया सव्वाणतइअ नाणस्स॥
वेयावच्च गराण उ, उवउगत्थं चउत्थुई ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ–रूपन्नादि मुख्य आदरेला जिनेश्वरनी प्रथम स्तुति, सर्व जिनेश्वरोनी बीजी स्तुति, ज्ञाननी त्रीजी स्तुति अने शासननी वैयावच्च करनारा सम्यक् द्दष्टि देवोनी उपयोगने अर्थे चोथी स्तुति जाणवी. ॥ ५२ ॥

हवे आठ निमित्तनुं १७ द्वार कहे छे.

पावखवणाढ इरिआइ, वंदणवत्तिआइ छ निमित्ता ॥
पवयणसुरसरणाढं, उसग्गो इअ निमित्तठ ॥ ५३ ॥

शब्दार्थ–पाप खपाववाने अर्थे इरियावहिया पडिकमवी ए प्रथम निमित्त, वंदणवत्तियादि छ निमित्त अने प्रवचनना देवताना स्मरणने अर्थे कायोत्सर्ग ए सर्व मलीने आठ निमित्त थया.

हवे वार हेतुनुं १८ मुं द्वार कहे छे.

चउ तस्स उत्तरीकरण–पमुह सद्धाइआ य पण हेउ॥
वेयावच्चगरताइ, तिन्नि इअ हेउ वारसग्गं ॥ ५४ ॥

शब्दार्थ–ते पापनो नाश करवा माटे उत्तरीकरण विगेरे चार छे अने श्रद्धादिक हेतु पांच छे. वली वैयावच्चगराणं इत्यादि त्रण हेतु छे. ए सर्व मली वार हेतु चैत्यवंदनमां थाय छे. ५४

हवे सोल आगारनुं १९ मुं द्वार कहे छे.

अन्नत्थयाइ वारस, आगरा एवमाइया चउरो ॥
अगणिपणिदि छिंदण, वोही खोभाइ डको य ॥५५॥

शब्दार्थ–अन्नत्थआदि बार आगार अने एवमादिक चार आगार ते चारमा १ *अग्निनो, २ पचेन्द्रिछेदन, ३ बोधि क्षोभादिक अने ४ सर्पदंश विगेरे जाणवा ॥ ५५ ॥

हवे काउसग्गमा त्यजी देवा योग्य १९ दोषना नामनु २० मु द्वार कहे छे

घोडगलय खंभाई, मालुद्धीनिअल सबरिखलिणवहू ॥
लंबुत्तर थणसजइ, भमुहंगुलि वायस कविठे ॥५६॥

शब्दार्थ–अश्व, लता, स्तम्भ, माल, उधि, नियल, शबरि, खलिण, वधू, लंबूत्तर, स्तन, सयति, भमुहंगुली, वायस अने कोठ दोष ॥ ५६ ॥

सिरकंप मूअ वारुणि, पेहत्ति चइज्ज दोस उस्सग्गे ॥
लंबूत्तर थण सजइ, नदोस समणीण सवहुसड्ढीणं ॥५७॥

शब्दार्थ–शिरकंप, मूक, मदीरा अने प्रेष्य ए ओगणीस दोष कायोत्सर्गमा त्यजी देवा, पण लंबूत्तर, स्तन अने सयति ए त्रण दोष साध्वीने न होय वली वधु दोष सहित उपर कहेला त्रण दोष अर्थात् चारे दोष श्राविकाने न होय ॥ ५७ ॥

हवे काउस्सग्गना प्रमाणनु २१ मु तथा स्तवननु २२ मु द्वार कहे छे

इरिउस्सग्गपमाणं, पणवीसुस्सास अठ सेसेसु ॥
गम्भीर महुरसद्दं, महत्थजुत्तं हवइ थुत्तं ॥ ५८ ॥

शब्दार्थ–इरियावहिना काउस्सग्गनु प्रमाण पच्चीश श्वासोश्वासनु जाणवु, बाकीना काउस्सग्गनु आठ श्वासोश्वासनु प्रमाण जाणवु वली मेघनी पेठे गम्भीर, मधुर शब्दवाला तेमज महा अर्थवाला प्रभुना स्तवनो होय छे ॥ ५८ ॥

---

* अग्निना भयथी, पचेंद्रियना छेदनना भयथी, धर्मनो हेलनाथी अने सर्पदंशना भयथी भूमीने पूजतो आघो खसे तो कायोत्सर्ग भागे नहि

हवे एक दिवसमां चैत्यवंदन करवानुं २३ मुं द्वार कहे छे.

पडिक्कमणेचेइयजिमण, चरिमपडिक्कमणसुअणपडिबोहे
चिइवंदण इअ जइणो, सत्तउवेला अहोरत्ते ॥५ए॥

शब्दार्थ—प्रनातना पडिक्कमण वखते, देहरे. नोजन वखते, नोजन कर्या पठी, सांजना पडिक्कमण वखते सूति वखते, पाछली रात्रीये जाग्या पछी. एम रात्री दिवस मली साधुने सात वखते चैत्यवंदन करवुं. ॥ ५ए ॥

पडिक्कमिउ गिहिणोवि हु, सग्गवेला पंचवेल इअरस्स॥
पूआसु तिसंकासु अ, होइ तिवेला जहन्नेणं ॥६०॥

शब्दार्थ—पडिक्कमण करता एवा गृहस्थने पण सात वखत अने न करनाराने पांच वखत चैत्यवंदन करवुं. वली जघन्यथी तो त्रणे संध्याये पूजाना अवसरे त्रण वखत चैत्यवंदन करवुं.

हवे आशातनानां नामनुं २४ मुं द्वार कहे छे.

तंबोल पाण नोयण, वाहण मेहुन्न सुअणनिठवणं ॥
मुत्तुच्चारं जुअं, वज्जे जिणनाह जगईए ॥ ६१ ॥

शब्दार्थ—तंबोल खावुं, पाणी पीवुं, नोजन करवुं, जोडा पेहरवा, कामचेष्टा करवी, शयन करवुं, थुंकवुं, लघुनीति करवी, वडीनीति करवी अने जूवटुं रमवुं, ए दश आशातना जिनमंदिरमां त्यजवी. ॥ ६१ ॥

हवे देव वांदवानो विधि कहे छे.

इरि नमुक्कार नमुत्थुण, अरिहंत थुई लोग सव्व थुइ पुख्ख॥
थुइ सिद्धा वेआ थुइ, नमुत्त जावंति थय जयवी ॥६२॥

शब्दार्थ—इरियावहि, नवकार, नमुत्थुणं, अरिहंत चेइयाणं, कही एक स्तुति केहवी. पछी लोगस्स, सव्वलोए कही स्तुति केहवी. पछी पुख्खरवर अने स्तुति केहवी. पछी सिद्धाणं बुद्धाणं,

वेयावच्चगराण अने स्तुति कहेवी पछी नमुत्थुण, जावंति चेइयाइ अने स्तुति कहीने छेवट जयवीयराय पूर्ण कहेवा ॥ ६२ ॥

हवे समाप्त करता छता फल कहे छे

सव्वोवाहिविसुद्धं, एवं जो वंदए सया देवे ॥
देविंदविंदमहिश्रं, परमपयं पावइ लहुसो ॥६३॥

शब्दार्थ—आ प्रमाणे सर्व उपाधिथी रहित एवो जे माणस निरंतर अरिहंत देवनी वंदना करे छे ते इंद्रोना समूहे पूजेला परमपदने तुरत पामे छे ॥ ६३ ॥

गुरुवंदन भाष्य

हवे ते गाथाथी त्रण प्रकारना गुरुवंदनना नाम अने तेमा त्रे प्रकारना वंदननु स्वरूप कहे छे

गुरुवंदण मह तिविहं, त फिट्टा थोभ्र बारसावत्तं ॥
सिर नमणाइसु पढमं, पुण खमासमण दुगि बीअं ॥१॥

शब्दार्थ—हवे गुरुवंदन त्रण प्रकारे छे ते फेटा वंदन, थोभ वंदन अने द्वादशावर्त्त वंदन. तेमा मस्तकने नमाववादिकथी पहेलु अने बे खमासमण देवाथी बीजु वंदन थाय छे ॥ १ ॥

जह दूत्र रायाणं, नमित्र कज्जं निवेइउं पच्छा ॥
वीसज्जिअवि वंदिअ, गच्छइ एमेव इत्थदुगं ॥ २ ॥

शब्दार्थ—जेम दूत प्रथम राजाने नमस्कार करीने पछी कार्य निवेदन करे छे अने राजाए रजा आपवाथी ते दूत फरी नमस्कार करी जाय छे तेम आ देववंदनमा पण बेवार वंदना जाणवी

हवे वंदन करवानु कारण कहे छे

आयारस्सउ मूलं. विणउ सो गुणवउ अ पडिवत्ती ॥
सा य विहिवंदणाउ, विही इमो बारसावत्ते ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—आचारनुं मूल विनय छे अने ते विनय गुणवंती सेवा रूप जाणवो. वली ते सेवा विधिवंदनाथी थाय छे. ते विधि आ आगल द्वादशावर्त्त वंदनने विषे कहेशे. ॥ ३ ॥

हवे त्रीजुं द्वादशावर्त्त वंदन कहे छे.

तइयं तु छंदण दुगे, तच्छमिहो आइमं सयलसंघे ॥
बीयं तु दंसणीण य, पयठ्ठिआणं च तइयं तु ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—त्रीजुं द्वादशावर्त्त वंदन तो बे वांदणा देवाथी थाय छे. ते पूर्वे कहेला त्रण वंदनमां पहेलुं फेटावंदन चतुर्विध संघे परस्पर तेवा तेवा अवसरे करी शकाय अने बीजुं थोभवंदन गुणवंत मुनिने कराय अने त्रीजुं द्वादशावर्त्त वंदन तो आचार्य पदने विषे रहेला मुनिने कराय. ॥ ४ ॥

हवे ए वंदणानां पांच नाम कहे छे.

वंदन चिइ किइकम्मं, पूआकम्मं च विणयकम्मं च ॥
कायव्वं कस्स व के-णवावि काहेव कइखुत्तो ॥५॥

शब्दार्थ—वंदनकर्म, चित्तिकर्म, कृतिकर्म, पूजाकर्म अने विनयकर्म. ए पांच प्रकारे वंदन करवुं ते कोने? अने कोणे करवुं? वली क्यारे अने केटलीवार? ॥ ५ ॥

कइउणयं कइसिरं, कइहिं व आवस्सएहिं परिसुद्धं ॥
कइदोसविप्पमुक्कं, किइकम्मं कीस कीरईवा ॥६॥

शब्दार्थ—केटलीवार नमवुं? केटलीवार मस्तक नमाववुं? वली केटला आवश्यके करी शुद्ध थवुं? केटला दोषथी मुक्त थवुं? अने कृतिकर्म शा माटे करवुं? ॥ ६ ॥

हवे त्रण गाथाथी वांदणाना बावीस द्वार कहे छे.

पणनाम पणाहरणा, अजुग्गपण जुग्गपण चउअदाया
चउदाय पणनिसेहा, चउअणिसेह छ कारणया ॥७॥

शब्दार्थ—१ वंदणाना पाच नाम, २ पाच उदाहरण, ३ पास त्थादि पाच अयोग्य, ४ आचार्यादि पाच योग्य, ५ चार वांदणां देवराववाने अयोग्य, ६ चार देवराववाने योग्य, ७ पांच स्थानके वांदणानो निषेध, ८ चार स्थानके वांदणानो अनिषेध, ए वांद णाना आठ कारण—॥ ७ ॥

आवस्सय मुहणंतय, तणुपेह पणिस दोस बत्तीसा ॥
ठ गुण गुरुठवण ज्ञुग्गह, ज्ञठवीसरकर गुरुपणीसा ॥८॥

शब्दार्थ—१० आवश्यक, ११ मुहपत्तिनी पडिलेहणा, १२ शरीरनी पडिलेहणा, ए त्रण पच्चीश पच्चीश करवा- १३ बत्रीस दोषनो निषेध, १४ ठ गुणनु उपजवु, १५ गुरु स्थापना, १६ बे अवग्रह अने १७ बसो ठवीस अक्षरमा पच्चीस गुरु वर्ण—॥८॥

पय अमवन्न ठ गणा, ठ गुरु वयणा आसायणतित्तीसं
ज्ञविहि ज्ञवीसदारेहिं, चउसया बाणउइठाणा ॥ए॥

शब्दार्थ—१८ अठावन पद, १ए ठ स्थानक, २० ठ गुरुवचन, २१ तेत्रीस आशातना अने २२ बे प्रकारनो विधि ए सर्व मलीने चारसो बाणु स्थानक ठे ॥ ए ॥

हवे पाच नामनु १ लु द्वार कहे छे

वंदणय चिइकम्म, किइकम्म विणयकम्मपूअकम्मं ॥
गुरुवंदणपणनामा, दव्वे ज्ञावे ज्ञहोहेण ॥ १० ॥

शब्दार्थ—१ वंदनकर्म, २ चितिकर्म, ३ कृतिकर्म, ४ पूजा कर्म अने ५ विनयकर्म गुरुवंदनना आ पाच नाम, द्रव्य अने ज्ञा व एम बे प्रकारना सामान्यथी जाणवा ॥१०॥ द्वा १

हवे पाच दृष्टांतनु २ जु द्वार कहे ठे

सीयलय खुड्डए वी—र कन्ह सेवगज्ञ पालए संबे ॥
पंचे ए दिठंता, किइकम्मे दव्वज्ञावेहिं ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—वंदनकर्म उपर शीतलाचार्यनो, चितिकर्म उपर क्षुल्लकाचार्यनो, कृतिकर्म उपर वीरा शालवीनो अने कृष्णनो, पूजाकर्म उपर राजाना बे सेवकनो अने विनयकर्म उपर पालक तथा शांबनो दृष्टांत जाणवो. आ पांच दृष्टांत कृतिकर्म उपर द्रव्य अने भावथी जाणवा. ॥ ११ ॥ द्वा. २

हवे पांच न वांदवा योग्यनुं ३ जुं द्वार कहे छे.

पासत्थो उसन्नो, कुसील संसत्तउ अहाछंदो ॥
दुग दुगति दुगणेगविहा, अवंदणिज्जा जिणमयंमि ॥१२॥

शब्दार्थ—पासत्थो, उसन्नो, कुसीलीयो, संसक्तो अने यथा छंदो ए पांचेना अनुक्रमे बे, बे, त्रण, बे अने अनेक भेदो छे. जिन मतमां ते पांच अवंदनीय जाणवा. ॥१२॥ द्वा. ३

हवे पांच वांदवाने योग्यनुं ४ थुं द्वार कहे छे.

आयरिय उवज्झाए, पवत्तिथेरे तहेव रायणिए ॥
किइकम्मनिज्जरठा, कायव्व मिमेसि पंचन्हं ॥१३॥

शब्दार्थ—आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्त्तक, स्थविर अने तेमज रत्नाधिप. निर्जराने अर्थे ए पांचेने कृतिकर्म वंदन करवुं.

हवे चार पांसे वंदणा न कराववी अने चार पासे कराववो तेनुं ५–६ द्वार कहे छे.

माय पिअ जिठभाया, अजमावि तहेव सव्व रायणिए ॥
किइकम्म न कारिज्जा, चउसमणाई कुणंति पुणो ॥१४॥

शब्दार्थ—माता, पिता, म्होटो भाइ तेमज वयथी न्हाना पण ज्ञानादिकथी मोटा. ए चार पासे वांदणां देवराववानुं न करवुं. वली चार श्रमण वांदणा आपे. ॥१४॥ द्वा. ५–६

हवे पांच स्थाने वांदणा न देवानुं ७मुं द्वार कहे छे.

---

१ साधु, साध्वी, श्रावक श्राविका.

विक्खित्त पराहुत्ते, पमत्ते मा कयाइ वंदिज्जा ॥
आहार नीहारं, कुणमाणे काउ कामे अ ॥१५॥

शब्दार्थ—गुरु व्यग्र चित्तवाला, बीजी बाजु मुख करी बेठेला, क्रोधवाला अथवा सुतेला, तेमज आहार अने नीहार करता होय अथवा करवानी इच्छा करता होय तो न वांदवा १५

हवे चार स्थानके वांदणा देवानु ८मु द्वार कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

पसंते आसणत्थे अ, उवसंते उवट्ठिए ॥
अणुन्नवि तु मेहावी, किइकम्मं पउंजइ ॥१६॥

शब्दार्थ—शांत चित्तवाला, आसन उपर बेठेला, क्रोधादि रहित अने छंदेण इत्यादि कहेवा तैयार होय एवा गुरुने बुद्धिमान पुरुषोए आज्ञा मागवा पूर्वक वंदणा करवी ॥१६॥ द्वा ८

हवे आठ कारणे वांदणा देवानु ९ मु द्वार कहे छे

पडिक्कमणे सज्झाए, काउस्सग्गे वराह पाहुणए ॥
आलोयण संवरणे, उत्तमट्ठे य वंदणय ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—प्रतिक्रमणमा, स्वाध्यायमा, कायोत्सर्गमा अने अपराध खमाववामा वांदणा देवा वली नवा आवेला साधुने, आलोचनामां अने मासखमणादि तपरूप संवरमा तथा अंतसंलेखना करता एम आठ कारणे वांदणा देवा ॥ १७ ॥

हवे पचीस आवश्यकनु १० मु द्वार कहे छे,

दोवणय महाजाय, आवत्ता बार चउसिर ति गुत्त ॥
दुपवेसिग निक्खमणं, पणवीसावसय किइकम्मे ॥१८॥

शब्दार्थ—बेवार अवनत, एकवार यथाजात, बारवार आवर्त, चारवार शिरनु अवनत, त्रण गुप्ति, बेवार अवग्रहमा प्रवेश करवो अने एकवार निकलवुं ए पचीस आवश्यक वांदणामां

होय छे. ॥ १८ ॥ द्वा. ९

किइकम्मंपि कुणंतो, न होइ किइकम्मनिज्जरा भागी ॥
पणवीसामन्नयरं, साहुठाणं विराहंतो ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—ए पच्चीस आवश्यकमांना एकनी पण विराधना करतो एवो साधु, कृतिकर्म करतो छतो पण ते कृतिकर्मनी निर्ज्जरानो भागी थतो नथी. ॥ १९ ॥ द्वा. १० ॥

हवे मुहपत्तिनी पच्चीस पडिलेहणानुं ११ मुं द्वार कहे छे.

दिठिपडिलेहण एगा, छ उड्ढपप्फोड तिगतिगंतरिया ॥
अक्खोड पमज्जणया, नव नव मुहपत्ति पणवीसा॥२०॥

शब्दार्थ—एक दृष्टि पडिलेहन; छ उंचा पखोडा, त्रण अखोडा, त्रण प्रमार्जना. ए छेला वे त्रणने त्रणवार अंतरित करता एक एकना नव नव भेद थाय. सर्व मली मुहपत्तिनी पच्चीस पडिलेहणा थइ. ॥ २० ॥ द्वा. ११

हवे शरीरनी पच्चीस पडिलेहणानुं १२ मुं द्वार कहे छे.

पायाहिणेण तिअ तिअ, वामेअर बाहुसीसमुह हियए॥
अंसुड्ढाहो पिठ्ठे, चउ छप्पय देह पणवीसा ॥२१॥

शब्दार्थ—प्रदक्षिणाये करीने डावी अने जमणी बाहुये, मस्तके, मुखे अने हृदये. ए पांच ठेकाणे त्रण त्रणवार; बे खभानी उपर अने नीचे, तेमज बे पीठ उपर अने छ वन्ने पग उपर एम सर्व मली शरीरनी पच्चीश पडिलेहणा थाय. ॥ २१ ॥

आवस्सएसु जहजह, कुणइ पयत्तं अहीण मइरित्तं ॥
तिविहकरणो वउत्तो, तहतह से निज्जरा होइ ॥२२॥

शब्दार्थ—आवश्यक पडिलेहणामां जेम जेम प्रयत्नथी उंगे अधिक न थयो छतो मन, वचन अने कायाये उपयोग राखो करे

तेम तेम ते करनारने निर्जरा थाय छे ॥२२॥ द्वा २२

हवे चार गाथाथी बत्रीस दोष त्यजवानु १३ द्वार कहे छे

दोस अणाढिअ थद्धिअ–पविद्ध परिपिंडिअं च ढोलगइ
अंकुस कच्छभ रिंगिअ. मच्छुवत्तं मणपउट्ठं ॥२३॥

शब्दार्थ–१ आदर रहित वा दे, २ मद सहित वा दे, ३ आघो पाछो फरतो वा दे, ४ सर्वने भेगा वा दे, ५ कुदतो वा दे, ६ रजो हरणने बे हाथे झालीने वा दे ७ काचवानी पेठे रिंगतो वा दे, ८ एकने वादतो बीजाने वादे, ९ मनमा खेद पामतो वा दे. ॥२३॥

वेइयबद्ध भयतं, भय गारव मित्त कारणा तिन्न ॥
पडिणीयरुठ तजिअ,सढहीलिअ विपलिय चिअत्तं२४

शब्दार्थ–१० बे पगमा बे हाथ राखीने वाद, ११ काइ लालच थी वादे, १२ भयथी वादे, १३ गारवथी वादे, १४ मित्र जाणी वा दे, १५ वस्त्रादि मलवानी इच्छाना कारणथी वादे, १६ चोरनी पेठे वादे, १७ आहारादि करतो वादे, १८ क्रोधथी वादे, १९ तर्जना क रतो वादे, २० कपटथी वादे, २१ अपमान करतो वादे, २२ विक था करतो वा दे. ॥ २४ ॥

दिठमदिठ सिंगं, कर तमोअण अणिद्धणालिद्ध ॥
ऊणं उत्तर चूलिअ, मूअं ढढ्ढर चूडलिअ च ॥२५॥

शब्दार्थ–२३ दिठु अणदिठु वा दे, २४ मस्तकने एक देशे वा दे, २५ राजवेठनो पेठे वा दे, २६ वाद्या विना छुटको नथी एम जाणी वा दे, २७ मस्तके हाथ लगाडतो न लगाडतो वा दे, २८ अक्षरादि उंगा केहतो वा दे, २९ पाछलना शब्दो उतावला बोले, ३० मूगानी पेठे वा दे, ३१ उंचास्वरे वा दे, ३२ रजोहरण भमा डतो वा दे ॥ २५ ॥

बत्तीस दोसपरिसुद्धं, किइकम्मं जो पउंजइ गुरूणं ॥
सो पावइ निव्वाणं, अचिरेण विमानवासं वा ॥२६॥

शब्दार्थ—जे माणस ए उपर कहेला बत्रीस दोष रहित गुरुने वांदणा करे छे ते थोडा कालमां मोक्षने अथवा तो देवपदने पामे छे. ॥ २६ ॥ द्वा. १३

हवे छ गुण उपजवानुं १४ मुं द्वार कहे छे.

इह छच्च गुणा विणउ—वयारमाणाइभंग गुरुपूआ ॥
तित्थयराण य आणा, सुअधम्माराहणा किरिया २७

शब्दार्थ—ए वांदणामां छ गुणो उपजे छे. तेमां १ विनयनो उपचार, २ मानादिकनो नाश, ३ गुरुपूजा, ४ तीर्थंकरनी आज्ञा, ५ श्रुतधर्मनी आराधना अने ६ मोक्ष. ए छ गुण उपजे. २७

हवे गुरु थापनानुं १५ मुं द्वार कहे छे.

गुरुगुणजुत्तं तु गुरुं, ठाविज्जा अहव तत्थ अक्खाइ ॥
अहवा नाणाइतियं, ठविज्ज सक्खं गुरुअभावे ॥२८॥

शब्दार्थ—म्होटा गुणे करीने युक्त एवा गुरुने स्थापन करवा. अथवा साक्षात् गुरुनो अभाव होय तो तेमने ठेकाणे थापनाचार्य स्थापन करवा. कदापि स्थापनाचार्य पण न होय तो ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनां पुस्तकादि उपकरण स्थापवां. २८

अक्खे वराडए वा, कट्ठे पुत्थे अचित्तकम्मे अ ॥
सब्भावमसब्भावं, गुरुठवणा इत्तरावकहा ॥ २९ ॥

शब्दार्थ—अक्ष, (स्थापनाचार्य) कोडा, डांडा, पुस्तक अथवा गुरुमूर्तिनी स्थापना करवी. स्थापना बे प्रकारनी छे. एक सद्भाव अने बीजी असद्भाव. गुरुस्थापना पण बे भेदे छे. तेमां एक इत्वर एटले पुस्तक आदि थोडा कालनी अने बीजी यावत्कथिका एटले मूर्ति विगेरे बहुकालनी. ॥ २९ ॥

गुरुविरहंमि ठवणा, गुरुवएसोव दंसणठं च ॥
जिणविरहंमि जिण वि–ब सेवणामंतणं सहलं ॥३०॥

शब्दार्थ–गुरुनो अभाव होय त्यारे गुरुनो उपदेश देखाम्वा माटे स्थापना छे जेम हवणा जिनेश्वरनो विरह छता जिनबिंबनी सेवना करी आमत्रण करवु ते सफल छे ॥ ३० ॥

हवे बे प्रकारना अवग्रहनु १६ मु द्वार कहे छे

चउदिसि गुरुग्गहो इह, अहुठ तेरस करे सपरपेक्ष ॥
अणणुन्नायस्स सया, न कप्पए तत्र पविसेउ ॥३१॥

शब्दार्थ–आ जिनशासनमां गुरुथी अवग्रह चारे दिशामा पुरुष पुरुषने अने पुरुष स्त्रीने साडा त्रण हाथ अने तेर हाथ जाणवो ते अवग्रहमा प्रवेश करवाने आज्ञाविना क्यारे पण न कल्पे.

हवे अक्षर सख्यानु १७ मु द्वार तथा पद सख्यानु १८मु द्वार कहे छे

पण तिग वारस दुगतिग, चउरो छठाण पय इगुणतीसं॥
गुणतीससेस आव–स्सयाइ सवपय अडवन्ना ॥३२॥

शब्दार्थ–(प्रथम वदनक सूत्रना अक्षर २२६ छे तेमा लघु अक्षर बसो एक अने गुरु अक्षर पच्चीस छे) पाच, त्रण, बार, बे, त्रण अने चार एम छ स्थानकमा ओगणत्रीस पद छे बाकीना ओगणत्रीस पद आवस्सियाएथी जाणवा सर्व मली अठावन पद थाय छे

हवे वादणा आपनारना छ स्थानकु १९मु द्वार कहे छे

इछायअणुन्नवणा, अवावाहं च जत्त जवणाय ॥
अवराहखामणाविय, वंदणदायस्स छठाणा ॥३३॥

शब्दार्थ–इच्छामि आदिमा पाच, अणुजाणहादिमा त्रण, अव्याबाध पूछवा माटे निसीहियादिमा चार, जताभे एमा बे,

---

१ साधु साधुने साडा त्रण हाथ, साधु श्रावकने साडा त्रण हाथ, साधु साध्वीने तेर हाथ, साधु श्राविकाने पण तेर हाथ

जवणिजंचन्ने एमां त्रण, अपराध खमाववा माटे खामेमि एमां चार. ए वांदणा करनारना ठ स्थानक जाणवा. ॥ ३३ ॥

हवे छ गुरु वचननुं २०मुं द्वार कहे छे

छंदेणाणुजाणामि, तहत्ति तुप्भंपि वट्टए एवं ॥
अहमवि खामेमि तुमं, वयणाइं वंदणरिहस्स ॥३४॥

शब्दार्थ—छंदेण, अणुजाणामि, तहत्ति, तुप्भंपिवट्टए, एवं, अहमवि खामेमि तुमं. ए ठ वचन वांदणा देवा योग्य गुरुनां जाणवां.

हवे तेत्रीस आशातनानुं २१मुं द्वार कहे छे.

पुरउ पक्खासन्ने, गंता चिठ्ठण निसिअणाय मणे ॥
आलोयण पम्सिुणणे, पुव्वालवणे अ आलोए ॥३५॥

शब्दार्थ—१ गुरुनो आगल चाले, २ पडखे चाले, ३ पठवाडे अडकतो चाले, वली एवी त्रण आशातना गुरुनी, तेटली नूमि न्ना गे नन्ना रहेवाथी थाय अने बेसवाथी पण थाय एम ए आशातना जाणवी, १० थंडिले प्रथम पाणी ले, ११ गमणागमण पहेलुं आलोवे, १२ बोलाव्या ठता न बोले, १३ कोइने गुरुनी पहेला बोलावे, १४ गुरु ठता बीजा पासे न्निक्षादि आहार आलोवे. ॥ ३५ ॥

तह उवदंस निमित्तण, खद्धा ययणे तहा अपम्सिुणणे
खद्धत्ति य तछगए, किं तुम तज्जाय नो सुमणे ॥३६॥

शब्दार्थ—१५ आहारादि बीजाने देखाडे, १६ बीजा साधुने प्रथम बोलावीने पठी गुरुने बोलावे, १७ गुरु विना बीजाने मिष्ट खवरावे, १८ पोते मिष्ट खाय, तेमज १९ गुरु बोलावे ठता, न सांन्नले, २० गुरुने कठण वचन बोले, २१ पोताने संथारे बेठो उत्तर आपे, २२ शुं कहो ठो? एम कहे, २३ तमे करो, एम कहे, २४ तिरस्कार करे, २५ गुरुनो धर्मोपदेश सांन्नली हर्षित मनवालो न थाय. ॥ ३६ ॥

नो सरसि कहं छिता, परिसन्तित्ता अणुच्चियाइ कहे॥
संथार पाय घट्टण, चिठुच समासणे आवि ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—२६ तमने नथी सान्नरतुं? एम कहे, २७ कथा नो छेद करे, २८ सन्नानो ज्ञग करे, २९ गुरुये कहेली वात फरी पोते कहे, ३० गुरुना संथारे पग लगाम्हे, ३१ गुरुनी शय्या संथारा के आसन उपर बेसे, ३२ गुरुथी उंचा आसने बेसे, ३३ गुरुना स मान आसने बेसे ॥ ३७ ॥

हवे वे विधिनु २२मु द्वार कहे छ

इरिया कुसुमिणुस्सग्गो, चिइवंदण पुत्ति वंदणा लोयं॥
वंदण खामण वंदण, संवर चउ छोन्न दु सज्जाउ ॥३८॥

शब्दार्थ—१ इरियावहि, २ कुसुमिण दुसुमिणनो काउस्सग्ग, ३ चैत्यवदन, ४ मुहपत्ति पडिलेहण, ५ वे वांदणा, ६ राइय आलोवे, ७ वे वांदणा, ८ खमासमण, ९ वादणा, १० पच्चरकाण, ११ चार खमासमण अने वे सच्चाय एम अनुक्रमे करे ते प्रन्नात वदन विधि जाणवो ॥ ३८ ॥

इरिया चिइ वंदणपु—त्ति वंदणं चरिमवदणालोयं ॥
वंदणखामणचउछो—न्न दिवसुस्सग्गो दुसज्जाउ॥३९॥

शब्दार्थ—१ इरियावहि, २ चैत्यवदन, ३मुहपत्ति पडिलेहण, ४ वे वादणा, ५ दिवस चरिम पच्चरकाण, ६ वे वादणा, ७ देवसि आलोवे, ८ वे वादणा, ९ देवसि खमावे, १० चार खमासण दइ न्नगवानादि चारने वा दे, ११ देवसिय प्रायश्चित माटे वे लोगस्स नो काउस्सग अने १२ वे सझाय ए सध्यावदन विधि ३९

एय किइकम्मविहिं, जुंजंता चरण करण माउत्ता ॥
साहू खवति कम्मं, अणेगज्ञवसचियमणंत ॥४०॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे वादणानी विधिने करता तेमज चरण

सित्तरी अने करण सित्तरी सहित एवा साधुउ अनेक ज्ञवमां मे लवेलां अनंतां कर्मने खपावे छे. ॥ ४० ॥

अप्पमइज्ञवबोहत्थं, ज्ञासियं विवरियं च जमिह मए ॥
तं सोहंतु गीयत्था, अणज्ञिनिवेसि अमच्छरिणा ॥४१॥

शब्दार्थ–अल्पमति एवा ज्ञव्य जीवोना बोधने अर्थे में अहिं जे कांइ विपरीतपणे कहेलुं होय तेने कदाग्रह रहित अने मत्सर रहित एवा गीतार्थ पुरुषोए सुधारीने लेवुं. ॥ ४१ ॥

॥ इति गुरुवंदन ज्ञाष्य. ॥

॥ अथ पच्चख्खाण भाष्य. ॥

पच्चख्खाणनां ९ द्वार कहे छे.

दस पच्चरकाण चउविहि, आहार दुवीसगार अदुरुत्ता ॥
दस विगइ तीस विगई, गयउहज्ञंग छ सुष्धि फलं ॥१॥

शब्दार्थ–१ दश पच्चरकाण द्वार, २ चार विधि द्वार, ३ आ हार द्वार, ४ बीजीवार न कहेला बावीस आगार द्वार, ५ दश वि गयद्वार, ६ त्रीस निवीयाद्वार, ७ मूल गुण उत्तरनुं ज्ञेदद्वार, ८ छ ज्ञेद शुद्धिनुं द्वार, ९ पच्चरकाण फल द्वार. ॥ १ ॥

हवे उत्तरगुण पच्चख्खाणना दश भेद कहे छे.

अणागय मइक्कंतं, कोमीसहियं नियंटि अणागारं ॥
सागार निरवसेसं, परिमाणकमं संके अध्धा ॥ २ ॥

शब्दार्थ–१ कारणे आगलथी तप करवुं, २ पाछलथी करवुं, ३ एकनी जोमे बीजुं करवुं, ४ धारी राखेला दिवसे करवुं, ५ आ गार रहित करवुं, ६ आगार सहित करवुं, ७ चार आहारादिकनुं करवुं, ८ वस्तु विगेरेनुं परिमाण करवुं, ९ संकेते करवुं अने १० काल पच्चरकाण करवुं. ॥ २ ॥

हवे ऊेला काल पच्चख्खाणना भेद कहे छे.

नवकारसहिय पोरिसि, पुरिमड्ढेगासणेगठाणे अ ॥
आयबिल अप्रत्तठे, चरिमेअ अभिग्गहे विगइ ॥३॥

शब्दार्थ—१ नोकारसीनु, २ पोरसीनु, ३ पुरीमढनु, ४ एकासणानुं, ५ एकलठाणानु, ६ आबीलनु, ७ उपवासनु, ८ दिवस चरिमनु, ९ अभिग्रहनु अने १० विगइनु ए दश काल पच्चख्काण छे

हवे पच्चख्खाण करवानी विधि चार भेदे कहे छे

उग्गएसूरे नमो, पोरिसि पच्चख्क उग्गएसूरे ॥
सूरे उग्गए पुरिमं, अभत्तठं पच्चख्का इति ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—नवकारसीना पच्चख्काणमा " उग्गए सूरे नमोक्कार सहिय " एवो पाठ, पोरसिना पच्चख्काणमा " उग्गए सूरे पोरिसिय " एवो पाठ, पुरिमड्ढना पच्चख्काणमा " सूरे उग्गए पुरिमड्ढ " एवो पाठ, उपवासना पच्चख्काणमा "अभत्तठ पच्चख्काइ" एवो पाठ जाणवो. ॥ ४ ॥

हवे वीजा चार विधि कहे छे

जाणइ गुरु सीसो पुण, पच्चख्कामिति एव वोसिरइ ॥
उवउगित्र पमाणं, न पमाणं वजणच्छलणा ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—प्रथम पच्चख्काण करावनार गुरु " पच्चख्काइ " एम कहे, वली पच्चख्काण करनार शिष्य "पच्चख्कामि" एम कहे, पछी गुरु " वोसिरइ " एम कहे एटले शिष्य " वोसिरामि " एम कहे, आदि धारेलो उपयोगज प्रमाण छे, परतु अक्षरनी स्खलना प्रमाण नथी ॥ ५ ॥

तेज वात विशेष कहे छे

पढमे ठाणे तेरस, वीए तिन्निउ तिगाइ तइआमि ॥
पाणस्स चउत्थमि, देसावगाइ पंचमए ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—पहेला स्थानकमां नवकारादि तेर, बीजा स्थानकमां विगइ विगेरे त्रण, त्रीजा स्थानकमां एकासणादि त्रण, चोथा स्थानकमां पाणस्स लेवेणवादि छ अने पांचमा स्थानकमां देशावकाशादि भेद जाणवा. ॥ ६ ॥

हवे पहेला, बीजा अने त्रीजा स्थानकना जूदा जूदा भेद कहे छे.

नमु पोरिसि सढ्ढा, पुरिम वढ्ढ अंगुठमाइ अडतेर ॥
निवि विगइ अंबियतिय तियदु इगासण एगठाणाइ ७

शब्दार्थ—नमुकारसी, पोरसी, सार्द्धपोरसी, पुरिमढ्ढ,अवढ्ढ अने अंगुष्टसी विगेरे बीजा आठ. ए सर्व मली प्रथम स्थानकना तेर भेद थाय, बीजा स्थानकना निवि, विगइ अने आंबील ए त्रण भेद जाणवा. त्रीजा स्थानकना बेसणुं, एकासणुं अने एकलठाणुं ए त्रण भेद जाणवा. ॥ ७ ॥

हवे उपवासने दिवसे पांच स्थानक करवानुं कहे छे.

पढमंमि चउत्थाई, तेरस बीयंमि तइय पाणस्स ॥
देसवगासं तुरिए, चरिमे जह संभवं नेयं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—पहेले स्थानके चोथ विगेरे, बीजे स्थानके नवकारसी विगेरे तेर, त्रीजा स्थानके पाणीना, चोथे स्थानके देसावगासि अने पांचमे दिवस चरिमादि जेम घटे तेम जाणवुं. ८

तह मझपच्चखाणे—सु नपिहु सूरुग्गयाइ वोसिरइ ॥
करणविहीउ न भन्नइ, जहावसीयाइ बियछंदे ॥९॥

शब्दार्थ—तेमज मध्य पच्चखाणमां "सूरे उग्गे विगइउ" इत्यादि पाठ वारंवार न कहेवो तेमज 'वोसिरे' ए पाठ पण वारंवार न कहेवो, एटला माटे करवानी विधि आचार्योए कही नथी. जेम 'आवस्सियाए' ए पाठ बीजा वांदणामां कहेता नथी तेम.

तह तिविह पच्चक्खाणे, जन्नति अ पाणग ठ आगारा ॥
दुविहाहारे अचित्त-भोयणे तहय फासुजले ॥१०॥

शब्दार्थ-तेमज तिविहारना पच्चक्खाणमा पाणीना ठ आगार कहे छे वली दुविहार पच्चक्खाणमा अचित्त भोजन अने प्रासुक पाणीना ठ आगार कहे छे ॥ १० ॥

इत्तुच्चिय खवणंबिल, निवियाइसु फासुयं चिय जलंतु ॥
सड्ढावि पियति तहा, पच्चक्कंति य तिहाहार ॥ ११ ॥

शब्दार्थ-एटलाज माटे उपवास, आंबिल अने निविआदि कमा श्रावकोए पण साधुनी पेठे निश्चे प्रासुक पाणी पीवु अने तिविहारनुं पच्चक्खाण करवु ॥ ११ ॥

चउहाहार तु नमो, रत्तिपि मुणिण सेसतिहचउहा ॥
निसिपोरिसि पुरिमे-गा सणाइ सढाण दुतिचउहा १२

शब्दार्थ-नोकारसीनु अने रात्रीनु पच्चक्खाण मुनिने चउविहारुज होय तथा बाकीना पोरसी आदि तिविहारां तथा चउविहारा होय वली श्रावकने रात्रीनु, पोरसीनु, पुरिमढ्ढनुं अने एकासणादिकनु पच्चक्खाण दुविहार, तीविहार अने चउविहार होय

हवे चार प्रकारना आहारनु २ जु द्वार कहे छे.

खुहपसमखमेगागी, आहारिव एइ देइ वा साय ॥
खुहिउवि खिवइ कुठे, जं पंकुवमतमाहारो ॥ १३ ॥

शब्दार्थ-भूखने समाववाने समर्थ एवो एकज आहार, आहारमा आवता एवा लवणादी अथवा स्वाद आपनारा हिंग विगेरे, वली जे भूख्यो छतो पण पेटमा नाखे एवो कादवना सरखो ते आहार ॥ १३ ॥

हवे ए आहारना मूल चार भेद कहे छे

असणे मुग्गोयणसत्तु मंड पय खज्ज रब्ब कंदाइ ॥
पाणे कंजिय जव कयर, कक्कोमोदग सुराइजलं ॥१४॥

शब्दार्थ—अशनमां मग, भात, सत्तु, मांडा, दुध, खाजुं, राब अने कंद विगेरे जाणवा. तेमज पानमां कांजी, जवनुं, केरनुं अने काकडीनुं धोवण तथा मदिरादि जल जाणवुं ॥१४॥

खाइमे भत्तोस फलाइ, साइमे सुंठि जीर अजमाइ ॥
महु गुल तंबोलाइ, अणाहारे मोय निंबाई ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—खादिममां शेकेलां धान्य तथा फलादि जाणवां अने स्वादिममां सुंठ, जीरुं, अजमो विगेरे, वली मध, गोल अने नागरवेलना पानादि जाणवुं. तेमज अनाहारने विषे मात्रुं तथा लींबडा प्रमुख जाणवुं ॥ १५ ॥

हवे नवकारसी विगेरेना आगारनी संख्यानुं ४ थुं द्वार कहे छे,

दो नवकार छ पोरिसि, सग पुरिमड्ढ इगासणे अट्ठ ॥
सत्तेगठाण अंबिल, अट्ठ पण चउत्थि छप्पाणे ॥१६॥

शब्दार्थ—नवकारसीमां बे, पोरसीमां छ, पुरिमड्ढमां सात, एकासणामां आठ, एकलठाणामां सात, आंबीलमां आठ, चोथभक्तमां पांच अने पाणस्सना पच्चरकाणमां छ आगार जाणवा.

चउ चरिमे चउभिग्गहि, पण पावरणे नवट्ठ निव्वीए ॥
आगारुक्खित्तविवेग, मुत्तु दवविगइनियमिट्ठ ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—दिवस चरिममां चार, अभिग्रहमां चार, वस्त्र मूकवामां पांच, निवीमां पांच अथवा आठ आगार जाणवा. वली द्रव्य विगइनुं नियम करनारने 'उक्खित्त विवेगं' ए आगारने मूकीने बाकीना आठ आगार जाणवा. ॥ १७ ॥

हवे दरेक पच्चख्खाणना आगारनां नाम कहे छे.

अन्नसहदुनमुक्कारे, अन्न सह पछ दिसय साहु सव्व ॥
पोरिसि छ सढ्ढपोरिसि, पुरिमड्ढे सत्त समहत्तरा ॥१८॥

शब्दार्थ–नमुक्कारसीमा अन्नत्थणाभोगेण, सहस्सागारेण ए बे, तथा पोरसीमा अन्नत्थणाभोगेणं, सहस्सागारेण, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेण, साहुवयणेण, अने सव्वसमाहिवत्तियागारेणं ए छ आगार जाणवा साढ पोरसीमा पण एज छ अने पुरिमढ्ढमा उपरना छ सहित एक महत्तरागारेण ए वधारवो जेथी तेमा सात थाय

इवे एकासणाना तथा एकलठाणाना आगार कहे छे

अन्न सहसागारिय, आउंटण गुरुअ पारिमहसव्व ॥
एगवियासणि अठ्ठ, सग इगठाणे आउंटविणा १९

शब्दार्थ–अन्नत्थणाभोगेण, सहस्सागारेणं, सागारि आगारेणं, आउंटण पसारेण, गुरु अभ्भुठ्ठाणेण, पारिठ्ठावणियागारेण, महत्तरागारेण, सव्वसमाहिवत्तियागारेण ए आठ आगार एकासणामा अने बियासणामा जाणवा. अने तेमाथी एक आउंटण विना सात आगार एकलठाणामा जाणवा ॥१९॥

हवे विगय, नीवी अने आंबीलना आगार कहे छे

अन्नसहलेवागिह, उक्खित पडुच्च पारिमहसव्वे ॥
विगइ निव्विगए नव, पडुच्च विणु अंबिले अठ्ठ २०

शब्दार्थ–अन्नत्थ, सहस्सा, लेवालेवेण, गीहत्थ संसठ्ठेण, उक्खित्त विवेगेण, पडुच्चमक्खिएण, पारिठ्ठा, महत्तरा, सव्वसमाहि ए नव विगइ तथा निविगइने विषे जाणवा अने तेमाथी एक पडुच्चमक्खिएण विना आठ आंबीलना आगार जाणवा ॥२०॥

हवे उपवासना आगार कहे छे

अन्न सह पारि मह सव्व, पंच खवणे छ पाणिलेवाई ॥
चउ चरिम गुठाइ, भग्गहि अन्न सहमह सव्व ॥२१॥

शब्दार्थ—अन्नत्थणा, सहस्सा, पारिठावणिया, महत्तरा, सव्व समाहि. ए पांच आगार उपवासमां; तेमज लेवेणवा विगेरे छ आगार पाणस्सना जाणवा. वली अन्नत्थणा, सहस्सा, महत्तरा, सव्वसमाहि. ए चार आगार दिवस चरिमना पच्चक्खाणमां अने अंगुठ सहियादि अभिग्रहना पच्चक्खाणमां जाणवा. ॥२१॥

दुद्ध महु मज्ज तिल्लं, चउरो दवविगइ चउर पिंडदवा ॥
घय गुल्ल दहियं पिसियं, मक्खण पक्कन्न दो पिंडा ॥२२॥

शब्दार्थ—दुध, मध, मद्य अने तेल ए चार द्रव (ढीली) विगइ छे. वली घी, गोल, दहिं अने मांसपेसी ए चार पिंड तथा द्रव विगइ छे. वलो मांखण अने पक्वान्न ए बे तो पिंडज विगइ छे.

हवे सरखा पच्चख्खाण गणावे छे.

पोरिसि सढमवढं, दुभत्त निविगई पोरिसाइ समा ॥
अंगुठ मुठि गंठी, सचित्त दव्वाइ भिग्गहियं ॥२३॥

शब्दार्थ—पोरसी अने साढ पोरसी, अवढ अने पुरिमढ, एकासणुं अने बोयासणुं तथा आगार, विगइ अने नोवि तथा आगार, तेमज अंगुठसहियं, मुठिसहियं, गंठिसहियं अने सचित्त द्रव्यादिक ए सर्व अभिग्रह पच्चक्खाण मांहो माहे सरखां छे. २३

हवे ए सर्व आगारोना अर्थ कहे छे.

विस्सरण मणाभोगो, सहस्सागारो सयं मुहपवेसो ॥
पच्छन्नकाल मेहाइ, दिसिविवज्जासु दिसिमोहो ॥२४॥

शब्दार्थ—आगारनो अर्थ विसरवाथी कांइ मुखमां घाले ते अनाभोग, सहसात्कारे पोतानी मेले मुखमां पेसी जाय ते सहसागार, पच्छन्नकाल ते मेघ विगेरेथी दिवसनी खबर न पडवाथी जमे ते, तेमज दिशाना विपर्यास पणाथी दिशामोह ए आगारोमां पण पच्चक्खाण न भागे. ॥ २४ ॥

साहुवयण उग्घाडा, पोरिसि तणु सुहया समाहित्ति ॥
संघाइकज्ज महत्तर, गिहत्थ वदाइ सागारी ॥ २५ ॥

शब्दार्थ–उग्घाड पोरसी एवुं साधुनुं वचन सांभलीने पच्चक्खाण पारीने जमे, तेमज शरीरनी स्वस्थतानी असमाधिने लोधे तेम करे, वली संघादिकना कार्य निमित्त म्होटानी आज्ञाथी पच्चक्खाण पारे, तेमज गृहस्थ वादवा आववाथी पारे ते सर्व सागारी आगार जाणवा ॥ २५ ॥

आउंटणमंगाणं, गुरुपाहुणसाहुगुरुअब्भुट्ठाणं ॥
परिठावण विहिगहिए, जइण पावरण कडिपट्टो ॥२६॥

शब्दार्थ–हाथ पग विगेरे अंगनुं संकोचवुं तथा पसारवुं, गुरु तथा प्राहुणा साधु आवे उभा थवुं, परठववा योग्य विधिथी लोधेला अने वधेला आहारने खावो पडे वली साधुने प्रावरणना पच्चक्खाणमां चोलपट्ट लेवा उठवुं पडे तोपण पच्चक्खाण न भागे

खरडिय लूहिय डोवा–इ लेव संसट्ठ डुच्चमंडाइ ॥
उक्खित पिंडविगइ–णं मक्खियं अंगुलीहिं मणा ॥२७॥

शब्दार्थ–न लेवा योग्य वस्तुथी खरडायेली कडछो प्रमुखने लूहीने ते वडे आपे तेथी, तेमज गृहस्थना हाथथी विगयवडे स्पर्शित थयेला शाक मांडादि आपे तेथी, उपर रहेला पिंडविगयने लइने आपे तेथी, तेमज लगार घोनी आंगलीथी चोपडेला मांडादि आपे तेथी पण पच्चक्खाण न भागे ॥२७॥

हवे पाणीना छ आगार कहे छे

लेवाड आयमाइ, इअर सोवीरमच्छ मुसिणजलं ॥
धोयण बहुल ससित्थ, उस्से इम इअर सित्थविणा २८

शब्दार्थ–१ लेपकृत ते उसामण आदिनु पाणी, २ अलेपकृत ते धोवण विगेरेनु पाणी, ३ निर्मल ते उनु पाणी, ४ बहुलेप ते

चोखा विगेरेना धोवणनुं पाणी, ५ सीथ सहित ते आटाथी खर
मायला हाथनुं दाणा सहित पाणी अने ६ तेथी बीजुं ते तेनेज
गली लीधेलुं पाणी, ए ७ आगार पाणीना जाणवा. ॥२७॥

हवे दश विगइनां स्वरूपनुं ९ मुं द्वार कहे छे.

पण चउ चउ चउ ऽ ऽविह,छ नरक ऽध्धाइ-विगइ इगवीसं
तिऽति चउविह अनरका, चउ महुमाई विगई वार ॥

शब्दार्थ—ऽधनां पांच, दहिना चार, घीना चार, तेलना चार, गोळना बे, पक्वान्नना बे. एम ए ऽध विगेरे नक्ष्य(खावा योग्य)विगइना सर्व मळी एकवीस नेद थाय छे. तेमज मधना त्रण, मदिराना बे, मांसना त्रण, मांखणना चार. एम ए चार अनक्ष्य विगइना सर्व मळी बार नेद छे. ॥२ए॥

हवे मथमनी छ विगइना २१ भेद कहे छे.

खीर घय दहि अ तिल्लं, गुम पक्कन्नं छ नरक विगइउ ॥
गो महिसी उंटि अय ए-लगाण पण ऽध्ध अह चउरो३०

शब्दार्थ—ऽध, घी, दहिं, तेल, गोळ अने पक्वान्न. ए छ नक्ष्य विगइ छे. तेमां गायनुं, नेसनुं, उंटडानुं, बकरीनुं अने घेटीनुं ए पांच जातनुं ऽध विगइ छे. हवे चार जातनुं घी विगेरे कहे छे.

घयदहिआउट्टिविणा, तिलसरिसवअयसिलट्टतिल्लचउ
दवगुम पिंम गुमादो, पक्कन्नं तिल्ल घय तलियं ॥३१॥

शब्दार्थ—घी अने दहिं उंटमी विना बाकीना चारनुं विगइमां जाणवुं. तलनुं, सरसवनुं, अलसीनुं अने *लाटनुं ए चार जातनुं तेल विगइ छे. ढीलो अने कठीण ए बे जातनो गोळ, अने पक्वान्न ते उपर कहेला चार जातनां तेलमां तळेलुं अथवा चार जातनां घीमां तळेलुं ए सर्व विगइमां जाणवुं. ॥३१॥

* ए धान्य खसखस जेवुं थाय छे.

हवे दूधना पाच निवीयाता कहे छे

पयसाम्हि खीर पेया, वलेहि दुध्धट्टि दुध्ध विगइगया ॥
दरक वहु अप्प तंडुल, तच्चुन्न विलसहिअ दुद्धे ॥३२॥

शब्दार्थ–द्राख नाखीने राधेलु दुध पयसाम्हि, वहु चोखा नाखीने राधेलुं दुध खोर, थोडा चोखा नाखीने राधेलु पेया, आटो नाखीने राधेलु अवलेहि अने खटास नाखीने राधेलु दुध दुध्धट्टि. ए पाच दुधना निवीआता जाणवा ॥३२॥

हवे घी विगइ तथा दहि विगइना पांच पाच निवीयाता कहे छे

निभ्भंजणवीसंदण, पक्कोसहितरिय किट्टि पक्कघय ॥
दहिए करंव सिहरिणि,सलवणदहि घोल घोलवडा ३३

शब्दार्थ–दाझेलु, दुधनी तरीमा आटो नाखीने बनावेलु, औषधि नाखीने पकावेलुं, कीटु, अने आवलादि नाखीने पकावेलु ते पाच जातनु घी तेमज भात सहित दहि, सीखण्ड, लवण नाखेलु गळ्या विनानु दहि, गलेलुं दहि अने घोलवडा ए पाच जातनु दहि निवोयातामा जाणवु ॥३३॥

हवे तेल तथा गोलना पाच पाच निवीयाता कहे छे

तिलकुट्टि निभ्भंजण, पक्कतिल पक्कुसहितरिय तिल्लमली॥
सक्कर गुलवाणय पाय, खण्ड अधकढिय इक्कुरसो ३४

शब्दार्थ–गोल सहित खाण्डेला तल, दाझेलु तेल, लाख विगेरेथी पकावेलु तेल, औषधि पकाव्या पछी तेल उपर थयेली तरी अने तेलनी मली, ए पाच तेलना तेमज साकर, गोलवाणी, [1]गुलपाय, खाण्ड अने अर्धो उकालेलो शेरडीनो रस ए पाच निवीयातामा जाणवा ॥ ३४ ॥

हवे कडा विगइना पाच निवीयाता कहे छे

---

१ गळपाणु २ गोळपाक–गोळनी चासणी

पूरियतवपूआ बीय, पूअ तन्नेह तुरिय घाणाई ॥
गुलहाणी जललप्पसि, य पंचमो पूत्तिकयपूउ ३५

शब्दार्थ—एक तावडी पूराय एवडा पूडला उपर बीजो त लवो ते, त्रण घाण तळ्या पछी चोथो घाण तळवो ते, गोल धाणी, जललापसी अने पोतुं दइने करेलो पुडलो. ए पांच नि वीयाता जाणवा. ॥ ३५ ॥

दुध्धदही चउरंगुल, दवगुड घयतिल्ल एगभत्तुवरिं ॥
पिंडगुल मरकणाणं, अद्दामलयं य संसठं ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ—दुध अने दहि भात उपर चार आंगुल होय तथा ढीलो गोल, घी अने तेल ए त्रण भात उपर एक आंगल होय तेमज कठिण गोलथी मसलेला चूरमादिकमां पीलुना म्होर स रखा गोलना ककडा होय तो ते संसृष्ट केहवाय. ते निवीया तामां कल्पे छे. ॥ ३६ ॥

हवे कांइक विशेष कहे छे.

दवहयविगई विगइ—गयं पुणो तेण ते हयं दवं ॥
उध्धरिए तत्तंमिय, उक्किठ दवं इमं चन्ने ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—शालना चोखा विगेरेथी निर्विय करेली क्षिरादि क विगइ तथा वर्णिकादिके करीने हणी एवी जे घृतादि विगइ ते विकृती गत कहेवाय. वली भात विगेरेथी हण्युं एवुं जे विकृ तिगत ते हतद्रव्य कहेवाय. तथा तावडामांथी सुखडी काढी लीधा पछी वधेलुं टाढुं थयेलुं जे घी तेमां नाखेला लोटने हला वीने करीये ते उत्कष्ट द्रव्य कहेवाय एम केटलाक आचार्य कहेछे.

हवे केटलाक उत्तम द्रव्य गणावे छे.

तिल संकुलि वरसोलाई, रायणंबाइ दरकवाणाई ॥
डोलिय तिल्लाईया, सरसुत्तम दव्व लेवकडा ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ–तलसांकली, वरसोला विगेरे, रायण, केरी, द्राखवाणि विगेरे, मोलोया विगेरेना तेल ए सर्वने सरस उत्तम द्रव्य कहेवाय अथवा लेपकृत द्रव्य पण कहेवाय ॥३७॥

ते सर्वे कारणे कल्पे ते कहे छे

विगइगयासंसठ्ठा, उत्तम दवाइ निविगइयंमि ॥
कारणजाय मुंत्तु, कप्पंति न त्नुत्तुं जं वुत्तं ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ–विगइथी उत्पन्न थयेला, संसृष्ट अने उत्तम द्रव्यादिक नीवीना पच्चक्खाणमा कारणने मूकीने खावुं न कल्पे अर्थात् कारणे खवाय कारण कह्यु छे के -॥३७॥

विगइं विगइ त्नीउ, विगइगयं जो अ त्नुंजए साहू ॥
विगइ विगई सहावा, विगई विगइं बलानेइ ॥४०॥

शब्दार्थ–विगइने अने विगइमा रहेला क्षीरादिकने नरकादि विरुद्द गतिथी त्नय पामतो जे साधु त्नक्षण करे छे, तो विकार पमाडवाना स्वत्नाववाली विगइ ते साधुने माठी गति प्रत्ये पहोचाडे छे ॥ ४० ॥

हवे चार अत्नक्ष्य विगइना उत्तरभेद कहे छे

कुत्तिय मछिय त्नामर, महुतिहा कठ पिठ मद्यउहा ॥
जल थल खगमस तिहा, घव्व्य मरकण चउ अत्नरका ४१

शब्दार्थ–कुतीयु, मांखीनु अने त्नमरीनु एम त्रण जातनु मध, काष्ठथी अने पिष्टथी बनावेली मदिरा, वली जलचर, थलचर अने खेचर जीवोनु एम त्रण जातनु मास अने घीनी पेठे चार जातनु माखण ए सर्व अत्नक्ष्य छे ॥४१॥

हवे पच्चख्खाणना ४९ भागा कहे छे

मयवयणकायमणवय, मणतणुवयतणुतिजोगिसत्तसत्त ॥
करकारणुमइ दुतिजुय, तिकालि सीयाल त्नंगसयं ४२

शब्दार्थ—मन, वचन अने काया, वली मनवचन, मनका या अने वचनकाया; तेमज मन, वचन अने काया ए त्रण योग. ए सात भांगाने करवा, कराववा अने अनुमोदवा. एवा भेदथी एकवीस भेद थाय. वली तेने त्रीक त्रीक योग सहित करी भूत, भविष्य अने वर्त्तमान काले करी गुणता एकसो सम्ततालीस भांगां थाय. ॥ ४२ ॥

हवे ए पच्चख्खाणनुं स्वरूप कहे छे.

एयं च उत्तकाले, सयं च मण वयण तणुहिं पालणियं॥
जाणगजाणग पासि, त्तिभंग चउगे तिसु अणुण्णा ४३

शब्दार्थ—वली ए पच्चख्खाण केहेला काले लेनार धणीये पोते मन, वचन अने कायाए करीने पालवा. वली ते पच्चख्खाण करनार जाण अथवा अजाण तेमज करावनार जाण अथवा अजाण एम चार भांगा थायछे. तेमां प्रथम त्रणने आज्ञा छे.

हवे पच्चख्खाणनी छ विशुद्धिनुं ८ मुं द्वार कहे छे.

फासियपालियसोहिय, तिरियकिट्टियआराहियछसुद्धं॥
पच्चख्खाणं फासिय, विहिणोचिय कालि जंपत्तं ॥४४॥

शब्दार्थ—फरस्युं, पाल्युं, सोध्युं, तर्युं, कीर्त्युं अने आराध्युं, ए छ प्रकारे शुद्ध एवुं पच्चख्खाण फल आपनारुं थाय छे. तेमां प्रथम विधि प्रमाणे योग्य काले जे पच्चख्खाण लीधुं ते फरस्युं कहेवाय. ॥ ४४ ॥

पालिय पुणपुणसरियं, सोहिय गुरुदत्त सेस भोयणओ॥
तिरिय समहिय कालो, किट्टिय भोयण समय सरणे४५

शब्दार्थ—करेला पच्चख्खाणने वारंवार संभारवुं ते पाल्युं कहेवाय, गुरुने आप्या पछी बाकीनुं पोते जमवुं ते शोध्युं कहेवाय. धारेला कालथी कांइक अधिक काल गया पछी पच्चख्खा

ए पूर्ण करे ते तर्युं कहेवाय अने भोजनना अवसरे करेला प च्चरकाणने सन्नारवु ते कीर्त्युं कहेवाय. ॥४५॥

इअ पमिचरिअं आरा-हियं तु अहवा ब सुद्धि सद्दहणा॥
जाणण विणयणु न्नावण-अनुपालण न्नाव सुध्दति ४६

शब्दार्थ—नपर कहेला सर्व प्रकारे आचर्युं तेने आराध्युं कहेवाय अथवा पच्चरकाणनी बवि शुद्दि बे ते लीधा प्रमाणे करवु, जाणनी पासे करवु, गुरुनो विनय करवो, गुरु बोले तेम मनमा बोलवु, कष्ट पमे तो पण न्नागवु नहि, शंकादिदोष रहित रहेवु, ए ब विशुद्दि जाणवी ॥४६॥

हवे पच्चरकाणनु बे प्रकारे फल थायबे ते कहे छे

पच्चरकाणस्स फल, इह परलोए य होइ डुविहं तु ॥
इहलोए धम्मिल्लाइ, दामन्नगमाइ परलोए ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ—पच्चरकाणनु फल आ लोकमा धम्मिल्लकुमारादिना अने परलोकमा दामन्नकादिकना दृष्टांतथी जाणवु ४७

हवे समाप्ति करता कहे छे.

पच्चरकाणमिण से—विऊण न्नावेण जिणवरुद्दिठं ॥
पत्ता अणंत जीवा, सासयसुरक अणाबाहं ॥४७॥

शब्दार्थ—श्री जिनेश्वरे नपदेशेला आ पच्चरकाणने न्नावथी सेवीने अनता जीवो निरावाध एवा शाश्वता सुखने पाम्या बे

॥ इति पच्चरकाण न्नाष्य समाप्त ॥



श्री इंद्रिय पराजय शतक.

(आर्यावृत्तम्)

सुच्चिय सूरो सो चे-व पंमिञ तं पसंसिमो निच्चं ॥
इंदियचोरेहिं सया, न लुट्टियं जस्स चरणधणं ॥१॥

शब्दार्थ—तेज सूरवीर अने तेज पंमित. वली तेनीज अमे निरंतर प्रशंसा करीये गीये के, जेनुं चारित्ररूप धन निरंतर इंडियरूप चोरोए लुंटो लीधुं नथी. ॥१॥

इंदिय चवलतुरंगे, डुग्गइ मग्गाणु धाविरे निच्चं ॥
नाविअ नवस्सरूवो, रुंजइ जिणवयण रस्सीहिं ॥२॥

शब्दार्थ—इंडियरूप चपल घोमाउ निरंतर दुर्गतिरूप मार्ग मां दोडो रह्या ढे, तेमने संसार स्वरूपनी नावना करनारो पुरुष श्री जिनराजनां वचनरूप रासथी रोके ढे. ॥२॥

इंदियधुत्ताणमहो, तिलतुसमित्तंपि देसु मा पसरं ॥
जइ दिन्नो तो नीञ, जढ खणो वरिसकोमिसमं ॥३॥

शब्दार्थ—हे प्राणिन्! तुं इंडियरूप चोरोने तलनां फोत्तरा मात्र पण प्रसरवा दइश नहि. कारण जो परसवा दिधा तो ज्यां एक कृण क्रोडो वर्ष समान थाय तेवां दुःखो पामीश. ॥३॥

अजिइंदिएहिं चरणं, कठंव घुणेहि किरइ असारं ॥
तो धम्मछिहि दढं, जइयव्वं इंदियजयंमि ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—इंडियने न जीतनारा प्राणीनुं चारित्र घुणे (ला कमांना जीवोए) करमेलां लाकमांनी पेठे सार रहित ढे, माटे धर्मना अर्थीये इंडियोने जीतवामां दृढ नद्यम करवो. ॥४॥

जह कागिणीइ हेउं, कोमी रयणाण हारए कोई ॥
तह तुच्छ विसय गिद्धा, जीवा हारंति सिद्धिसुहं ॥५॥

शब्दार्थ–जेम कोइ मूर्ख एक कोडीने माटे क्रोडा रत्नने हारे तेम तुच्छ एवा विषयमा आसक्त थयेला जीवो मोक्ष सुखने हारी जाय छे ॥५॥

निलमित्तं विसयसुहं, ऊहं च गिरिरायसिगतुंगयर ॥
नवकोमिहि न निठइ, जं जाणसु तं करिज्जासु ॥६॥

शब्दार्थ–तल मात्र विषय सुख ऊखरूप मेरुपर्वतना उचा शिखर जेवुं छे वली ते ऊख क्रोडो नव सुधी खुटे तेम नथी, माटे हे जीव! जेम जाण तेम कर ॥६॥

(शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्)

नुंजंता महुरा विवागविरसा किंपागतुल्ला इमे,
कछुकडुअणाव ऊस्कजणाया दाविंति बुद्धि सुहे ॥
मझन्हे मयतिन्हियव्व सययं मिछानिसंधिप्पया,
नुत्ता दिंति कुजम्म जोणिगहणं नोगा महा वेरिणो ७

शब्दार्थ–किंपाक फलनी पेठे नोगवता मधुर, पण परिणामे प्राणनो नाश करनारा, खसना कोल्लाने खणवानी पेठे ऊख आपनारा, मध्यान्ह वखते मृग तृष्णानी पेठे निरंतर खोटा अनिप्राय आपनारा अने महा वैरी सरखा नोगो नोगवनाराने कुजन्मरूप गहन जोनी आपे छे ॥७॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

सक्का अग्गि निवारेउं वारिणा जलिउवि हु ॥
सव्वोदहिजलेणावि, कामग्गि ऊन्निवारउं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–ऊल हलता अग्निने पाणीवडे निवारी शकाय, पण सर्व समुद्रना पाणीथी कामरूप अग्नि निवारी शकातो नथी

(आर्यावृत्तम्)

विसमिव मुहंमि महुरा, परिणाम निकाम दारुणा विसया॥

शब्दार्थ—भोगी पुरुषो भोगमां लपटाय छे अने अभोगी पुरुषो लपटाता नथी; एटलाज माटे भोगी संसारमां भमे छे अने अभोगी संसारथी मूकाय छे. ॥१७॥

हवे एज वातने दृष्टांत पूर्वक दृढ कहे छे.

उल्लो सुक्को य दो बूढा, गोलया मट्टियामया ॥
दोवि आवमिआ कूम्मे, जो उल्लो तब लग्गई ॥१८॥
एवं लग्गंति डुम्मेहा, जे नरा कामलालसा ॥
विरत्ताउ न लग्गंति, जहा सुक्के य गोलए ॥२०॥

शब्दार्थ—लीलो अने सूको एवा बे माटीना गोला भींत तरफ फेंक्या, ते बे गोला भींते पटकाणा; परंतु तेमांथी जे लीलो गोलो हतो, ते भींते चोटी रह्यो अने सूको गोलो न चोटी रह्यो. ए प्रकारे कामभोगमां लंपटी अने दुर्बुद्धि पुरुषो संसार रूप भींतमां चोटी रहे छे अने जे कामभोगथी विराम पाम्या छे, ते सूका गोलानो पेठे (संसाररूप भींतमां) चोटी रहेता नथी.

(आर्यावृत्तम्)

तणकठेहिव अग्गी, लवणसमुद्दो नईसहस्सेहिं ॥
न इमो जीवो सक्को, तिप्पेउं कामभोगेहिं ॥२१॥

शब्दार्थ—जेम घास तथा काष्ठथी अग्नि अने हजारो नदीयोथी लवणसमुद्र तृप्त थतो नथी तेम आ जीव पण कामभोगथी तृप्त थवाने शक्तिवान थतो नथी. ॥२१॥

भुत्तूणवि भोगसुहं, सुरनरखयरेसु पुण पमाएणं ॥
पिज्जइ नरएसु भेरव, कलकलतउ तंबपाणाइं ॥२२॥

शब्दार्थ—आ जीव, देव मनुष्य अने विद्याधरनी गतिमां प्रमादना वशथी भोगसुख भोगवीने नरकमां भयंकर कलकलता अग्निये तपावेला त्रांबाना रसने पीये छे. ॥२२॥

को लोजेण न निहउ, कस्स न रमणीहि जोलिअ हियय
को मच्चुणा न गहिउ, को गिद्धो नेव विसएहिं ॥ए३॥

शब्दार्थ–आ संसारमा कोण लोजथी नथी हणाणो? कोना हृदयने स्त्रीये नथी जोलव्यु? कोने मृत्युए नथी पकड्यो? अने कोण विषयमा गृद्ध नथी थयो? ॥२३॥

(काव्यम्)

खणमित्त सुक्खा वहुकाल दुक्खा, पगाम दुक्खा अ–
निकाम सुक्खा ॥ संसार मोक्खस्स विपक्खजूआ,
खाणी अणत्थाणउ कामजोगा ॥ ए४ ॥

शब्दार्थ–हे जीव! क्षणमात्र सुखने आपनारा, बहु काल दुःखने आपनारा, अत्यंत दुःखने आपनारा, तुच्छ सुखने आपनारा, संसारथी मुक्त थवामा शत्रुजूत, अर्थात् संसारने वधारनारा अने अनर्थनी खाण एवा आ कामजोगो छे ॥२४॥

(आर्यावृत्तम्)

सव्वगहाणं पञवो, महागहो सव्वदोस पायट्टि ॥
कामग्गहो दुरप्पा, जेणजिजूअं जगं सव्वं ॥एए॥

शब्दार्थ–सर्व ग्रह (उन्माद)नु उत्पत्ति स्थान, म्होटो ग्रह, सर्व प्रकारना दोष प्रवर्त्तावनारो अने दुरात्मा एवो कामदेवरूप ग्रह छे के, जेणे आ सर्व जगत्ने वश्य करी लीधु छे ॥२५॥

जह कच्छुल्लो कछु, कडुअमाणो दुहं मुणइ सुक्खं ॥
मोहाजरा मणुस्सा, तह कामदुह सुह विंति ॥ ए६ ॥

शब्दार्थ–जेम खसवालो माणस खसने खणतो छतो तेथी थता दुःखने सुख माने छे तेम मोहथी आतुर थयेला माणसो कामदेवना दुःखने सुख माने छे. ॥२६॥

(अनुष्टुब्वृत्तम्.)

सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा ॥
कामे य पत्थेमाणा, अकामा जंति दुग्गइं ॥ २७ ॥

शब्दार्थ—कामभोग शल्य छे, कामभोग विष छे अने कामभोग आशीविष झेर (सर्पनी दाढमां रहेला झेर) जेवा छे. ते कामभोग भोगव्या नथी; परंतु तेनी प्रार्थना करवाथी एटले तेनी इच्छा राखवाथी पण जीवो दुर्गतिमां जाय छे. ॥२७॥

(आर्यावृत्तम्.)

विसए अवइक्खंता, पडंति संसारसायरे घोरे ॥
विसएसु निराविक्खा, तरंति संसारकंतारे ॥२८॥

शब्दार्थ—विषयनी अपेक्षा (वांछना) करनारा जीवो बीहामणा संसार समुद्रमां पडे छे अने विषयथी निरपेक्ष (अवंछक) थयेला जीवो संसार रूप अटवीने तरे छे. ॥२८॥

छलिया अवइक्खंता, निरावइक्खा गया अविग्घेणं ॥
तह्मा पवयण सारे, निरावइक्खेण होअव्वं ॥ २९ ॥

शब्दार्थ—विषयनी अपेक्षा—वांछना करनारा जीवो छलाणा एटले संसारमां रह्या अने विषयथी निरपेक्ष—अवंछक थयेला जीवो, अविघ्नपणे मोक्षमां गया. ते कारण माटे प्रवचन एटले सिद्धांतनो एज सार छे के, विषयथी निरपेक्ष थवुं. ॥२९॥

विसयाविक्खो निवडइ, निरविक्खो तरइदुत्तर भवोघं ॥
देवीदीवसमागय, भाउअजुअलेण दिठंतो ॥३०॥

शब्दार्थ—रत्नादेवीना रत्नद्वीपमां गयेला (जिनरक्षित अने जिनपालित ए) बे भाइओना दृष्टांते विषयनी अपेक्षा करनारा जीवो (जिनरक्षितनी पेठे) संसार समुद्रमां पडे छे अने विषय

थी निरपेक्ष थयेला जीवो (जिनपालितनी पेठे) दुस्तर एवा न्न वना उधने—ससार समुद्रने तरे छे. ॥३०॥

जं अइतिक्खं दुक्खं, जं च सुहं उत्तमं तिलोअंमि ॥
तं जाणसु विसयाणं, वुढ्ढि क्खय हेउअं सव्व ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! त्रण लोकमा जे अति तिक्ष्ण दुःख अने जे उत्तम सुख छे ते सर्व विषयोनी वृद्धि अने क्षयनु हेतु छे, एम तु जाण

इंदियविसयपसत्ता, पडंति संसारसायरे जीवा ॥
पक्खिव्व छिन्नपंखा, सुसीलगुण पेहुणविहूणा ३२

शब्दार्थ—पंचेंद्रियना विषयमा आसक्त थएला जीवो, उत्तम आचार अने शीलगुण रूप पाखो विना, छेदाणी छे पाखो जेनी एवा पक्षीनी पेठे संसार समुद्रमा पडे छे ॥३२॥

न लहइ जहा लिहंतो, मुहल्लियं अट्ठिअं जहा सुणउ
सोसइ तालुअ रसिअं, विलिहंतो मन्नए सुक्खं ॥३३॥
महिलाण कायसेवी, न लहइ किंचिवि सुहं तहा पुरिसो॥
सो मन्नए वराउ, सयकायपरिस्समं सुक्खं ॥३४॥ युग्मम्

शब्दार्थ—जेम कूतरो म्होटा हाडकाने चाटतो छतो एम नथी जाणतो के, हु म्हारा पोतानाज तालुआनो रसीने सोसवु छु! तेथीज ते हाडकाने विशेषे चाटतो छतो जेम सुख माने छे तेम स्त्रीनो कायानो सेवनार, एटले विषय सेवनारो पुरुष तेथी जरा पण सुख नथी पामतो, तथापि ते राक पुरुष पोतानो कायाना परिश्रमने सुख माने छे!! ॥३३॥३४॥

सुठुवि मग्गिज्जंतो, कत्थवि कयलीइ नत्थि जह सारो ॥
इंदियविसएसु तहा, नत्थि सुहं सुठुवि गविठ्ठं ॥३५॥

शब्दार्थ—सारी रीते तपासता जेम केलमा काइ पण सार

नथी, तेम इंद्रियोना विषयमां पण सारी रीते तपासतां सुख नथी.

सिंगारतरंगाए, विलासवेलाइ जुव्वणजलाए ॥
के के जयंमि पुरिसा, नारीनइए न वुड्डंति ॥३६॥

शब्दार्थ—जेमां शृंगार रूप कल्लोलो छे, विलास रूप वेलो छे अने जोवन रूप जल छे एवी स्त्री रूप नदीमां नथी बूड्या एवा जगत्मां कोण कोण पुरुषो छे? ॥३६॥

सोअसरीदुरिअदरी, कवडकुडीमहिलिया किलेसकरी॥
वइरविरोयणअरणी, दुक्खखाणी सुक्खपडिवक्खा ॥३७॥

शब्दार्थ—शोकनी नदी, पापनी गुफा, कपटनी कूंडी, क्लेशनी करनारी अने वैररूप अग्निने प्रगट करवा माटे अरणीना काष्ट समान एवी स्त्री दुःखनी खाण छे अने सुखनी प्रतिपक्षी(शत्रु)छे.

अमुणिअमण परिकम्मो, सम्मं को नाम नासिउं तरइ॥
वम्महसर पसरोहे, दिठ्ठिच्छोहे मयच्छीणं ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ—नथी करी मननी सारी शुद्धि जेणे एवो कयो पुरुष मृगाक्षी स्त्रीना कामबाण वरसावनार नजरना सपाटामांथी बरोबर रीते बची शके? ॥ ३८ ॥

परिहरसु तउ तासिं, दिठ्ठि दिठ्ठिविसस्सव अहिस्स ॥
जं रमणि नयणबाणा, चरित्तपाणे विणासंति ॥३९॥

शब्दार्थ—ते कारण माटे हे जीव! दृष्टिविष सर्पना जेवी छे दृष्टि जेनी एवी अने जे स्त्रीनां नयन रूपी बाणो चारित्र रूप प्राणनो विनाश करे छे तेवी स्त्रीनो तुं त्याग कर. ॥३९॥

सिद्धंत जलहि पारं—गउवि विजिइंदिउवि सूरोवि ॥
दढचित्तोवि छलिज्जइ, जुवइ पिसाईहि खुड्डाहिं ॥४०॥

शब्दार्थ—सिद्धांत रूप समुद्रने पार पामेलो, विशेषे करी

जीती छे इन्द्रियो जेणे, शूरो अने दृढ चित्तवालो एवो पुरुष पण युवति रूप कुड पिसाचणीओ ठलाय छे. ॥४०॥

मणयनवणीयविलउ, जह जायइ जलणसंनिहाणंमि ॥
तह रमणिसंनिहाणे, विद्दवइ मणो मुणीणंपि ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ–जेम अग्निनी पासे रहेलु मीण अने माखण डग ली जाय छे, तेम स्त्रीनो पासे रहेला मुनिनु मन पण डगली जाय छे अर्थात् विकारवत थाय छे. ॥४१॥

नीअगमाहि सुपउ–हराहि उप्पिच्छ मथरगईहि ॥
महिला हि निमग्गा इव, गिरिवर गुरुआवि भिज्जंति४२

शब्दार्थ–नीच साथे गमन करती, सारा पयोधर (स्तन) वाली अने देखवा लायक मद गतिवाली स्त्री के, जे जाणे नदी समान छे तेमा बूडेला (पुरुषो) पर्वत जेवा म्होटा होय तो पण भेदाय छे ॥ ४२ ॥

विसयजलं मोहकलं. विलासविब्बोअ जलयराइन्नं ॥
मय मयर उत्तिन्ना, तारुण्ण महन्नव धीरा ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ–विषय रूप जलवाला, मोह रूप कादववाला, वि लास अने हावभाव रूप जल जतुथी भरेला अने मद रूप मगर वाला जोवन रूप महासमुद्रने धीर पुरुषो तरेला छे ॥४३॥

जइवि परिचत्तसंगो, तव तणुअंगो तहावि परिवडइ ॥
महिला संसग्गीए, कोसा भवणूसि य मुणिव्व ॥४४॥

शब्दार्थ–जो के, कुटुवादिकनो सग जेणे त्याग कर्यो होय अने तपथी शरीर दूबलु कर्यु होय, तोपण ते, स्त्रीना ससर्गथी कोश्या वश्याने घेर रहेला (सिंहगुफावासी) मुनिनी पेठे चा रित्रथी पडे छे. ॥ ४४ ॥

सव्वग्गंथविमुक्को, सीईभूओ पसंतचित्तो अ ॥
जं पावइ मुत्तिसुहं, न चक्कवट्टीवि तं लहई ॥४५॥

शब्दार्थ—सर्व परिग्रहथी मूकायेलो, शांत थयेलो अने शांत चित्त वालो माणस जे सुख पामे छे ते सुख चक्रवर्ति पण पामतो नथी.

खेलंमि पडिअमप्पं, जह न तरइ मच्छिआवि मोएऊ ॥
तह विसयखेलपडिअं, न तरइ अप्पंपि कामंधो ४६.

शब्दार्थ—जेम बलखामां पडेली माखी तेमांथी पोताने मूकावा समर्थ थती नथी, तेम विषय रूप खेलमां पडेलो कामांध जीव पण तेमांथी नीकलवा समर्थ थतो नथी. ॥४६॥

जं लहइ वीयराओ, सुक्खं तं मुणइ सुचिअ न अन्नो ॥
नवि गत्ता सूअरओ, जाणइ सुरलोइअं सुक्खं ॥४७॥

शब्दार्थ—जेम खाडामां रहेलो सूअर देवलोकनां सुखने न जाणे, तेम जे सुखने वीतराग पामे, ते सुखने वीतराग ज जाणे; पण बीजा कोइ (संसारी जीव) न जाणे. ॥४७॥

जं अज्जवि जीवाणं, विसएसु दुहावहेसु पडिबंधो ॥
तं नज्जइ गुरुआणवि, अलंघणिज्जो महामोहो ॥४८॥

शब्दार्थ—जे कारण माटे हजी सूधी पण जीवोने दुःखने उत्पन्न करनारा विषयोमां प्रतिबंध छे. ते माटे एम जणाय छे के, म्होटाने पण महामोह अलंघनीय छे. ॥४८॥

जे कामंधा जीवा, रमंति विसएसु ते विगयसंका ॥
जे पुण जिणवयणरया, ते भीरू तेसु विरमंति ॥४९॥

शब्दार्थ—जे कामभोगथी आंधला थयेला जीवो छे, ते शंका रहित थइने विषय सुखमां रमे छे अने जे जिनवचनमां रक्त छे, ते संसारथी बीक पामीने विषयथी विराम पामे छे. ॥४९॥

(काव्यम्-)

असुइमुत्तमलपवाहरूवय, वंतपित्तवसमज्जफोफसं ॥
मेअमंसबहुहड्डकरंमयं. चम्ममित्तपच्छाइयजुवइअंगयं॥५०

शब्दार्थ—अशूची, मूत्र, विष्टाना प्रवाह रूप, वमन, पित्त, वसा, नसो, चरवी मज्जा—हाडकामानो भूको, फेफसा, मेद. मास तथा घणा हाडकानो करंडीयो अने मात्र चामडाथी ज ढाके लु, एवु स्त्रीनु शरीर छे ॥ ५० ॥

मंसं इमं मुत्तपुरीसमीस, सिंघाणखेलाइअ निझरं तं ॥
एयं अणिच्च किमिआणवास,पासं नराणं मइबाहिराण५१

शब्दार्थ—मास, मूत्र अने विष्टाथी मिश्रित, सिंघाण—लींट अने बलखाथी झरतु, अनित्य तेमज कमीयाउनु घर एवुं आ स्त्रीनु शरीर, ते अल्प बुद्धिवाला पुरुषोने पास समान छे ५१

(आर्यावृत्तम्)

पासेण पजरेण य, बज्झति चउप्पया य परकीई ॥
इय जुवइपंजरेणं, बद्धा पुरिसा किलिस्सति ॥५२॥

शब्दार्थ—जेम पासले अने पाजरे करीने बंधायेला जनावरो तथा पक्षीयो क्लेश पामे छे, तेम आ स्त्रीरूपी पाजरे करीने बंधायेला पुरुषो पण क्लेश पामे छे

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

अहो मोहो महामल्लो, जेण अम्मारिसावि हु ॥
जाणतावि अणिच्चत्त, विरमति न खणंति हु ॥५३॥

शब्दार्थ—अहो! मोह रूप मल्ल बहुज म्होटो छे जेणे करीने अमारा सरखा जोवो पण (कामभोगने) अनित्य जाणतां छता तेओ क्षण मात्र पण विराम पामता नथी! ॥ ५३ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

जुवईहिं सह कुणंतो, संसग्गि कुणइ सयलडुक्खेहिं ॥
नहि मुसगाणं संगो, होइ सुहो सह विलामेहिं ॥५४॥

शब्दार्थ—जेम विलाडीनी साथे संसर्ग करतो उतो उंदर सुखी थतो नथी, तेम स्त्रीनी साथे संसर्ग करतो उतो पुरुष पण सर्व डुःखना संसर्गने करे छे. अर्थात् अनेक डुःखने पामे छे.

हरिहरचउराणण चं, दसूरखंदाइणोवि जे देवा ॥
नारीण किंकरत्तं, कुणंति धिद्धी विसयतिन्हा ॥५५॥

शब्दार्थ—विश्नु, ईश्वर, ब्रह्मा, चंड, सूर्य अने कार्त्तिकस्वामी विगेरे जे कोइ देवो, ते सर्वे (मात्र विषयने माटे) स्त्रीनुं किंकरपणुं करे छे! माटे धिक्कार छे धिक्कार छे विषयनी तृष्णाने !!!

(काव्यम्.)

सीअं च उन्हं च सहंति मूढा, इत्थिसु सत्ता अविवेअवंता
इलाइपुत्तंव चयंति जाइं, जीअं च नासंति अरावणुव्व ५६

शब्दार्थ—विवेक विनाना अने स्त्रीमां आसक्त थयेला मूर्ख पुरुषो, इलाची पुत्रनी पेठे पोतानी उत्तम जातिनो त्याग करीने टाढ अने तापने सहन करे छे. तेमज रावणनी पेठे जीवितव्यने पण नाश पमाडे छे. ॥ ५६ ॥

(आर्यावृत्तम्)

वुत्तुणवि जीवाणं, सुडुक्कराइं ति पावचरियाइं ॥
जयवं जा सा सा सा, पच्चाएसो हु इणमो ते ॥५७॥

शब्दार्थ—जीवोनां अतिशे पापचरित्र एटले माठां आचरण कहेवाने पण अतिशे डुष्कर छे. अर्थात् मुखे कह्यां न जाय एवां छे. इहां दृष्टांत कहे छे. हे जगवन्! जे स्त्रीने में धारण करी

छे, ते स्त्री म्हारी वहेन छे? भगवत कह्यु ते स्त्री, ते त्हारी वहेनज छे. गुरु महाराज कहे छे के, हे शिष्य! त्हारी आगल आ दृष्टांत कह्युं. ॥ ५७ ॥

जलबुवबुतरलं जीयं, अथिरा लच्छीवि भंगुरो देहो ॥
तुच्छा य कामभोगा, निवधणं दुक्खलक्खाण ॥५८॥

शब्दार्थ–जीवितव्य जलना परपोटा जेवु छे, लक्ष्मी अस्थिर छे, देह क्षणभंगुर छे तेमज कामभोग तुच्छ अने लाखो गमे दुःखना कारण छे ॥ ५८ ॥

नागो जहा पंकजलावसन्नो, दहुं थलं नाभिसमेइ तीर ॥
एव जिआ कामगुणेसु गिद्धा, सुधम्ममग्गे न रया हवंति॥

शब्दार्थ–जेम हाथी कादववाला जलमा बूड्यो छतो जो के, स्थलने देखे छे, तथापि त्याथी काठे आवी शकतो नथी तेम कामगुणमा गृद्ध थयेला जीवो पण सुधर्मनां मार्गमां रक्त थता नथी ॥ ५९ ॥

जह विट्ठपुंजखुत्तो, कीमि सुहं मन्नए सयाकालं ॥
तह विसयासुइरत्तो, जीवोवि मुणइ सुहं मूढो ॥६०॥

शब्दार्थ–जेम विष्टाना ढगलामा खूचेलो करमीयो (जो के तेमा सदाकाल दुःख छे, तथापि) तेमा सदाकाल सुख माने छे, तेम विषय रूप अशुचीमा रक्त थयेलो मूढ जीव पण (विषयमा) सुख माने छे ॥ ६० ॥

मयरहरोव जलेहिं, तहवि हु दुप्पुरउ इमे आया ॥
विसयामिसंमि गिद्धो, भवे भवे वच्चइ न तत्तिं ॥६१॥

शब्दार्थ–जेम पाणीये करी समुद्र पूरावो दुष्कर छे, तेम विषयरूप आमिष (मांस) मां गृद्ध थयेलो आ आत्मा पण विष

यथी पूरावो डुष्कर छे अने तेने लीधेज ते ज्ञव ज्ञवमां तृप्ति पामतो नथी. ॥ ६१ ॥

विसय विसट्टा जोवा, जप्नडरूवाइएसु विविहेसु ॥
ज्ञवसयसहस्सडुलहं, न मुणंति गयंपि निअजम्मं ॥ ६२॥

शब्दार्थ—विषयरूप विषथी पीमायेला जीवो जदूत्नटरूप आदि देइ विविध प्रकारनां रूपथी पोतानो ज्ञव गमावे छे; परंतु तेज लाख ज्ञवे पण डुर्लन्न एवो पोतानो मनुष्य जन्म व्यर्थ जाय छे एम नथी जाणता. ॥ ६२ ॥

चिठंति विसयविवसा, मुत्तं लङ्गंपि केवि गयसंका ॥
न गणंति केवि मरणं, विसयंकुससल्लिया जीवा ६३

शब्दार्थ—विषयरूप अंकूशे साल्या एवा जीवो विषयने वइय थका रहे छे, तथा मूको छे लाज जेमणे अने गयेली छे शंका जेमने एवा केटलाएक जीवो (विषयने माटे) मरणने पण नथी गणता. ॥ ६३ ॥

विसयविसेणं जीवा, जिणधम्मं हारिऊण हा नरयं ॥
वच्चंति जहा चित्त य, निवारिउ बंन्नदत्तनिवो ॥ ६४ ॥

शब्दार्थ—खेद थाय छे के, विषयरूप विषथी जीवो जिनधर्मने हारो नरके जाय छे. एज कारणथी चित्र मुनिये ब्रह्मदत्त राजाने विषयथी निवार्‍यो हतो. ॥६४॥

धिद्धो ताण नराणं, जे जिणवयणामयंपि मुत्तूणं ॥
चउगइविमंबणाकरं, पियंति विसयासवं घोरं ॥६५॥

शब्दार्थ—धिक्कार थाउ! धिक्कार थाउ! तेवा पुरुषोने के, जे जिन वचनरूप अमृतने मूकोने चारे गतिनी विटंबना करावनार विषय रूप घोर मदिराने पीए छे!!! ॥६५॥

मरणेवि दीणवयणं, माणधरा जे नरा न जंपंति ॥
तेवि हु कुणंति लल्लिं, बालाणं नेहगहगहिला ६६

शब्दार्थ—मानने धारण करनारा जे पुरुषो मरण आवे छते पण दीन वचन नहोता बोलता, तेज पुरुषो स्त्रीयोना स्नेहरूप ग्रहथी घेला थइने दीन वचनो बोले छे ॥६६॥

सक्कोवि नेव खंडइ, माहप्प मडुप्फुरं जए जेसिं ॥
तेवि नरा नारीहिं, कराविआ निय य दासत्तं ॥६७॥

शब्दार्थ—आ जगत्मां जे पुरुषोना महात्म्य अने महिमाने शक्रेंद्र पण न खंडन करी शके, तेवा पुरुषोनी पासे पण स्त्रीयोए पोतानु दासपणु कराव्यु ॥६७॥

जउनंदणो महप्पा, जिणभाया वयधरो चरमदेहो ॥
रहनेमी राइमइ, रायमइ कासि ही विसया ॥६८॥

शब्दार्थ—धिक्कार थाओ विषयोने ! के, यादवना पुत्र, म्होटो छे आत्मा जेनो, नेमिनाथ जिनराजना भाइ, चार महाव्रत धारक अने चरम शरीरी एवा रथनेमीये पण राजीमती साथे रागमति करी ! ॥ ६८ ॥

मयणपवणेण जइता-रिसावि सुरसेलनिच्चला चलिया ॥
ता पक्कपत्तसत्ता—ण इयरसत्ताण का वत्ता ॥६९॥

शब्दार्थ—जो के मदन रूप पवनथी मेरुपर्वत सरखा निश्चल मुनियो चलि गया, तो पाका पान जेवा सत्ववाला बीजा जीवोनी शी वात ? ॥ ६९ ॥

जिप्पंति सुहेणं चिय, हरिकरिसप्पाइणो महाकूरा ॥
इक्कुच्चिय दुज्जेयो, कामो कयसिवसुहविरामो ॥७०॥

शब्दार्थ—सिंह, हाथी अने सर्पादिक महा क्रूर जीवोने

सुखेथी जीताय, परंतु करयो छे मोक्षना सुखथी विराम जे ऐ एवो एक काम जोतवो डुर्जय छे. ॥ ७० ॥

विसमा विसयपिवासा, अणाइन्नवज्ञावणाइ जीवाणं
अइडुज्जेयाणी इंदियाणि तह चंचलं चित्तं ॥७१॥

शब्दार्थ—जीवोने विषम एवा विषयनी तृषा अनादिनी संसारनी नावना छे. इंडियो अति डुर्जय छे तेम चित्त पण चंचल छे.

कलिमल अरइ अ नुक्खी, वाहो दाहाइ विविह असुहाइं
मरणंपि य विरहाइसु, संपज्जइ कामतवियाण ॥७२॥

शब्दार्थ—कामथी तपेला जीवोने कलिमल, अरति, नूख, दाहादिक व्याधि, विविध प्रकारनां डुःख, प्रियजननो वियोग अने मरण पण थाय छे. ॥ ७२ ॥

(काव्यम्.)

पंचिंदियविसयपसंगरेसि, मणवयणकायनविसंवरेसि
तंवाहिसि कत्तिय गलपएसि, जं अठकम्मं नवि निज्जरेसि

शब्दार्थ—जे प्राणी पंचेंडियना विषय प्रसंगने माटे मन, वचन अने कायाने नथी संवरतो, तथा ज्ञानावरणादि आठ कर्मोने नथी निर्जरतो; ते प्राणी पोतना गलानी जग्याए कातर वाहे छे. ॥ ७३ ॥

किं तुमंधोसि किंवासि धत्तूरिज,
अहव किं सन्निवाएण आऊरिज ॥
अमयसमधम्म जं विसव अवमन्नसे,
विसयविसविसम अमियंव बहु मन्नसे ॥ ७४ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! शुं तुं आंधलो छे ? शुं तें धंतूरो खाधो छे ? अथवा शुं तुं सन्निपात रोगे वींटाएलो छे ? के, जे कारण

माटे अमृत समान जिनधर्मने विषनी पेठे अवगणे छे ? अने विषम एवा विषय रूप विषने अमृतनी पेठे बहु मानेछ. ॥७४॥

तुज्झ तुह नाणविन्नाणगुणडंबरो,
जलणजालासु निवडतु जिअ निप्परो ॥
पयइ वामेसु कामेसु जं रज्जसे,
जेहिं पुण पुणवि निरयानले पच्चसे ॥ ७५॥

शब्दार्थ–हे जीव ! त्हारु ज्ञान, विज्ञान अने गुणनो आडंबर, ते सर्वे निरंतर अग्निनी ज्वालामा पडो, जे कारण माटे तु प्रकृतिये वांका एवा कामभोगमा राचे छे, जेथी तुं फरी फरीने नरकमा रहेलो अग्निनी ज्वालामां पचीश ॥ ७५ ॥

दहइ गोसीस सिरिखंड छारकए,
छगल गहणट्ठ मेरावण विक्कए ॥
कप्पतरु तोडि एरंड सो वावए,
जुज्जि विसएहिं मणुअत्तणं हारए ॥ ७६ ॥

शब्दार्थ–जे प्राणी अल्प एवा विषयसुखने माटे मनुष्यपणाने हारे छे, ते प्राणी राखने माटे गोशीर्षचंदन अने सूखडने बाले छे, बोकडो ग्रहण करवा माटे ऐरावत हाथीने वेचे छे अने कल्पवृक्षने उखेडी नाखी एरंडाने वावे छे ॥ ७६ ॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

अधुवं जीवियं नच्चा, सिद्धिमग्ग वियाणिया ॥
विणिअट्टिज्ज भोगेसु, आउ परिमिअ मप्पणो ॥७७॥

शब्दार्थ–जीवितव्यने अशाश्वत जाणीने, मोक्ष मार्गना सुखने शाश्वत जाणीने अने आउखु अपरिमित (प्रमाण विनानु) जाणीने भोगथी विशेष निवर्त्तवु ॥ ७७ ॥

(आर्यावृत्तम्)

सिवमग्गसंठिआणवि, जह दुज्जेया जियाण पण विसया
तह अन्नं किंपि जए, दुज्जेयं नत्थि सयलेवि ॥७८॥

शब्दार्थ—जेम मोक्ष मार्गमां रहेला जीवोने पण पांच विषयो दुर्जय छे, तेम सर्व जगत्मां बीजुं कोइ पण दुर्जय नथी.

सविमंकुडूमरूवा, दिठ्ठा मोहेइ जा मणं इत्थी ॥
आयहियं चिंतंता, दूरयरेणं परिहरंति ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ—विकार सहित मनोहर रूपवाली एवी जे स्त्री, ते दीठी छती मनने मोहित करेछे. ते कारण माटे पोताना आत्मानुं हित चिंतवनार पुरुष तेवी स्त्रीने दूरथीज त्याग करे छे॥७९॥

सच्चं सुअंपि सीलं, विन्नाणं तह तवंपि वेरग्गं ॥
वच्चइ खणेण सव्वं, विसयविसेणं जईणंपि ॥८०॥

शब्दार्थ—सत्य, श्रुत, शील, विज्ञान, तप तेमज वैराग्य; ए सर्वे मुनिनां पण विषयरूप विषथी क्षणमात्रमां जतां रहेछे.

रे जीव समइविगप्पिय, निमेससुहलालसो कहं मूढ
सासयसुहमसमतमं, हारिसि ससिसोअरं च जसं ॥८१॥

शब्दार्थ—रे जीव ! पोतानी मतिये कल्पेला अने निमेषमात्र—आंख मींचीने उघाडीये एटली वार सुखने आपनारा एवा विषय सुखनी लालचमां पडीने हे मूढ ! चंद्रमा समान उज्वल जशवाला अने जेनां समान जगत्मां बीजुं सुख नथी एवां शाश्वत सुखने तुं केम हारी जाय छे ? ॥ ८१ ॥

पज्जलिओ विसयअग्गी, चरित्त सारं डहिज्ज कसिणंपि ॥
सम्मत्तंपि विराहिय, अणंतसंसारियं कुज्जा ॥८२॥

शब्दार्थ—विषय रूप अग्नी प्रजल्यो छतो समस्त चारित्र

ना सारने वाले छे अने समकितने विराधीने अनंतसंसारीपणा ने करे छे ॥ ७२ ॥

जीसणजवकतारे, विसमा जीवाण विसयतिन्हाउ ॥
जाए नमिया चउद-स्सपुविवि रुलंति हुं निगोए ॥७३॥

शब्दार्थ-विद्दामणी जव अटवीमा जीवोने विपयनी तृष्णा विपम छे जे तृष्णाए नडायेला चौद पूर्वियो पण निगोदमा रुले छे।

हा विसमा हा विसमा, विसया जीवाण जेहिं पमिबंधा ॥
हिमंति जवसमुद्दे, अणंतडुक्खाइ पावंता ॥७४॥

शब्दार्थ-हा! हा! विपम एवा विपयोथी जे जीवो बंधायेला छे, तेउ अनत डुखने पामता थका जव समुद्रमा ढींमे छे ७४

मा इंदजालचवला, विसया जीवाण विज्जुतेअसमा ॥
खणदिठा खणनठा, ता तेसि को हु पमिबंधो ॥७५॥

शब्दार्थ-मायावी इन्द्रजाल जेवा, चपल अने वीजलीना ऊवकारा समान एवा विपयो जीवोने क्षणमां देखाय छे अने क्षणमा नाश पामे छे, तो तेवा विपयोमा शो प्रतिबंध करवो?

सत्तु विस पीसाउ, वेआलो हुअवहोवि पज्जलिउ ॥
तं न कुणइ जं कुविया, कुणंति रागाइणो देहो ॥७६॥

शब्दार्थ-शत्रु, विप, पिसाच, वेताल अने प्रज्वलित थयेलो अग्नि, ते सर्वे कोप्या थका पण जे डुःख नथी करता; ते डुख देहने विपे रागादिक करे छे. ॥ ७६ ॥

जो रागाइण वसे, वसम्मि सो सयलडुक्खलक्खाणं ॥
जस्स वसे रागाइ, तस्स वसे सयलसुक्खाइं ॥७७॥

शब्दार्थ-जे जीवो रागादिकने वश्य छे, ते सर्व प्रकारना लाखो डुखने वश्य छे अने जेना वश्यमा रागादिक छे अर्थात्

जेणे रागादिकने पोताने वश्य कर्या छे, तेना वश्यमां सर्व प्रकारनां सुख छे. ॥ ८७ ॥

केवल दुहनिम्मविए, पडियो संसारसायरे जीवो ॥
जं अणुहवइ किलेसो, तं आसव हेउअं सव्वं ॥८८॥

शब्दार्थ—आ जीव केवल दुःखे निपजावेला संसार समुद्रमां पड्यो छे अने त्यां जे क्लेशने (दुःखने) अनुभवे छे, ते सर्व आश्रवनां कारण छे. ॥ ८८ ॥

ही संसारे विहिणा, महिलारूवेण मंडिअं जालं ॥
बज्झंति जत्थ मूढा, मणुआ तिरिआ सुरा असुरा ८९

शब्दार्थ—ही इति खेद ! आ संसारमां स्त्रीना रूपे करी विधाताए जाल मांड्यो छे. जे जालमां मूढ एवा मनुष्यो, तिर्यंचो, सुरो अने असुरो बंधाय छे ! ॥ ८९ ॥

विसमा विसय भुअंगा,जेहिं डसिआ जिआ भववणंमि
कीसंती दुहग्गीहिं, चुलसीई जोणि लखेसु ॥९०॥

शब्दार्थ—भव रूपी वनमां अर्थात् संसार रूपी वनमां रखडता एवा जे जीवोने विषम एवा विषय रूप सर्पो डश्या, ते जीवो दुःख रूप अग्निये दुःख पामता थका चोराशीलाख जीवाजोनिमां क्लेश पामे छे. ॥ ९० ॥

संसारचारगिम्हे, विसयकुवाएण लुक्किया जीवा ॥
हियमहियं अमुणंता, अणुहवइ अणंतदुक्खाइं ॥९१॥

शब्दार्थ—संसारना मार्ग रूप ग्रिष्मकालमां विषय रूप नठारा वायरेथी लूकायेला जीवो हित अहितने न जाणता थका अनंत दुःखोने अनुभवे छे. ॥ ९१ ॥

हा हा दुरंत दुट्ठा, विसय तुरंगा कुसिक्खिया लोए ॥
भीसण भवाडवीए, पाडंति जिआण मुद्धाणं ॥९२॥

शब्दार्थ–हा ! हा ! आ संसाररूप लोकमा दुःखे करी अंत छे जेनो, दुष्ट अने विपरीत शीखवेला एवा विषयरूप घोडा मुग्ध जीवोने भयंकर एवी भवरूप अटवीमां पाडे छे ९२

विसयपिवासातत्ता, रत्ता नारीसु पंकिलसरंमि ॥
दुहिया दीणा खीणा, रुलंति जीवा भववणंमि ९३

शब्दार्थ–विषयरूप तृषाथी तपेला अने स्त्रीमा रक्त थयेला जीवो भवरूपी वनमा स्त्रीरूप कादववाला सरोवरमा दुखीया, दीन अने क्षीण थया छता लोटे छे ॥ ९३ ॥

गुणकारियाइ धणियं, धिइरज्जु निअंतिआइ तुह जीव
निययाइ इंदियाइ, वल्लिनिअत्ता तुरंगुव्व ॥९४॥

शब्दार्थ–हे जीव ! धिरजरूप दोरडाथी वश्य राखेली पोतानी इन्द्रियो लगाममां वश्य राखेला घोडानी पेठे अतिशे फायदाकारक छे ॥ ९४ ॥

मणवयणकायजोगा, सुनिअत्ता तेवि गुणकरा हुंति ॥
अनिअत्ता पुण भंजंति, मत्तकरिणुव्व सीलवणं॥९५॥

शब्दार्थ–मन, वचन अने कायाना योग वश्य कर्या छता ते पण गुणकारी थाय छे अने नहि वश्य कर्या छता मदोन्मत्त हस्तिनी पेठे शीलरूप वनने भांगे छे. ॥ ९५ ॥

जह जह दोसा विरमइ, जह जह विसएहिं होइ वेरग्गं ॥
तह तह विन्नायव्वं, आसन्नं से य परमपयं ॥ ९६ ॥

शब्दार्थ–जेम जेम दोषो विराम पामे छे अने जेम जेम विषयथी वैराग्य थाय छे, तेम तेम जाणवु के, तेने (मोक्ष) टुकडु थाय छे ॥ ९६ ॥

दुक्करं मेएहिं कयं, जेहिं समत्थेहिं जुव्वणत्थेहिं ॥
भग्गं इंदियसिन्नं, धिइपायार विलग्गेहिं ॥९७॥

शब्दार्थ–जे पुरुष पोतानी सामर्थ्यपणाथी जोवन अवस्थामां इंद्रियरूप सैन्यने भागीने धिरजरूप प्राकार (गढ)ने वलग्या, ते पुरुषे दुष्कर काम कर्युं एम जाणवुं. ॥ ९७ ॥

ते धन्ना ताण नमो, दासोऽहं ताण संजमधराणं ॥
अद्धच्छि पच्छिराउ, जाण न हियए खमक्कंति ॥९८॥

शब्दार्थ–तेज पुरुषोने धन्य छे, तेमनेज अमे नमस्कार करीए छीए अने तेज संयमधारीना अमे दास छीए के, जे पुरुषोनां हृदयमां अर्द्धि आंखे जोनारी अर्थात् कटाक्ष नेत्रे जोनारो स्त्री खटकती नथी. ॥ ९८ ॥

किं बहुणा जइ वंछसि, जीव तुमं सासयं सुहं अरुहं ॥
ता पियसु विसयविमुहो, संवेगरसायणं निच्चं ॥९९॥

शब्दार्थ–वधारे कहेवाथी शुं ? हे जीव ! जो तुं निरोग एवा शाश्वत सुखने वांछतो होय, तो विषयथी विमुख था अने निरंतर संवेग रसायणने पी. ॥ ९९ ॥

॥ इति श्री इंद्रियपराजयशतक समाप्तम् . ॥

॥ श्री वैराग्य शतकम् ॥

संसारंमि असारे, नत्थि सुहं वाहिवेअणापउरे ॥
जाणंतो इह जीवो, न कुणइ जिणदेसियं धम्मं ॥१॥

शब्दार्थ–असार तेमज व्याधि[1] अने वेदनाथी[2] भरपूर एवा आ संसारमां सुख नथी, एम जाणतो छतो जीव जिनराजे कहेला धर्मने आचरतो नथी. ॥ १ ॥

---

१ शरीर संबंधि दुःख, २ मन संबंधि दुःख.

अद्य कल्लं पर परारिं, पुरिसा चिंतंति अत्थसंपत्ति ॥
अंजलिगयंव तोयं, गलंतमाऽऽउ न पिछंति ॥२॥

शब्दार्थ–पुरुषो " आज, काल, पहोर अथवा परार मने धन संपत्ति मलशे " एम विचार करे छे, परंतु अंजलीमां रहेला पाणीनो पेठे गलो जता आयुष्यने नथी जोता ॥ २ ॥

जं कल्ले कायव्वं, तं अज्ज चिय करेह तुरमाणा ॥
बहुविग्धो हु मुहुत्तो, मा अवरण्हं पडिक्खेह ॥३॥

शब्दार्थ–हे प्राणीयो! जे काले करवा योग्य होय तेने आजेज करो कारणके, एक मुहूर्तमां पण बहु विघ्नो आवी पडे छे, माटे आवता दिवसनी वाट न जूओ ॥ ३ ॥

ही संसारसहावं, चरियं नेहाणुरायरत्तावि ॥
जे पुव्वण्हे दिठ्ठा, ते अवरण्हे न दीसंति ॥४॥

शब्दार्थ–आ संसारना स्वभावना आचरणने जोइने अमने खेद थाय छे के, स्नेहना अनुरागमां आसक्त एवा स्वजनो सवारे देखाता हता ते साजे देखाता नथी ॥ ४ ॥

मा सुअह जग्गिअव्वे, पलाइअव्वमि कीस वीसमह ॥
तिन्नि जणा अणुलग्गा, रोगो अ जरा अ मच्चू अ ५

शब्दार्थ–हे लोको! जागवाने अवसरे अर्थात् धर्मकृत्य करवाने वखते केम सूइ रहो छो ? अर्थात् आलस करो छो ? वली नासी जवाना स्थानके केम विसामो करो छो ? कारणके, रोग, जरा अने मृत्यु ए त्रण तमारी पुठे लागेला छे ॥ ५ ॥

दिवसनिसाघडिमालं, आउसलिलं जीआण घित्तूणं
चंदाइच्चबइल्ला, कालरहट्टं भमाडंति ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–चंद्र सूर्यरूप बलदो रात्रि दिवसरूप घडानी पं

क्ति वडे जीवोनां आयुष्यरूप पाणीने खेंची काढता छता काल रूप रेंटने फेरवे छे ॥ ६ ॥

सा नत्थि कला तं नत्थि, उसहं तं नत्थि किंपि विन्नाणं॥
जेण धरिज्जइ काया, खज्जंती कालसप्पेणं ॥७॥

शब्दार्थ—हे भव्य जीवो! कालरूप सर्पथी भक्षण कराता देहने जेनाथी रक्षण करीये एवी कोइ कला नथी, तेवुं कोइ औषध नथी अने तेवुं कोइ विज्ञान पण नथी. ॥७॥

दीहरफणिंदनाले, महिअरकेसर दिसामहदलिल्ले ॥
उ पीअइ कालभमरो, जणमयरंदं पुहविपउमे ॥८॥

शब्दार्थ—आ घणी खेदनी वात छे के, कालरूप भमरो म्होटा शेषनागरूप नालवालां, पर्वतोरूप केशरावालां, दिशाउरूप पत्रवाला, पृथ्वीरूप कमलने विषे मनुष्योरूप मकरंदनुं पानकरेछे।

छायामिसेण कालो, सयलजीआणं छलं गवेसंतो ॥
पासं कहवि न मुंचइ, ता धम्मे उज्जमं कुणह ॥९॥

शब्दार्थ—छलनी शोध करतो काल छायानां मिषथी सर्व प्राणीयोनां पडखांने नथी मूकतो, माटे हे भव्य जीवो! तमे धर्मने विषे उद्यम करो ॥ ९ ॥

कालंमि अणाईए, जीवाणं विविहकम्मवसगाणं ॥
तं नत्थि संविहाणं, संसारे जं न संभवइ ॥ १० ॥

शब्दार्थ—अनादि काल चक्रमां भमता अने नाना प्रकारनां कर्मने वश रहेला जीवोने संसारमां कोइ पण एकेंद्रियादि भेद नथी प्राप्त थयो, एम नथी. अर्थात् एकेंद्रियादि सर्वे भेदोमां भमेलो छे

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

बंधवा सुहिणो सव्वे, पिअमाया पुत्तभारिया ॥
पेअवणाउ निअत्तंति, दाऊणं सलिलंजलिं ॥११॥

शव्दार्थ–वाधवो, सुहृदो, माता, पिता, पुत्र अने स्त्री, ए सर्वें मरी गयेला मनुष्यने पाणीनो अंजलो आपीने पछी श्मशानथी पाछा आवे छे ॥ ११ ॥

(आर्यावृत्तम्)

विहम्मति सुआ विहम्मं–ति बंधव वल्लहा य विहम्मंति ॥
इक्को कहवि न विहम्मइ, धम्मो रे जीव जिणभणिउ १२

शव्दार्थ–अरे जीव ! पुत्रो, वाधवो अने स्त्रीयो ए सर्वेनो वियोग थाय छे, परतु श्री जिनराजे कहेला एक धर्मनो वियोग क्यारे पण थतो नथी ॥ १२ ॥

अम्मकम्मपासवद्धो, जीवो संसारचारए ठाइ ॥
अम्मकम्मपासमुक्को, आया सिवमंदिरे ठाइ ॥१३॥

शव्दार्थ–आठ कर्मरूप पासाथी वधायलो जीव संसाररूप वंधीखानामा रहे छे अने आठ कर्मपासथी छूटेलो आत्मा मोक्ष मदिरमा वसे छे ॥ १३ ॥

विहवो सज्जणसंगो, विसयसुहाइं विलासललिआइं ॥
नलिणीदलग्गघोलिर, जललवपरिचचलं सव्व ॥१४॥

शव्दार्थ–लक्ष्मी, स्वजन सयोग अने विलासे करीने सुंदर एवा विपय सुख ए सर्वे कमलना पत्र उपर कपता रहेला पाणीना विंदु समान अत्यत चपल छे ॥ १४ ॥

तं कत्थ वलं तं क–त्थ जुवणं अंगचंगिमा कत्थ ॥
सव्वमणिच्चं पिच्छह, दिठ्ठंनठ्ठ कयंतेण ॥१५॥

शव्दार्थ–हे प्राणीयो ! ते वल, ते यौवन अने ते अगनु सुदरपणु क्या गयु ? ते कारण माटे काले करीने दीठा न दीठा जेवुं आ सर्व अनित्य जाणो ॥१५॥

घणकम्मपासबद्धो, नवनयरचउप्पहेसु विविहाउ ॥
पावइ विडंबणाउ, जीवो को इह सरणं से ॥१६॥

शब्दार्थ—गाढ कर्मरूप पासाथी बंधायलो जीव संसाररूप नगरना चौटामां विविध प्रकारनी विटंबना पामे छे, माटे आ संसारमां ते जीवनुं कोण रक्षण करनार छे ? ॥१६॥

घोरंमि गप्रवास, कलमलजंबालअसुइबीभच्छे ॥
वसिउं अणंतखुत्तो, जीवो कम्माणुभावेण ॥१७॥

शब्दार्थ—जीव, घोर अने उदरमां रहेला पदार्थोथी अशुचि तेमज भयंकर एवा गर्भवासमां पोतानां कर्मना प्रभावथी अनंतीवार वश्यो छे. ॥१७॥

चुलसीइ किर लोए, जोणीणं पमुहसयसहस्साइं ॥
इक्किक्कम्मि अ जीवो, अणंत खुत्तो समुप्पनो ॥१८॥

शब्दार्थ—शास्त्रमां चोराशो लाख योनी कही छे अने ते दरेक योनीमां जीव अनंतीवार उत्पन्न थयो छे. ॥१८॥

मायापियबंधूहिं, संसारत्थेहिं पूरिउ लोउ ॥
बहुजोणिनिवासीहिं, नय ते ताणं च सरणं च ॥१९॥

शब्दार्थ—संसारमां रहेला अने घणी योनीमां निवास करनारां माता, पिता अने बंधुउए करीने आ लोक भरपूर थयो छे; परंतु ते माता पिता विगेरे त्हारुं रक्षण करनार नथी, तेम ते त्हारे शरण करवा योग्य नथी. ॥१९॥

जीवो वाहिविलुत्तो, सफरो इव निजले तडप्फडइ ॥
सयलोवि जणो पिच्छइ, को सक्को वेअणाविगमे ॥२०॥

शब्दार्थ—पीडाथी व्याप्त थयेलो जीव जल रहित स्थानमां मांछलानी पेठे तरफडे छे. सर्व लोक ते जीवने जूए छे, पण तेनो

वेदना दूर करवा कोण समर्थ होय? अर्थात् कोइ नथी. २०

मा जाणसु जीव तुम, पुत्त कलत्ताइ मज्झ सुहहेऊ॥
निउणं बंधणमेअं, ससारे संसरंताणं ॥ २१ ॥

शब्दार्थ–हे जोव! तु "आ पुत्र कलत्रादि म्हारा सुखना कारण थशे " एम तु न जाणीश. कारणके, ससारमा भ्रमता जीवोने ते पुत्रादि उलटा बधनरूप थाय छे ॥२१॥

जणणी जायइ जाया, जाया माया पिआ य पुत्तो य ॥
अणवठा संसारे, कम्मवसा सव्वजीवाणं ॥ २२ ॥

शब्दार्थ–ससारमा कर्मना वश्यथो सर्व जीवोने एक जात नी अवस्था रहेलो नथो कारणके, पूर्वना भवमा माता होय ते बीजा भवमा स्त्री थइ जाय, स्त्री होय ते माता थाय, पिता होय ते पुत्र थाय अने पुत्र होय ते पिता पण थाय ॥ २२ ॥

(अनुष्टुपूवृत्तम्)

न सा जाई न सा जोणी, न तं ठाणं न तं कुलं ॥
न जाया न मुआ जठ, सव्वे जीवा अणंतसो ॥२३॥

शब्दार्थ–जेमा सर्वे जीवो अनतीवार उत्पन्न थया नथी अने मृत्यु पाम्या नथी एवी कोइ जाति, योनो, स्थान के कुल नथी.

(आर्यावृत्तम्.)

तं किंपि नत्थि ठाणं, लोए वालग्गकोडिमित्तंपि ॥
जठ न जीवा बहुसो, सुहदुक्खपरपरं पत्ता ॥२४॥

शब्दार्थ–जेमा जीवो बहुवार सुख दु खनी परपराने नथी पाम्या, एवु लोकमा वालना अग्रभाग जेटलु कोइपण स्थान नथी.

सव्वाउ रिद्धीउ, पत्ता सव्वेवि सयणसंबंधा ॥
ससारे तो विरमसु, तत्तो जइ मुणसि अप्पाणं २५

शब्दार्थ—हे जीव! तने आ संसारमां सर्वे समृद्धि अने सर्वे स्वजनादि संबंध प्राप्त थाय छे, माटे जो पोताने सुखी जाणतो होय तो तेथी विराम पाम. ॥२५॥

एगो बंधइ कम्मं, एगो वहबंधमरणवसणाइं ॥
विसहइ भवंमि भमडइ, एगुच्चिअ कम्मवेलविओ॥२६॥

शब्दार्थ—जीव पोते एकलोज कर्मने बांधे छे, एकलो वध, बंधन अने मरणनी आपत्तिने सहन करे छे; वली एकलोज कर्म थी ठगायो छतो संसारमां भमे छे. ॥२६॥

अन्नो न कुणइ अहिअं, हियंपि अप्पा करेइ न हु अन्नो
अप्पकयं सुहदुक्खं, भुंजसि ता कीस दीणमुहो ॥२७॥

शब्दार्थ—हे प्राणिन्! त्हारुं बीजुं कोइ अहित करतुं नथी. तेमज त्हारुं पोतानुं हित पण तुं पोतेज करे छे, बीजुं कोइ करतुं नथी, माटे तुं पोतानुं करेलुं सुख दुःख भोगवे छे, तो पछी शा कारण माटे दीन मुखवालो थाय छे? ॥२७॥

बहुआरंभविढत्तं, वित्तं विलसंति जीव सयणगणा ॥
तज्जणियपावकम्मं, अणुहवसि पुणो तुमं चेव ॥२८॥

शब्दार्थ—हे जीव! तें पोते बहु आरंभथी मेलवेलुं जे धन छे तेणे करीने त्हारा स्वजनो विलास करे छे अने वली ते आरंभथी उत्पन्न थयेलां पापने तुं पोते एकलोज नरकमां अनुभव करीश.

अह दुक्खिआइ तह भु—क्खिआइ,जह चिंतियाइ डिंभाइ
तह थोवंपि न अप्पा, विचिंतिओ जीव किं भणिमो॥२९

शब्दार्थ—अरे मूर्ख जीव! तें जेवी रीते त्हारा दुःखी थता भूख्या एवा बालकोनो विचार कर्यो छे तेवी रीते त्हारो पोतानो विचार कर्यो नथी, तो हवे तने शुं कहुं? ॥२९॥

खणभंगुरं सरीरं, जीवो अन्नो अ सासयसरूवो ॥
कम्मवसा सबंधो, निब्बंधो इत्थ को तुज्झ ॥ ३० ॥

शब्दार्थ–शरीर क्षणभंगुर अने तेथी जूदो एवो जीव शाश्वत रूपवालो छे वली ए बेनो कर्मना वश्यथी संबंध थयो छे तो पछी हे जीव! त्हारे ए शरीरने विषे मूर्छा शामाटे राखवी जोइये?

कह आय कह चलिअं, तुमंपि कह आगउ कह गमिहो॥
अन्नुन्नंपि न याणह, जीव कुडुंबं कउ तुज्झ ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ–हे जीव! आ कुटुंब क्याथी आव्यु अने क्या गयु? तुं पण क्याथी आव्यो अने क्या जइश? वली तमे परस्पर एक बीजाने जाणता नथी तो पछी ते कुटुंब त्हारु क्याथी? ३१

खणभंगुरे सरीरे, मणुअभवे अब्भपडलसारिछे ॥
सारं इत्तिअमित्तं, जं कीरइ सोहणो धम्मो ॥३०॥

शब्दार्थ–शरीर क्षणभंगुर अने मनुष्यभव मेघना समूह जेवो छे, जेथी उत्तम धर्म आचरवो एज मात्र सार छे ३२

(अनुष्टुब्वृत्तम्)

जम्म दुक्खं जरा दुक्खं, रोगा य मरणाणि य ॥
अहो दुक्खो हु संसारे, जत्थ कीसंति जंतुणो ॥३३॥

शब्दार्थ–जन्म संबंधी दुःख, जरावस्था संबंधी दुःख, रोगो अने मरण ए पण दुःखमय छे, माटे आ संसारज दुःखरूप छे के, जेमा प्राणीयो क्लेश पामे छे ॥३३॥

(आर्यावृत्तम्)

जाव न इंदियहाणी, जाव न जररक्खसी परिफुरइ ॥
जाव न रोगविआरा, जाव न मच्चू समुल्लिअइ ॥३४॥

शब्दार्थ–ज्या सुधीमा इंद्रियो क्षीण थइ नथी, ज्या सुधीमा

जरावस्थारूपी राक्षसी प्रगट थइ नथी, ज्यां सुधीमां रोगविकारो उत्पन्न थया नथी अने ज्यां सुधीमां मृत्यु उदय आव्यु नथी, त्यां सुधीमां धर्म साधन करी लहे. ॥३४॥

जह गेहंमि पलित्ते, कूवं खणीउं न सक्कए कोइ ॥
तह संपत्ते मरणे, धम्मो कह कीरए जीव ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ—जेम घर सलगवा लाग्या पछी कोइ माणस कूवो खोदवाने समर्थ थतो नथी, तेम मरण नजीक आव्या पछी हे जीव! तुं धर्म शी रीते करी सकीश? ॥३५॥

रूवमसासयमेअं, विज्जुलयाचंचलं जए जीअं ॥
संझाणुरागसरिसं, खणरमणीअं च तारुन्नं ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ—आ रूप अशाश्वतुं छे, जगत्मां जीवित विजळीनी पेठे चपल छे अने तारुण्यपणुं पण संध्याना रंग जेवुं क्षण रमणीक छे. ॥ ३६ ॥

गयकन्नचंचलाउ, लच्छीउ तिअसचावसारिच्छं ॥
विसयसुहं जीवाणं, बुज्झसु रे जीव मा मुज्झ ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—जीवोने लक्ष्मीयो हाथीना कान जेवी चंचल अने विषय सुख इंद्रनां धनुष्य सरखुं चपल छे, माटे अरे जीव! तुं बोध पाम, पण मोह न पाम. ॥३७॥

जह संझाए सउणा-णसंगमो जह पहे अ पहिआणं ॥
सयणाणं संजोगो, तहेव खणभंगुरो जीव ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! जेवी रीते संध्या समये पक्षीयोनो अने रस्तामां मुसाफर लोकोनो समागम थायछे, तेवीज रीते आ स्वजनोनो समागम पण क्षणभंगुर छे. ॥३८॥

(उपजाति वृत्तम्)

निसाविरामे परिबोधयामि, गेहे पलित्ते किमहं सुआमि
डज्झतमप्पाणमुवक्खयामि, जं धम्मरहिओ दिअहा गमामि॥

शब्दार्थ–हे जीव! तने आवो विचार केम नथी आवतो के, हु पाछलो चार घडी रात रहे एटले आवो विचार करु के, जे हुं धर्म रहित दिवसो केम गमावु छुं ? घर बलवा माडये छते केम सुइ रहुं छु? अने बलता एवा आत्मानो केम उपेक्षा करु छु?

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

जाजा वच्चइ रयणी, न सा पडिनिअत्तइ ॥
अहम्म कुणमाणस्स, अहला जंति राइओ ॥४०॥

शब्दार्थ–जे जे रात्री दिवसो जाय छे ते ते पाछा आवता नथी कारणके, अधर्म करनार माणसना रात्री दिवस निष्फल जाय छे

जस्स त्थि मच्चुणासक्खं, जस्स व त्थि पलायणं ॥
जो जाणे न मरिस्सामि, सो हु कंखे सुए सिया ॥४१॥

शब्दार्थ–जेने मृत्युनी साथे मित्रता छे, जेने मृत्युथी नासी जवु छे वली जे पुरुष एम जाणे छे के, हुं मरीश नहि, ते पुरुष कदापि आवती काले धर्म करवानी इच्छा करे छे ॥४१॥

(आर्यावृत्तम्)

दमकलिअ करित्ता, वच्चंति हु राइओ अ दिवसा य ॥
आउस संविल्लंता, गयावि न पुणो निअत्तंति ॥४२॥

शब्दार्थ–फालका उपरथी दमकडे सूत्रने उकेलवानी पेठे आयुष्यने उकेलता एवा रात्री दिवसो चाल्या जाय छे अने ते गयेला रात्री दिवसो पाछा आवता नथी. ॥ ४२ ॥

(उपजातिवृत्तम्)

जहेह सीहो व मियं गहाय, मच्चू नरं नेइ हु अंतकाले ॥
न तस्स माया व पिया व भाया, कालंमि तंमिंऽसहरा भवंति

शब्दार्थ–जेम आ लोकमां सिंह मृगने पकडीने मारी नाखे छे तेम मृत्यु माणसने निश्चे विनाश पमाडे छे; पण ते वखते ते माणसने माता, पिता अने भाइ रक्षण करवा समर्थ थता नथी.

(आर्यावृत्तम्)

जिअं जलबिंदुसमं, संपत्तीउ तरंगलोलाउ ॥
सुमिणयसमं च पिम्मं, जं जाणसु तं करिज्जासु ४४

शब्दार्थ–जीवित दर्भना अग्रभाग उपर रहेला जलबिंदु समान, संपत्तियो जलना तरंगो समान अने प्रेम स्वप्न समान छे, माटे जो ते तेवुं जाणतो होय तो धर्म आचर. ॥ ४४ ॥

(रथोद्धतावृत्तम्)

संझरागजलबुब्बुउवमे, जीविए अ जलबिंदुचंचले ॥
जुव्वणे य नइवेगसन्निभे, पावजीव किमियं न बुझसे ४५

शब्दार्थ–संध्या समयनो रंग, पाणीनो परपोटो अने दर्भना अग्रभाग उपर रहेलुं पाणीनुं बिंदु, तेना समान जीवित छते, वली नदीना वेग समान युवावस्था छते हे पाप जीव ! तुं बोध नथी पामतो ए शुं ? ॥ ४५ ॥

(आर्यावृत्तम्)

अन्नत्थ सुआ अन्न-त्थ गेहिणी परिअणोवि अन्नत्थ ॥
भूअबलिब्व कुडुंबं, पक्खित्तं हयकयंतेण ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ–अरे निंदा करवा योग्य काले भूतने बलिदान आपवानी पेठे पुत्रोने जूदी गतिमां, स्त्रीने जूदी गतिमां अने परि

वारने जूदी गतिमा; एम सर्व कुटुंबने जूदु जूदु करी नाख्यु छे.

जीवेण जवेजवे मि-ल्लियाइ, देहाइ जाइ संसारे ॥
ताण न सागरेहिं, कीरइ सखा अणंतेहिं ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ–हे आत्मन्! आ ससारमा जीवे, जवे जवमा जे देहो मेलव्या छे, तेउनी अनता सागरोपमथी पण सख्या थइ शके तेम नथी ॥ ४७ ॥

नयणोदयपि तासि, सागरसलिलाउ बहुयर होइ ॥
गलियं रुयमाणीणं, माऊण अन्नमन्नाण ॥४८॥

शब्दार्थ–हे आत्मन्! ते अपर अपर जन्मनो रुदन करती माताउना आसुना जलनु प्रमाण समुद्रना जलथी पण वधारे छे.

ज नरए नेरइआ, डुहाइ पावंति घोरणताइ ॥
तत्तो अणंतगुणिअ, निगोअमझे डुह होइ ॥४९॥

शब्दार्थ–नरकमा नारकी जीवो जे घोर अनत डुःख पामे छे, तेनाथी अनतगणु डुःख निगोदमा छे. ॥ ४९ ॥

तमिवि निगोअमझे, वसिउ रेजीव विविहकम्मवसा ॥
विसहंतो तिरकडुह, अणतपुग्गलपरावत्ते ॥ ५० ॥

शब्दार्थ–अरे जीव! विविध कर्मना वश्यथी ते निगोदनी मध्ये पण तु तीरुण दुःखने सहन करतो छतो अनत पुद्गलपरावर्त्त काल सुधी वश्यो छे. ॥ ५० ॥

नीहरिअ कहवि तत्तो, पत्तो मणुअत्तणपि रेजीव ॥
तत्नवि जिणवरधम्मो, पत्तो चिंतामणिसरिन्नो ॥

शब्दार्थ–अरे जीव! महा कष्टे करीने
ली तु मनुष्य पणाने पाम्यो छे अने तेमा पण
सरखा जिनेश्वरना धर्मने पाम्यो छे ॥ ५१ ॥

पत्तेवि तंमि रेजीव, कुणसि पमायं तयं तुमं चेव ॥
जेणं ज्जवंधकूवे, पुणोवि पमिन दुहं लहसि ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ—अरे जीव ! ते जिनेश्वर धर्म प्राप्त थया छता पण तुं जेनाथी फरीने पण संसाररूप कूवामां पमीने दुख पमाय एवा प्रमादने करे छे. ॥ ५२ ॥

जवलद्धो जिणधम्मो, न य अणुचिन्नो पमायदोसेणं ॥
हा जोव अप्पवेरि अ, सुबहुं परउ विसूरहिसि ॥५३॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तने जिनेश्वरनो धर्म प्राप्त थयो; पण तें प्रमादना दोषथी तेने सेव्यो नहि; जेथी हे आत्मवैरी ! तुं आगल बहुज खेद करीश. ॥ ५३ ॥

सोअंति ते वराया, पछा समुवठिअंमि मरणंमि ॥
पावपमायवसेणं, न संचिउ जेहिं जिणधम्मो ॥५४॥

शब्दार्थ—जेमणे पापरूप प्रमादना वश्यथी जिनधर्म नथी सेव्यो ते रांक पुरुषो मरण प्राप्त थये छते शोक करे छे. ५४

धी धो धी संसारं, देवो मरिऊण जं तिरी होइ ॥
मरिऊण रायराया, परिपच्चइ निरयजालाए ॥ ५५ ॥

शब्दार्थ—आ संसारनेज धिक्कार छे ! धिक्कार छे !! धिक्कार छे !!! कारणके, देवता मरीने तिर्यंच थाय छे अने चक्रवर्त्ती मरीने नरकनी ज्वालामां पचाय छे. ॥५५॥

जाइ अणाहो जीवो, दुमस्स पुप्फंव कम्मवायहउ ॥
धनधन्नाहरणाइं, घरसयणकुडुंब मिल्हेवि ॥ ५६ ॥

शब्दार्थ—अनाथ जीव धन, धान्य, आजरण, घर, स्वजन अने कुटुंबने त्यजीने कर्मरूप वायुथी हणायो छतो वृक्षनां पुष्पनी पेठे नीचे पमे छे. (नीची गति पामे छे.) ॥५६॥

वसिअं गिरीसु वसिअं, दरीसु वसिअं समुद्दमज्झमि ॥
रुक्खग्गेसु अ वसिअ, ससारे संसरंताणं ॥ ५७ ॥

शब्दार्थ—हे आत्मन्! ससारने विषे भ्रमता एवा ते पर्वतो उपर, गुफामा, समुद्रमा अने वृक्षोना अग्रभागने विषे निवास कर्यो छे.

देवो नेरइउ त्ति-य, कीम-पयगु त्ति माणसो एसो ॥
रूवस्सी य विरूवो, सुहभागी दुक्खभागी य ॥५८॥

शब्दार्थ—हे जीव! तु केटलीक वखत देवता, नारकी, कीडो, पतग अने मनुष्य थयो छे वली तेनो तेज तु केटलीक वखत रूपवत, कुरूपवत, सुखी अने दुःखी थयो छे ॥५८॥

राउत्ति अ दुमगुत्ति अ, एस सपागुत्ति एस वेअविऊ ॥
सामी दासो पुज्जो, खलुत्ति अधणो धणव इत्ति ॥५९॥

शब्दार्थ—एज तु केटली वखत राजा, नोकरी, कंगाल, ब्राह्मण, स्वामी, दास, पूज्य, खल, निर्धन अने धनवत थयो छे.

नवि अत्थि कोइनियमो, सकम्मविणिविट्ठसरिसकयचिट्ठो
अन्नुन्नरूववेसो, नडुव्व परिअत्तए जीवो ॥ ६० ॥

शब्दार्थ—ए पूर्वे कहेलामा कोइ जातनो नियम नथी कारणके, पोते पोताना कर्मनी रचना प्रमाणे चेष्टा करनारो जीव नटनो पेठे जूदा जूदा रुप लइने फर्या करे छे ॥६०॥

नरएसु वेयणाउ, अणोवमाउ असायबहुलाउ ॥
रे जीव तए पत्ता, अणतखुत्तो बहुविहाउ ॥ ६१ ॥

शब्दार्थ—अरे जीव! ते नरकमा उपमा रहित अने अशाता वेदनावाली बहु प्रकारनी वेदनाउ अनतीवार प्राप्त करी छे

देवत्ते मणुअत्ते, पराभिउगत्तणं उवगएणं ॥
भीसणदुहं बहुविह, अणंतखुत्तो समणुभूअं ६२

शब्दार्थ—हे जीव! तें देवपणामां, मनुष्यपणामां परतंत्र पणाने पामवावडे वहु प्रकारनुं ज्ञयंकर दुख अनंतीवार अनुज्ञव्युं छे.

तिरिअगइं अणुपत्तो, ज्ञीममहावेअणा अणेगविहा ॥
जम्मणमरणरहट्टे, अणंतखुत्तो परिज्ञमिन ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! तीर्यंच गतिने पामेलो तुं अनेक प्रकारनी ज्ञयंकर वेदनावाला जन्म मरण रूप रेंहेटमां अनंतीवार ज्ञम्योछुं

जावंति केवि डुक्खा, सारीरा माणसा व संसारे ॥
पत्तो अणंतखुत्तो, जीवो संसारकंतारे ॥ ६४ ॥

शब्दार्थ—संसारमां शरीरसंबंधी अने मनसंबंधी जेटलां कोइ दुखो छे ते सर्वे आ संसाररूप अरण्यमां ज्ञमतो एवो जीव अनंतीवार पाम्यो छे. ॥ ६४ ॥

तण्हा अणंतखुत्तो, संसारे तारिसी तुमं आसी ॥
जं पसमेनं सव्वो—दहीणमुदयं न तीरिज्जा ॥ ६५ ॥

शब्दार्थ—हे जीव! तने तेवा प्रकारनी (तृष्णा) तृषा संसार ने विषे अनंतोवार थइ छे के, जे तृष्णाने शमाववा माटे सर्वे समुद्रोनुं पाणी (तेटलुं धन) पण समर्थ न थाय. ॥६५॥

आसी अणंतखुत्तो, संसारे ते छुहावि तारिसीया ॥
जं पसमेनं सव्वो, पुग्गलकाउवि न तरिज्जा ॥ ६६ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! वली तने संसारमां तेवी क्षुधा अनंती वार उत्पन्न थइ छे के, जे क्षुधाने शमाववाने घृतादि पुद्गल समूहो पण समर्थ न थाय ॥ ६६ ॥

काऊण मणेगाइं, जम्मणमरणपरिअट्टणसयाइं ॥
डुक्खेण माणुसत्तं, जइ लहइ जहिच्छिअं जीवो ॥६७॥

शब्दार्थ—ज्यारे जीव अनेक एवा जन्म मरणना शेंकमो पराव

तेने करीने दुःखथी मनुष्यभव पामे त्यारे ते इच्छित सुख पामे छे.

तं तह दुल्लहलंभं, विज्जुलयाचंचलं च माणुअत्तं ॥
धम्मंमि जो विसीअइ, सो काउरिसो न सप्पुरिसो ६८

शब्दार्थ–जे पुरुष दश दृष्टांतथी दुर्लभ अने विजलीनी पे
ठे चपल एवा ते मनुष्य भवने पामीने धर्मने विषे खेद पामेछे,
ते कायर पुरुष जाणवो पण सत्पुरुष न जाणवो ॥ ६८ ॥

(उपजाति वृत्तम्)

माणुस्सजम्मे तडि लद्धयंमि,जिणिंदधम्मो न कओ अ जेण
तुट्टे गुणे जह धाणुक्कएणं, हत्था मलेवा य अवस्स तेण६९

शब्दार्थ–जेणे मनुष्यजन्मरूप संसारसमुद्रनो कांठो प्राप्त
थया छतां जिनेंद्र धर्म नथी कर्यो तेने जेम धनुष्यनी दोरी
तूटी जवाथी धनुष्यधारी पुरुषने हाथ घसवा पडे छे तेम अ
वश्य हाथ घसवा पडे छे ॥ ६९ ॥

रेजीव निसुणि चंचलसहाव,मिल्हेविणु सयलवि बज्झभाव
नवभेअपरिग्गहविविहजाल, संसारि अत्थि सहुइंदआल

शब्दार्थ–अरे जीव! सांभल तुं चंचल स्वभाववाला आ
सर्व बाह्य भावोने अने नव भेदवाला परिग्रहना विविध समूह
ने मूकीने परलोकमां जइश, माटे संसारमां शरीरादि जे कांइ
देखाय ते सर्व इंद्रजाल समान छे ॥ ७० ॥

पियपुत्तमित्तघरघरणिजाय,
इहलोइअ सव नियसुहसुहावे ॥
नवि अत्थि कोइ तुह सरणि मुक्ख,
इक्कलु सहसि तिरिनिरयदुक्ख ॥७१ ॥

शब्दार्थ–हे मूर्ख ! आ लोक संबंधी सर्व पिता, माता, पुत्र

मित्र, घर अने स्त्री विगेरेनो समूह पोत पोताने सुख करवाना स्वन्नाववालो ले; परंतु तिर्यंच अने नरकनां दुःखने तो तुं एक लोज सहन करीश. ते वखते तेमानुं कोइ त्हारे शरण करवा योग्य नथी. ॥ ७१ ॥

(मागधिकावृत्तम्)

कुसग्गे जह नसबिंडुए, थोवं चिठ्ठ लंबमाणए ॥
एवं मणुआण जीविअं, समयं गोअम मा पमायए ७१

शब्दार्थ—जेम दर्नना अग्रन्नाग उपर रहेलुं पाणीनुं बिंडु थोमो वखत रहे ले, तेम मनुष्यनुं जीवित पण थोमा वखतनुं ले, माटे हे गौतम! एक समय पण प्रमादी थइश नहि. ॥ ७२ ॥

संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोही खलु पिच्च डुल्लहा ॥
नो हू नवणमंति राइज, नो सुलहं पुणरवि जीवियं ७३

शब्दार्थ—हे न्नव्यजीवो ! बोध पामो. शा माटे बोध पा मतो नथी ? मृत्यु पाम्या पठी परन्नवमां बोधि डुर्लन्न ले. गये लां रात्री दिवस पाठा आवतां नथी. तेमज जीवित पण फरी मलवुं सुलन्न नथी ॥ ७३ ॥

म्हरा वुढ्ढा अ पासह, गप्नठावि चयंति माणवा ॥
सेणे जह वट्टयं हरे, एवं आउखयंमि तुट्टइ ॥ ७४ ॥

शब्दार्थ—वालक, वृद्ध अने गर्न्नमां रहेला माणसो मृत्यु पामे ले, तेने तुं जो. वली जेम सिंचाणो तेतरने मारेले तेम आयुष्यनो क्षय थये जीवित त्रुटी जाय ले. ॥ ७४ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

तिहुअणजणं मरंतं, दठ्ठूण नयंति जे न अप्पाणं ॥
विरमंति न पावाउ, धिधि धिठ्ठत्तणं ताणं ॥ ७५ ॥

शब्दार्थ—जे पुरुषो मृत्यु पामता एवा त्रण भुवनना माण सोने जोता छता पोताना आत्माने धर्मने विषे स्थापन करता नथी अने पापथी निवर्त्तता नथी, तेउना धिठपणाने धिक्कार छे ! धिक्कार छे ! ! ॥ ७५ ॥

मा मा जंपह बहुअ, जे बद्धा चिक्कणेहि कम्मेहि ॥
सव्वेसि तेसि जायइ, हियोवएसो महादोसो॥ ७६ ॥

शब्दार्थ—(अयोग्य शिष्योने उपदेश करता गुरुने जोइ योग्य शिष्य गुरुने कहे छे के,) "हे गुरो! जे पुरुषो पोताना चिकणा कर्मथी बधायला छे, तेमने बहु उपदेश न करो, कारणके ते अयोग्य शिष्योने हितोपदेश महा दोषवालो थाय छे ॥७६॥

कुणसि ममत्त धणसय-ण विहवपमुहेसु अणतडुक्खेसु॥
सिढिलेसि आयर पुण, अणतसुक्खंमि मुक्खमि ॥७७॥

शब्दार्थ—हे आत्मन्! तु अनत दु खना कारण एवा धन स्वजन अने लक्ष्मी विगेरेमां ममता करे छे अने वली अनत सुखवाला मोक्षने विषे आदरने शिथिल करे छे ॥ ७७ ॥

ससारो डुहहेऊ, डुक्खफलो डुस्सहडुक्खरूवो अ ॥
न चयति तपि जीवा, अइबद्धा नेहनिअलेहि ॥७८॥

शब्दार्थ—हे जीव! आ ससार दु.खनु कारण, दु ख छे फल जेनु एवो अने दु.सह दु खरूपज छे स्नेहरूप बेडीथी बधायला जीवो ते ससारने पण त्यजी देता नथी. ॥ ७८ ॥

निअकम्मपवणचलिउ, जीवो ससारकाणणे घोरे ॥
का का विडंबणाउ, न पावए डुसहडुक्खाउ ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ—आ घोर ससाररूप अरण्यमा पोताना कर्मरूप पवनथी चचल एवो जीव! जेनाथी दु सह दु ख उत्पन्न थाय छे

एवी कइ कइ वध वंधनादि विटंवना नथी पाम्यो ? अर्थात् सर्व पाम्यो छे. ॥ ७९ ॥

सिसिरंमि सीअलानिल-लहरिसहस्सेहिं जिन्नघणदेहो
तिरिअत्तणंमिऽरन्ने, अणंतसो निहणमणुपत्तो ॥ ८० ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं तिर्यंच जवमां अरण्यने विषे शियालामां शितल पवननी हजारो लहेरोथी जेदायला दृढ देहवालो थइने अनंतीवार मृत्यु पाम्यो छे. ॥८०॥

गिम्हायवसंतत्तो, रन्ने छुहिउ पिवासिउ बहुसो ॥
संपत्तो तिरिअजवे, मरणदुहं बहु विसूरंतो ॥८१॥

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं तिर्यंच जवमां अरण्यने विषे उनालाना तापथी तप्त थयो छतो बहुवार जूख्यो तथा तरश्यो थइने बहु खेद पामतो मृत्यु पाम्यो छे. ॥८१॥

वासासुऽरन्नमज्झे, गिरिनिज्झरणोदगेहिं बज्झंतो ॥
सीआनिलडज्झविउ, मउसि तिरिअत्तणे बहुसो ८२

शब्दार्थ—हे जीव ! तुं तिर्यंच जवमां चोमासाने विषे वनमां पर्वतोनां ऊरणानां पाणीथी खेंचाइने शितल पवनथी दग्ध थयो छतो बहुवार मृत्यु पाम्यो छे. ॥८२॥

एवं तिरिअजवेसु, कीसंतो छुरकसयसहस्सेहिं ॥
वसिउ अणंतखुत्तो, जीवो जीसणजवारन्ने ॥८३॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे तिर्यंच जवमां शेंकडो छुःखोथी क्लेश पामतो जीव जयंकर संसाररूप अरण्यमां अनंतीवार वश्योछे.

छुठ्ठकम्मपलया-निलपेरिउ जीसणंमि जवरन्ने ॥
हिंमंतो नरएसुवि, अणंतसो जीव पत्तोसि ॥ ८४ ॥

शब्दार्थ—हे जीव ! छुष्ट एवां आठ कर्मरूप प्रलयकालना प

वनथी प्रेरायेलो तुं नयकर ससाररूप अरण्यमा चालतो ठतो न रकने विषे पण अनतीवार दुःख पाम्यो छे ॥७४॥

सत्तसु नरयमहीसु, वज्जानलदाहसीअविअणासु ॥
वसिअ अणंतखुत्तो, विलवंतो करुणसद्देहिं ॥ ७५ ॥

शब्दार्थ–हे जीव! वज्राग्निनो दाह छे जेमा तथा अत्यंत शीत वेदना छे जेमा एवी सात नरक पृथ्वीमा तु करुण शब्दथी विलाप करतो ठतो अनंतीवार वस्यो छे ॥७५॥

पियमायसयणरहिओ, दुरंतवाहिहि पीडिओ बहुसो ॥
मणुअभवे निस्सारे, विलाविओ किं न तं सरसि ७६

शब्दार्थ–अरे जीव! आ सार रहित मनुष्यभवमा पिता मातादि स्वजनथी रहित अने महा व्याधिथी बहुवार पीडा पामतो तथा विलाप करतो तु ते मनुष्य भवने शुं नथी सन्भारतो?

पवणुव्व गयणमग्गे, अलक्खिओ भमइ भववणे जीवो ॥
ठाणठाणंमि समु-ज्झिऊण, धणसयणसंघाए ॥ ७७ ॥

शब्दार्थ–जीव आ ससाररूप वनमा ठेकाणे ठेकाणे धन स्वजनना समूहने त्यजी दइ आकाशमा पवननी पेठे अदृश्य थयो ठतो भमे छे ॥७७॥

विध्धिज्जंता असयं, जम्मजरामरणतिक्खकुंतेहिं ॥
दुहमणुहवंति घोरं, संसारे ससरत जीआ ॥७८॥

तहवि खणंपि कयावि हु, अन्नाणभुयंगडंकिआ जीवा
संसारचारगाओ, नयओ विज्जंति मूढमणा ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ–संसारमा भमता एवा जीवो जन्म, जरा अने मरणरूप तीक्ष्ण भालाथी निरतर विधाया ठता घोर दुःखने अनुभवे छे तो पण मूढ मनवाला अने अज्ञानरूप भुजगथी डसायला जीवो क्यारे पण निश्चे ससाररूप बदीखानाथायो क्षणमात्र

उद्वेग पामता नथी. ॥ ८८-८९ ॥

कीलसि किश्रंतवेलं, सरीरवावीइ जह पइसमयं ॥
कालरहट्टघमीहिं, सोसिज्जइ जीविश्रंन्नोहं ॥ ९० ॥

शब्दार्थ—हे जीव! तुं शरीररूपी वाव्यने विषे केटली वखत सुधी क्रीडा करीश? के, जे वाव्यमां समये समये कालरूप रहें टनी घमीयोथी जीवितरूप पाणीनो प्रवाह सूकाइ जायछे.

रे जीव बुझ मा मुझ, मा पमायं करेसि रे पाव ॥
किं परलोए गुरुडुक्ख-न्नायणं होहिसि अयाण ॥९१॥

शब्दार्थ—अरे जीव! तुं बोध पाम. मोह न पाम. अरे पाप! तुं धर्ममां प्रमाद न कर अरे अज्ञान! तुं परलोकमां महा डुःख नो पात्र केम थाय छे? ॥९१॥

बुझसु रे जीव तुमं, मा मुझसु जिणमयंमि नाऊणं ॥
जह्मा पुणरवि एसा, सामग्गी दुल्लहा जीव ॥ ९२ ॥

शब्दार्थ—अरे जीव! तुं बोध पाम अने धर्मस्वरूप जाणीने जिनमतमां मोह न पाम. अरे जीव! कारण के, फरीथी आ सामग्री मलवी डुर्लन्न छे. ॥९२॥

दुलहो पुण जिणधम्मो, तुमं पमायायरो सुहेसी य ॥
दुसहं च नरयदुक्खं, कह होहिसि तं न याणामो ॥९३॥

शब्दार्थ—जिनधर्म फरीथी मलवो डुर्लन्न छे. तेम तुं प्रमादनो खाण अने सुखनी इछा करनारो छे. वली नरक डुःख डुःसह छे, माटे हुं नथी जाणतो के, परलोकमां तुं केम थइश, अर्थात् त्हारी शी गति थशे? ॥९३॥

अथिरेण थिरो समले-ण, निम्मलो परवसेण साहीणो॥
देहेण जइ विढप्पइ, धम्मो ता किं न पज्जत्तं ॥ ९४ ॥

शब्दार्थ—जो अस्थिर, मलिन अने परस्वाधिन एवा देहथी

स्थिर, निर्मल अने स्वाधिन एवो धर्म मेलवी शकाय तो पछी शुं प्राप्त कर्युं न केहवाय ? ॥९४॥

जह चिंतामणिरयणं, सुलहं न हु होइ तुच्छविहवाणं ॥
गुणविहववज्जिआणं, जिआण तह धम्मरयणंपि ९५

शब्दार्थ–अल्प पुण्यवालाने जेम चिंतामणि रत्न सुलभ नज होय तेम गुणविभव रहित जीवोने धर्मरत्न पण सुलभ न होय

जह दिट्ठीसंजोगो, न होइ जच्चंधयाण जीवाणं ॥
तह जिणमयसंजोगो, न होइ मिच्छंधजीवाणं ॥ ९६ ॥

शब्दार्थ–जेम जन्मांध जीवोने आंखोथी देखवुं थतुं नथी तेम मिथ्यात्वथी आंधला जीवोने जिनमतनो संयोग थतो नथी

पच्चक्खमणंतगुणो, जिणंदधम्मे न दोसलेसोवि ॥
तहवि हु अन्नाणंधा, न रमंति कयावि तंमि जिआ ९७

शब्दार्थ–प्रत्यक्ष एवा अनंतगुणवाला जिनराजना धर्मने विषे दोषनो लेश मात्र नथी तोपण अज्ञानथी आंधला जीवो निश्चे ते धर्मने विषे क्यारे पण रमता नथी ॥९७॥

मिच्छे अणंतदोसा, पयडा दीसंति नवि य गुणलेसो ॥
तहवि य तं चेव जिया, हा मोहंधा निसेवंति ॥ ९८ ॥

शब्दार्थ–मिथ्यात्वथी प्रगट अनंत दोषो देखाय छे अने गुणलेश देखातो नथी तोपण मोहथी आंधला जीवो ते मिथ्यात्वनेज सेवे छे ए घणुं आश्चर्य छे ॥९८॥

धि द्धी ताण नराणं, विन्नाणे तह गुणेसु कुसलत्तं ॥
सुहसच्चधम्मरयणे, सुपरिक्खं जे न जाणंति ॥९९॥

शब्दार्थ–सुखरूप अने सत्यरूप धर्मरत्नने विषे जे पुरुषो उत्तम परीक्षा नथी जाणता, ते पुरुषोना विज्ञानने विषे अने गुणने विषे कुशलपणाने धिक्कार थाओ ! धिक्कार थाओ ! ! ९९

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

जिणधम्मोऽयं जीवाणं, अप्पुवो कप्पपायवो ॥
सग्गापवग्गसुक्खाणं, फलाणं दायगो इमो ॥ १०० ॥

शब्दार्थ–आ जिनधर्म जीवोने अपूर्व कल्पवृक्ष छे, तेथी ए कल्पवृक्ष स्वर्ग अने मोक्षनां सुखरूप फलोनो आपनार छे. १००

धम्मो बंधु सुमित्तो अ, धम्मो अ परमो गुरु ॥
मुक्खमग्ग पयट्टाणं, धम्मो परमसंदणो ॥ १०१ ॥

शब्दार्थ–धर्म एज बंधु अने उत्तम मित्र छे. वली धर्म उत्तम गुरु छे. तेमज धर्म मोक्ष मार्गमां प्रवृत्तेलाने उत्कृष्ट रथ समान छे. ॥१०१॥ (आर्यावृत्तम्)

चउगइणंतदुहानल- पलितभवकाणणे महाभीमे॥
सेविसु रे जीव तुमं, जिणवयणं अमियकुंडसमं १०२

शब्दार्थ–अरे जीव! महा भयंकर अने चार गतिना अनंत दुःखरूप अग्निथी सलगता संसाररूप वनमां अमृतनां कुंड समान जिनराजनां वचनने सेवन करय. ॥१०२॥

विसमे भवमरुदेसे, अणंत दुह गिम्हतावसंतत्ते ॥
जिणधम्मकप्परुक्खं, सरसु तुमं जीव सिवसुहदं १०३

शब्दार्थ–हे जीव! तुं विषम अने अनंतां दुःखरूप उनाला ना तापथी तप्त एवा मरुदेशमां मोक्षसुख आपनारा जिनधर्म रूप कल्पवृक्षनुं सेवन कर. ॥१०३॥

किं बहुणा जिण धम्मे, जइअव्वं जह भवोदहिं घोरं ॥
लहुतरियमणंतसुहं, लहइ जिअ सासयं ठाणं १०४

शब्दार्थ–हे आत्मन्! बहु कहेवाथी शुं? परंतु त्हारे जिन धर्मने विषे ते प्रकारे यत्न करवो के, जेथी जीव भयानक एवा संसाररूप समुद्रने झट तरीने अनंत सुखवाला मोक्षस्थानने पामे.

॥ इति वैराग्यशतक समाप्तम् ॥

॥ अथ अभव्य कुलकम् ॥

जह अभविय जीवेहि, न फासिया एवमाइया भावा ॥
इंदत्तमणुत्तरसुर, सिलायनर नारयत्तं च ॥ १ ॥

शब्दार्थ—अभव्य जीवोए आ हवे पछी कहेवामा आवशे ते भावो स्पर्शा नथी ते इंद्रपणुं, अनुत्तरवासी देवपणु, त्रेसठ शलाका पुरुषपणुं अने नव नारदपणु ॥ १ ॥

केवलिगणहरहत्थे, पव्वज्जा तित्थवच्छर दाणं ॥
पवयणसुरी सुरत्तं, लोगंतिय देवसामित्त ॥ २ ॥

शब्दार्थ—वली केवली तथा गणधरना हाथे दीक्षा, तीर्थंकरनु वार्षिक दान, प्रवचननो अधिष्टायक देवी तथा देवपणु, लोकांतिक देवपणु अने देवपतिपणु न पामे ॥ २ ॥

तायत्तीससुरत्त, परमाहम्मिय जुयलमणुअत्तं ॥
संभिन्नसोय तह, पुव्वधराहारयपुलायत्तं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—त्रायत्रिंशकदेवपणु, पदर जातिना परमाधामी पणु युगलिया मनुष्यपणु, वली संभिन्न श्रोत लब्धि, पूर्वधरलब्धि, आहारकलब्धि अने पुलाकलब्धिपणु पण न पामे ॥३॥

मइनाणाई सुलद्धी, सुपत्तदाण समाहिमरणत्त ॥
चारणदुगमहुसप्पिय, खीरासव खीरठाणत्त ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञाननी लब्धि, सुपात्रदान, समाधि मरण, विद्याचारण अने जंघाचारणनी लब्धि मधुसर्पि लब्धि क्षिराश्रव लब्धि, क्षिर स्थानकी लब्धि पण न पामे॥४॥

तित्थयर तित्थपडिमा, तणुपरिभोगाइ कारणेवि पुणो
पुढवाइय भावमि वि, अभव्वजीवेहिं नो पत्त ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—तीर्थंकर तथा तीर्थंकरनी प्रतिमा, वली शरीरना

परिन्नोगादि कारणमां न पामे. तेमज अन्नव्य जीवो पृथ्वीकाया ना न्नावोने विषे पण न पास थाय ॥ ५ ॥

चन्नदसरयणत्तंपि, पत्तं न पुणो विमाणसामित्तं ॥
सम्मत्तनाणसंयम, तवाइ न्नावा न न्नावज्जगे ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—चौद रत्नपणुं अने वली विमाननुं स्वामीपणुं न पामे. वली सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, चारित्र,अने तपादि बाह्याभ्यंतर ए बे न्नाव पण न पामे. ॥ ६ ॥

अणुन्नवजुत्ता न्नत्ती, जिणाणसाहम्मियाण वच्छलं ॥
न य साहेइ अन्नवो, संविग्गत्तं न सुप्पक्खं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—अन्नव्य जीव अनुन्नव युक्त न्नक्ति, जिनेश्वरनी आज्ञा प्रमाणे साधर्मिनी सेवा न्नक्ति, संसारथी वैराग्यपणुं तेम ज उत्तम पक्ष न पामे.॥ ७ ॥

जिणजणयजणणिजाया,जिणजक्खजक्खणीजुगपहाणा
आयरियपयाइदसगं, परमत्थगुणड्ढमप्पत्तं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—जिनेश्वरना माता, पिता, स्त्री, जक्ष, जक्षणी अने युगप्रधान पण न थाय. वली आचार्यादि दश पदनो विनय ते मज परमार्थथी अधिकगुणवंतपणुं न पामे. ॥ ८ ॥

अणुबंधहेउसरूवा, तत्थ अहिंसा तिहा जिणुदिट्ठा ॥
दव्वेण य न्नावेण य, डुहावि तेसिं न संपत्ता ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—वली अन्नव्य जीव अनुबंध, हेतु अने स्वरूप ए वी त्रण प्रकारे श्री जिनेश्वरे कहेली अहिंसा द्रव्य अने न्नाव ए वा बे न्नेदथी न पामे. ॥ ९ ॥

॥ इति अन्नव्यकुलकम् ॥

॥ अथ पुण्यकुलकम् ॥

संपुन्नइंदियत्तं, माणुसत्त च आयरियखित्तं ॥
जाइकुलजिणधम्मो, लप्रति पन्नूयपुन्नेहि ॥ १ ॥

शब्दार्थ–घणा पुण्यना उदयथी पाचे इन्द्रियनु अखडितपणु, मनुष्यपणुं, आर्यक्षेत्र, जाति, कुल अने जिनधर्म प्राप्त थाय छे.

जिणचलणकमलसेवा, सुगुरुपायपज्जुवासणं चेव ॥
सज्झाय वायवक्त, लप्रंति पन्नूयपुन्नेहि ॥ २ ॥

शब्दार्थ–घणा पुण्यना उदयथी जिनराजना चरणकमलनी सेवा, सुगुरुना चरणनी सेवा, वाचनादि पाच प्रकारनी सज्झाय अने माठा वादने जीतवापणु प्राप्त थाय छे ॥ २ ॥

सुद्धो बुहो सुगुरुहि, सगमो उवसमं दयालुत्त ॥
दाखिन्न करुणजो, लप्रति पन्नूयपुन्नेहि ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–घणा पुण्यना उदयथी शुद्ध बोधी बीजनुं पामवु सुगुरुनी साथे समागम, शातपणु, दाक्षिण्यपणुं अने करुणा प्राप्त थाय छे

समत्तं निच्चलंतं, वयाय परिपालणंअमायत्त ॥
पढणं गुणण विणउ, लप्रंति पन्नूयपुन्नेहि ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–घणा पुण्यना उदयथी निश्चल समकीत, वचननु पालवु, कपट रहितपणु, ज्ञणवु, गणवु अने गुरुविगेरेनो विनय करवो विगेरे प्राप्त थाय छे ॥ ४ ॥

उसगो उववाय, निच्छह विवहारमि निउणत्तं ॥
मणवयणकायसुद्धी, लप्रंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–घणा पुण्यना उदयथी उत्सर्ग, अपवाद, निश्चय अने व्यवहारमा निपुणपणु वली मन, वचन अने कायानी शुद्धि प्राप्त थाय छे ॥ ५ ॥

अवियारं तारुन्नं, जिणाणं राउ परोवियारत्तं ॥
निक्कंपयाय झाणे, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी अविकारी युवावस्था जिन आज्ञामां राग, परोपकारपणुं, धर्मध्यानमां निश्चलपणुं प्राप्त थाय छे.

परनिंदापरिहारो, अप्पसंसा अत्तणो गुणाणं च ॥
संवेगो निवेगो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी परनिंदानो त्याग, पोतानी अप्रसंसा अने पोताना गुणना अवखाण, संसारथी वैराग्य अने संसारथी निकलवानी इच्छा प्राप्त थाय छे. ॥ ७ ॥

निम्मलसीलान्नासो, दाणुल्हासो विवेग संवासो ॥
चउगइछुहसंत्तासो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी निर्मल शीलनुं पालवुं, दान आपवामां उल्लास, हिताहितना विवेकनुं समीपपणुं अने चार गतिनां दुःखना त्रासनुं जाणपणुं होय छे. ॥ ८ ॥

डुक्कम्मगरिहा सुकम्मा—णुमोयणं पायच्छित तवचरणं ॥
सुहझाण नमुक्कारो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—घणां पुण्यना उदयथी मारा कृत्यनी निंदा, सारां कृत्यनी अनुमोदना, खोटा कृत्यनुं प्रायश्चित्त लेवुं, तप करवुं, शुभ ध्यान करवुं अने नमस्कार करवो. ए सर्व प्राप्त थाय छे.

इयगुणमणिन्नंमारो, सामग्गी पावीउण जेण कउ ॥
विहन्नमोहपासा, लहंति ते सासयसुखं ॥ १० ॥

शब्दार्थ—आ उपर रहेला गुणरूप मणिना भंडाररूप सामग्री पामीने जेणे ते प्रमाणे आचरण कर्युं छे ते, मोहना पासने तोडी नाखी साश्वतां सुखने पामे छे.॥ १०॥इति पुण्यकुलकम् ॥

॥ अथ पुण्यपाप कुलकम् ॥

छत्तीसदिनसहस्सा, वाससये होइ आउपरिमाणं ॥
झिज्जंतं पईसमयं, पिच्छउ धम्मंमि जइअव्वं ॥ १ ॥

शब्दार्थ–सो वर्षना छत्रीस हजार दिवस, आयुष्यनु एटलु परिमाण होय छे ते समये समये ओछु थतु जाय छे, एम जाणीने धर्ममा यत्न करवो ॥ १ ॥

जइ पोसहसहीउ, तवनियमगुणोहि गमइ एकदिणं ॥
ता बधइ देवाउ, इत्तियमित्ताइं पलियाइं ॥ २ ॥

शब्दार्थ–जो कोइ जीव पोषह सहित तप नियमना गुणो थी एक दिवस गमावे तो ते आगल कहेशे तेटला पल्योपमनु देवतानुं आयुष्य बांधे छे. ॥ २ ॥

सगवीसं कोडीसया, सतहत्तरी कोडिलक्ख सहस्सा य॥
सत्तसया सतहुतरि, नवभागा सतपलियस्स ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–सत्तावीस सो क्रोड, सीत्योतेर क्रोड, सीत्योतेर लाख सीत्योतेर हजार, सातसोने सीत्योतेर एटला पल्योपम अने वली एक पल्योपमनो सातमो भाग ॥ ३ ॥

अघासीई सहस्सा, वाससये दुन्नि लक्ख पहराणं ॥
एगोवि अ जइ पहरो, धम्मजुउ ता इमो लाहो ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–एक सो वर्षना बे लाख अने अठासी हजार पहोर छे तेमाथी जो कोइ जीव एक पण पहोर धर्म युक्त (पोसह वृत युक्त) थाय तो तेने आगल कहेशे एटलो लाभ थाय छे।४।

तिसयसगं चत्तकोडि, लक्खा बावीस सहस बावीसा ॥
डुसय डुवीस डुभागा, सुराउबंधो य इगपहरे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–त्रणसो सुडताली क्रोड, बावीस लाख, बावीस

हजार, बसो अने बावीस, वली उपर बे ज्ञाग. वर्षमां एक पहोर पोषह करनारने देवतानां आयुष्यनो एटलो बंध थाय छे. ॥ ५ ॥

दस लक्ख असीय सहसा, महुत्त संखाय होइ वाससए ॥
जइ सामाइअसहिउ, एगोवित्रअत्ता इमो लाहो ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–सो वर्षनां मुहूर्त्त (बे घमीयो) दस लाख अने एंसी हजार थाय छे. जे जीव ए एक मुहूर्त्त सामायिक लहे तो तेने आगली गाथामां कहेशे तेटलो लाज्ञ थाय छे. ॥ ६ ॥

बाणवयकोमीउ, लक्खा गुणसट्ठि सहस्स पणवीसं ॥
नवसयपणवीस जूआ, सतिहा अरुज्ञाग पलियस्स ७

शब्दार्थ–बाणुं क्रोड, उगणसाठ लाख, पच्चीस हजार नवसो पच्चीस अने उपर एक पल्योपमना आठोया सात ज्ञाग; एटलुं देवगतिनुं आयुष्य बेघमी सामायक करनार जीव बांधे छे.

वाससये घमिआणं, लक्खिगवीसं सहस्स तह सठी ॥
एगावि अ धम्मजूआ, जइ ता लाहो इमो होइ ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–एक वर्षनी घमीयो एकवीश लाख अने साठ हजार थाय, तेमांथी एक घडी पण जो जीव धर्म युक्त होय तो तेने आगली गाथामां रहेशे तेटलो लाज्ञ थाय छे. ॥ ८ ॥

छायालकोडी गुणती-स लक्ख छासठी सहस्स सयनवगं
ते सठी किंचूणा, सुराउ बंधोइ इगघमिए ॥ ए ॥

शब्दार्थ–एक घमी धर्म करनार जीव छेतालीश क्रोम, उगणत्रीस लाख. छासठ हजार, नवसो अने कांइक उंगा एवा त्रेसठ एटला पल्योपमनुं आयुष्य बांधे. ॥ ए॥

सठी अहोरत्तेणं, घमीआउ जस्स जंति पुरिसस्स ॥
नियमेणावि रहीआउ, सो दिअहउ निष्फलो तस्स १०

शब्दार्थ—एक दिवसनी साठना प्रमाणे जे पुरुषनी घडीयो जायँ छे तेमा व्रत नियमथी पण रहित जाय ते दिवस तेनो निष्फल जाणवो ॥ १० ॥

चत्तारीअ कोडिसया, कोडीउ सत्तलक्ख अडयाला ॥
चालीस च सहस्सा, वाससय हुत्ती ऊसासा ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—एक सो वर्षना चारसो ने सात क्रोड, अडतालीस लाख, चालीस हजार एटला श्वासोश्वास थाय छे ॥११॥

इक्कोवि अ ऊसासो, न य रहिउ होइ पुण्यपावेहि ॥
जइ पुणेण सहिउ, एगोविअ ता इमो लाहो ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—तेमाथी एक पण श्वासोश्वास पुण्य पाप रहित होय नहि, परंतु कोइ जीव जो एक श्वासोश्वास पुण्य सहित होय तो तेने आगलो गाथामा कहेशे तेटलो लाभ थाय छे १२

लक्ख दुग सहस पणचत्तं, चउसया अठ चेव पलियाइ॥
किंचूणा चउभागा, सुराउ बधो इगुसासे ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—बे लाख, पीस्तालीस हजार, चारसो अने आठ पल्योपम वली काइक उणा चार भाग. एटलु देवतानु आयुष्य एक श्वासोश्वास धर्म करनारो पामे ॥ १३ ॥

एगुणवीस लक्खा, तेसठी सहस्स दुसय सत्तठी ॥
पलियाइं देवाउ, बधइ नवकार उस्सग्गो ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—ओगणीस लाख, त्रेसठ हजार बसो ने अडसठ. एटला पल्योपमनु देवायु नवकार गणनारो अथवा आठ श्वासोश्वास धर्म सेवनारो पामे ॥ १४ ॥

लक्खिगसठी पणती—स सहस दुसय दसपलिय देवाउं॥
बधई अहिय जीवो, पणवीसुसास उस्सग्गो ॥ १५ ॥

शब्दार्थ–एकसठ लाख, पांत्रीस हजार, बसो ने दश प ल्योपमनुं देवतानुं आयुष्य पच्चीस श्वासोश्वास अथवा एक लो गसनो काउस्सग्ग करनार जीव बांधे. ॥ १५ ॥

पावई पारायाणं, हवेउ निरयाउ अस्स बंधोवि ॥
इअ नाउ सिरि जिणकित्ति-अंमि धम्मंमि उज्ञमं कुणह॥

शब्दार्थ–हे जव्य जीवो ! पाप करनाराने ए प्रमाणे नर कनो बंध पण होय छे. एम जाणीने श्री जिनेश्वरे कहेला धर्म ने विषे उद्यम करो. ॥ १६ ॥

॥ इति पुण्य पाप कुलकम् ॥

॥ अथ गौतमकुलकम् ॥

लुद्धा नरा अत्थपरा हवंति, मूढा नरा कामपरा हवंति ॥
बुद्धानरा खंतिपरा हवंति, मिस्सा नरा तिन्निवि आयरंति

शब्दार्थ–लोजीया पुरुषो धन मेलववाने तत्पर होय छे, मूर्ख पुरुषो कामने विषे तत्पर होय छे, पंडित पुरुषो क्षमामां त त्पर होय छे अने मिश्र पुरुषो पूर्वे कहेला त्रणने पण आचरे छे.

ते पंडिया जे विरया विरोहे, ते साहुणो जे समयं चरंति॥
ते सत्तिणो जे न चयंति धम्मं, ते बंधवा जे वसणे हवंति२॥

शब्दार्थ–जे विरोधथी निवर्त्या ते पंडित, जे आगम प्रमा णे चाले ते साधु, जे धर्मने न त्यजे ते शक्तिवंत अने जे दुःख मां सहाय करे ते बांधवो जाणवा. ॥ २ ॥

कोहाभिभूया न सुहं लहंति, माणंसीणो सोयपरा हवंति
मायाविणो हुंति परस्स पेसा, लुद्धा महिच्छा नरयंउविंति

शब्दार्थ—क्रोधथी पराभव पामेला माणसो सुख न पामे, अभिमानी माणसो शोकवत थाय, मायावी माणसो बीजाना चाकर थाय अने लोभी तथा म्होटी इछा करनारा नरक पामे॥३॥

कोहो विसंकिं अमयं अहिंसा, माणो अरी किंहियमप्पमाओ
माया नयं किंसरणं तु सच्चं, लोहो दुहो किं सुहमाह तुट्ठी

शब्दार्थ—प्र० विष शुं ? उ० क्रोध, प्र० अमृत शुं ? उ० अहिंसा, प्र० शत्रु कोण ? उ० मान, प्र० हित शुं ? उ० अप्रमाद, प्र० भय शु ? उ० माया, प्र० शरण करवा योग्य शु ? उ० सत्य, प्र० दुख शु ? उ० लोभ, प्र० सुख शु ? उ० संतोष

बुद्धिअचम्भजयए विणीयं, कुद्धं कुशीलं भयए अकित्ति॥
संभिन्नचित्तं भयए अलच्छी, सच्चेठीयं सभयए सिरियं५

शब्दार्थ—बुद्धि विनयवंतने सेवे छे, क्रोधी तथा कुशील ने अकीर्ति सेवे छे, भग्न चित्तवालाने अलक्ष्मी (निर्धनपणु) सेवे छे अने सत्यमा रहेलाने सर्व प्रकारे लक्ष्मी सेवे छे ॥५॥

चयति मित्ताणि नरं कयघ्घं, चयति पावाइ मुणि जयंत॥
चयति सुक्काणि सराणि हंसा, चएइ बुद्धी कुवियं मणुस्सं

शब्दार्थ—कृतघ्न माणसने मित्रो त्यजी दे छे, जितेन्द्रिय मुनिने पापो त्यजी दे छे, सूकाइ गयेला तलावने हंसो त्यजी दे छे अने क्रोधवाला माणसने बुद्धि त्यजी दे छे ॥ ६ ॥

असपहारे कहिए विलावो, अईयअच्छे कहिए विलावो
विक्खित्तचित्ते कहिए विलावो,बहुकुसीसे कहिए विलावो

शब्दार्थ—असावधानने धर्मादि कहेवु ते विलाप छे, गइ वातनु कहेवु ते विलाप छे, खेदचित्तवालाने हित वचन कहेवु ते विलाप छे अने कुशिष्यने बहु कहेवु ए पण विलाप छे. ॥७॥

दुष्टाहीवा दंडपरा हवंति, विज्जाहरा मंतपरा हवंति ॥
मुख्का नरा कोवपरा हवंति, सुसाहुणो तत्तपरा हवंति ८

शब्दार्थ–दुष्ट राजाउ दंम करवामां तत्पर होय छे, विद्या वंत पुरुपो मंत्र साधनमां तत्पर होय छे, मूर्ख पुरुषो क्रोध करवामां तत्पर होय छे अने उत्तम साधुउ तत्त्व ग्रहण करवामां तत्पर होय छे. ॥ ८ ॥

सोहाज्जवे उग्गतवस्स खंती, समाहिजोगोपसमस्य सोहा॥
नाणं सुजाणं चरणस्स सोहा, सिसस्स सोहा विणए पविति

शब्दार्थ–उग्र तपवालानी क्षमा शोज्जाछे, उपशमवालानी समाधिजोग शोज्जा छे, चारित्रनी ज्ञान अने उत्तम ध्यान ए बे शोज्जाछे अने शिष्यनी विनयमां प्रवृत्ति ए शोज्जा छे. ॥९॥

अज्जूसणो सोहइ बंज्जयारी, अकिंचणो सोहइ दिख्कधारी
बुध्दिजुउ सोहइ रायमंती, लज्जाजुउ सोहइ एगपत्ति १०

शब्दार्थ–आज्जूषण विना ब्रह्मचारी शोज्जे छे, परिग्रह रहित दीक्षाधारी शोज्जे छे; बुध्दिवंत राजमंत्री शोज्जे छे अने लज्जा वंत पुरुप एक स्त्रीथी शोज्जे छे. ॥ १० ॥

अप्पाअरीहोइअणवठियस्स, अप्पाजसोसीलमउनरस्स
अप्पादुरप्पाअणवठियस्स, अप्पाज अप्पासरणंगईय॥

शब्दार्थ–अशांत माणसने पोतानो आत्मा वैरी छे. शीलवंत माणसनो आत्मा जस पामे छे, अशांत माणसनो आत्मा दुरात्मा छे अने आत्माज आत्माने शरण करवा योग्य अने गतिरूपछे.

न धम्मकज्जं परमत्थिकज्जं, नपाणिहिंसा परमं अकज्जं ॥
न पेमरागा परमत्थि बंधो, न बोहिलाज्जा परमत्थि लाज्जो१२

शब्दार्थ–धर्म कार्य विना बीजुं उत्तम कार्य नथी, प्राणी हिंसा

विना वीजु अकार्य नथी, प्रेमराग विना' वीजो वंध नथी अने वोधिलाभ विना बीजो लाभ नथी ॥ १२ ॥

नसेवियव्वा पमया परक्का, नसेवियव्वा पुरिसा अविद्या ॥
नसेवियव्वाअहिमानिहिणा, नसेवियव्वापिसुणामणुस्सा॥

शब्दार्थ–पारको स्त्री सेववी नहि, मूर्ख पुरुषाने सेववा नहि, अभिमानी हिन माणसोने सेववा नहि अने चाडिया माणसोने पण सेववा नहि ॥ १३ ॥

जे धम्मिया ते खलु सेवियव्वा, जे पंडिया ते खलु पुच्छियव्वा
जे साहुणो ते अभिवदियव्वा,जे निम्ममा ते पडिलाभियव्वा

शब्दार्थ–जे धर्मी माणसो छे ते सेववा योग्य छे, जे पंडित पुरुषो छे ते पूछवा योग्य छे, जे साधुओ छे ते वादवा योग्य छे अने जे ममतारहित छे ते पडिलाभवा योग्य छे ॥ १४ ॥

पुत्ताय सीसाय सम विभत्ता, रिसी य देवा य सम विभत्ता॥
मुरक्का तिरिक्खा यसम विभत्ता,मुआ दरिद्दाय सम विभत्ता

शब्दार्थ–पुत्र अने शिष्यो सरखा जाणवा, मुनि अने देवता सरखा जाणवा, मूर्ख अने तिर्यंच सरखा जाणवा अने मूवेला तथा दरिद्री सरखा जाणवा ॥ १५ ॥

सव्वाकला धम्मकला जिणाइ,सव्वाकहाधम्मकहाजिणाइ
सव्व वलं धम्मवलं जिणाइ, सव्व सुहं धम्मसुहं जिणाइ१६

शब्दार्थ–सर्वकलाने धर्मकला जीते, सर्व कथाने धर्मकथा जीते, सर्व वलने धर्मवल जीते अने सर्व सुखने धर्म सुख जीते॥

जूए पसत्तस्य धणस्स नासो, मसं पसत्तस्य दयाइनासो॥
मज्जा पसत्तस्य जसस्सनासो. वेसापसत्तस्य कुलस्स नासो

शब्दार्थ–जुवटामा आसक्त थयेलाना धननो नाश थाय छे,

मांसमां आसक्त थयेला दयादिनो नाश थाय छे, मद्यमां आसक्त थयेलाना जसनो नाश थाय छे अने वेश्यामां आसक्त थयेलाना कुलनो नाश थाय छे. ॥१७॥

हिंसापसत्तस्य सुधम्मनासो, चोरीपसत्तस्य सरीरनासो ॥
तहापरत्थिसुपसत्तयस्स, सव्वस्सनासोऽहमा गई य॥१८॥

शब्दार्थ–हिंसामां आसक्त थयेलाना सारा धर्मनो नाश थाय छे, चोरीमां आसक्त थयेलाना शरीरनो नाश थाय छे. तेमज परस्त्रीमां आसक्त थयेला धन शरीरादि सर्वनो नाश अने अधम गति थाय छे. ॥ १८ ॥

दाणं दरिद्दस्सपहुस्स खंती, इच्छानिरोहोइ सुहोइ यस्स॥
तारुण्णए इंदियनिग्गहो य, चत्तारि एयाणि सुदुक्कराणि१९

शब्दार्थ–दरिद्रीने दान आपवुं, श्रीमंतने क्षमा राखवी, इच्छाने रोकवी अने युवावस्थामां इंद्रियोने वश्य राखवी. ए चार बहु दुष्कर छे. ॥ १९ ॥

असासयं जीवियमाहु लोए, धम्मं चरे साहु जिणोवइट्ठं
धम्मोयताणं सरणं गई य, धम्मं निसेवितु सुहं लहंति ॥

शब्दार्थ–लोकमां जीवीत अशाश्वतुं कह्युं छे, माटे जिनेश्वरे कहेला उत्तम धर्मनुं आचरण करो. धर्म रक्षण कर्ता, शरण करवा योग्य अने सारी गति आपनारो छे. ए धर्मने सेवीने साश्वतुं सुख पमाय छे. ॥ २० ॥

॥ इति श्री गौतम कुलक ॥

॥ अथ दान कुलकम् ॥

परिहरिय रज्जसारो, उप्पाडियसंजमिक्कगुरुन्नारो ॥
खधाउ देवदूसं, वियरंतो जयउ वीरजिणो ॥ १ ॥

शब्दार्थ–राज्यना सारने त्यजी देनारा, चारित्ररूप एक बहु न्नारने उपाडनारा अने खन्ना उपरथी देवदूष्य वस्त्र विप्रने आपी देनारा श्री महावीर प्रन्नु जयवता वर्त्तो. ॥ १ ॥

धम्मत्थकामन्नेया, तिविहं दाणं जयंमि विरकाय ॥
तहवि य जिणदमुणिणो, धम्मियदाणं पससति ॥२॥

शब्दार्थ–धर्मदान, अर्थदान अने कामदान एवा न्नेदथी त्रण प्रकारनु दान जगत्मा विख्यात छे तो पण जिनेश्वरना मुनियो आहारादिक धार्मिक दानने वखाणे छे ॥ ३ ॥

दाणं सोहग्गकर, दाणं आरुग्गकारण परम ॥
दाण न्नोगनिहाणं, दाण ठाण गुणगणाणं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–दान सौन्नाग्य करनार छे, दान श्रेष्ठ आरोग्यनुं कारण छे, दान न्नोगनु निधान छे अने दान गुणसमूहनु स्थानक छे

दाणेण फुरइ कीत्ति, दाणेण य होइ निम्मला कंती ॥
दाणावज्जिय हियउ, वयरीवि हु पाणिय वहइ ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–दानथी कीर्त्ति विस्तार पामे छे, दानथी निर्मल कांति थाय छे, दानयुक्त हृदयवालाउना शत्रुउ पण तेने घेर पाणी न्नरे छे

धणसत्थवाहजम्मे, ज घयदाण कय सुसाहूण ॥
तक्कारणमुसन्नजिणो, तेलुक्कपियामहो जाउ ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–धन सार्थवाहना न्नवमा उत्तम साधुउने जे घीनु दान करयु हतु ते पुण्यना कारणथी रुपन्नदेव प्रन्नु त्रण लोकना पितामह (दादा) थया ॥ ५ ॥

करुणाइ दिन्नदाणं, जम्मंतरं गहियपुन्नकिरियाणं ॥
तिच्छयरचक्करिद्धिं, संपत्तो संतिनाहोवि ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—कृपाथी पारेवाने अन्नयदान आपी पाछला नव माटे पुण्यरूप करीयाणांने खरीद करनारा शोलमा श्री शांति नाथ तीर्थंकर पण तीर्थंकर अने चक्रवर्त्तीनी समृद्धिने पाम्या॥६॥

पंचसयसाहुन्नोयण–दाणावज्जियसुपुन्नपप्नारो ॥
अच्चरियचरियन्नरिठ, नरहो नरहाहिवो जाठ ॥७॥

शब्दार्थ—पांचसो साधुने न्नोजननां दानथी पुण्यनो स मूह मेलवनार अने आश्चयकारी चरित्रथी न्नरपूर एवो न्नरत चक्रवर्त्ती न्नरतक्षेत्रनो स्वामी थयो. ॥ ७ ॥

मुल्लं विणावि दाउं, गिलाण पमिअरणजोगवच्चूणि ॥
सिद्धो अ रयणकंबल–चंदण विणिउवि तंमिन्नवे॥८॥

शब्दार्थ-ग्लान मुनिने वापरवा योग्य वस्तु रत्न कंबल अने बावनुं चंदन विना मूल्ये आपीने श्रावक पण तेजन्नवमां सिद्धिपद पाम्यो.

दाऊण खीरदाणं, तवेण सुसिअंगसाहुणो धणिअं ॥
जणजणियचमक्कारो, संजाउ सालिन्नद्दोवि ॥ ए ॥

शब्दार्थ—तपथी सूकवी नाख्युं छे शरीर जेमणे एवा साधुने धन्यकारी खीरनुं दान आपी शालिन्नद्र शेठ पण माणसोने आश्चर्य उत्पन्न करनारो थयो. ॥ ए ॥

जम्मंतरदाणाउ, उल्लसिया पुव्वकुसलझाणाउ ॥
कयवन्नो कयपुन्नो, न्नोगाणं न्नायणं जाउ ॥१०॥

शब्दार्थ—पूर्व जन्मने विषे करेला सुपात्रदानना प्रन्नावने लीधे उल्लास पामेला अपूर्व शुन्न ध्यानथी कृतपुण्य एवो कयवन्नो शेठ न्नोगोनुं पात्र थयो. ॥ १० ॥

घयपूसवत्थपूसा, महरिसिणो दोसलेसपरिहीणा ॥
लधीइ सयलगच्छो–वग्गहगा सुग्गइ पत्ता ॥ ११ ॥

शब्दार्थ–घृतपुष्प तथा वस्त्रपुष्प ए बे साधु दोषना लेश रहित छता पोताना तपनी लब्धिथी सर्व गच्छनी घृत तथा वस्त्रथी भक्ति करी उत्तम गति पाम्या ॥ ११ ॥

जीवतसामिपडिमा–इं सासण वियरिकण भत्तीउ ॥
पव्वईकण सिद्धो, उदाइणो चरमरायरिसी ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–श्री जीवंतस्वामीनी प्रतिमाने श्री वीरप्रभुना शासनमा भक्तिथी विचरीने पछी चारित्र लइ उदायन नामनो छेलो राजर्षि सिद्धि पद पाम्यो ॥ १२ ॥

जिणहरमंडियवसुहा, दाण अनुकंपभत्तिदाणाइं ॥
तित्थपभावगरेहि, सपत्तो संपइराया ॥ १३ ॥

शब्दार्थ–जिनमंदिरथी पृथ्वीने शोभावनारो सप्रति राजा अनुकंपादान अने भक्तिदान आपीने तीर्थ प्रभावक पुरुषोमा रेखाने पाम्यो ॥ १३ ॥

दाउं सद्धासुद्धे, सुद्धे कुम्मासए महामुणिणो ॥
सिरिमूलदेवकुमारो, रज्जसिरि पाविउ गुरुइ ॥१४॥

शब्दार्थ–श्री मुलदेव कुमार शुद्ध श्रद्धाथी महामुनिने शुद्ध एवा अडदना बाकला आपीने म्होटी राज्य लक्ष्मी पाम्यो ॥१४॥

अइदाणमुहरकविअण-विरइअसयसंखकव्वविच्छरिअं ॥
विक्कमनरिदचरिअ, अज्जवि लोए परिप्फुरइ ॥ १५ ॥

शब्दार्थ–अतिदानथी वाचाल एवा कविलोकोए रचेला शेंकडो काव्योथी विस्तार पामेलु विक्रमराजानु चरित्र आज सुधी पण लोकमा विस्तार पामे छे ॥ १५ ॥

तिअलोअबंधवेहिं, तप्नवचरिमेहिं जिणवरिंदेहिं ॥
कयकिच्चेहिवि दिन्नं, संवच्छरियं महादाणं ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—त्रण लोकना बंधु, तेज नवमां सिद्धि पामनारा अने कृतार्थ एवाय श्री जिनेश्वरे सांवत्सरिक महादान आप्युं ॥ १६॥

सिरिसेयंसकुमारो, निस्सेयससामिउ कह न होई ॥
फासूअदाणपवाहो, पयासिउ जेण नरहंमि ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—श्री श्रेयांसकुमार मोक्षनो स्वामी केम न होय? कारणके, जेणे आ नरतक्षेत्रमां प्रासुकदाननो प्रवाह प्रकाश कर्यो.

कह सा न पसंसिज्जइ, चंदणबाला जिणंददाणेणं ॥
उम्मासियतवतविउ, निव्वविउ जेहिं वीरजिणो ॥१८॥

शब्दार्थ—ते चंदनबाला श्री जिनेश्वरने दान आपवाथी केम न प्रशंसा पामी? अर्थात् पामी. कारणके, जे चंदनबालाये ब मासना तपथी तप्त थयेला श्री महावीरप्रनुने संतोष पमाड्या.

पढमाइं पारणाइं, अकरिंसु करंति तह करिस्संति ॥
अरिहंता नगवंतो, जस्स घरे तेसिं धुव सिद्धि ॥१९॥

शब्दार्थ—श्री अरिहंत नगवाने जेना घरने विषे पहेलुं पारणुं कर्युं हशे, करे छे अथवा हवे पछी करशे; तेउ निश्चे सिद्धिपद पामशे. ॥ १९ ॥

जिणनवणबिंबपुत्थय—संघसरुवेसु सत्तखित्तेसु ॥
ववियं धणंपि जायई, सिवफलयमहो अणंतगुणं २०

शब्दार्थ—जिननवन, बिंब, पुस्तक अने चतुर्विध संघरूप सातक्षेत्रमां वावेलुं एवुंय पण धन मोक्षफलरूपे आश्चर्यकारीपणाथी अणंतगणुं थाय छे. ॥ २० ॥ इति दान कुलकम् ॥

॥ अथ शीलकुलक ॥

सोहग्ग महानिहिणो, पाए पणमामि नेमिजिण वइणो ॥
बालेण नुअबलेण, जणाद्दणो जेण निज्जिणिउ ॥ १ ॥

शब्दार्थ–जेमणे बाल्यावस्थामा नुजबलथी कृष्णवासुदेवने जीत्या छे ते सोन्नाग्यना समुइ एवा श्री नेमि जिनेश्वरना पगमा हुं प्रणाम करुं बु ॥ १ ॥

सीलं उत्तमवित्तं, सीलं जीवाण मंगलं परमं ॥
सील दोहग्गहरं, सीलं सुखाण कुलन्नवणं ॥ २ ॥

शब्दार्थ–जीवोने शील एज उत्तम धन, शील एज उत्कृष्ट मंगल, शील एज डुर्नाग्यने नाश करनारुं अने शील एज सुखोनु कुलघर छे ॥ २ ॥

सील धम्मनिहाण, सील पावाण खंमणं नणियं ॥
सील जतूणजए, अकित्तिम मंमणं पवर ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–शील धर्मनो नंमार तेमज सील पापोने नाश करनारु कह्यु छे वली जगतमा शील माणसोने अकर्त्रिम (साचु) घराणु छे ॥ ३ ॥

नरयडुवारनिरुंन्नण–कवामसपुमसहोअरच्छायं ॥
सुरलोअधवलमदिर–आरुहणे पवरनिस्सेणि ॥४॥

शब्दार्थ–शील नरकना रस्ताने रोकवाने कमाडनी जोड सरखु अने देवलोकरूप उज्वल मदिरमा चरूवाने श्रेष्ठ निसरणी रूप छे ॥ ४ ॥

सिरि उग्गसेणधूआ, रायमई लहउ सीलवइरेहा ॥
गिरि विवरगउ जीए, रहनेमी गविउ मग्गे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–श्री उग्रसेन राजानी पुत्री राजोमति शीलवती

स्त्रीयोमां रेखा पामी छे. कारण के, जेणे पर्वतनी गुफामां रहे
ला रथनेमिने धर्ममार्गने विषे रोकी राख्या छे. ॥ ५ ॥

पज्जलिउवि हु जलणो, सीलपन्नावेण पाणियं हवइ ॥
सा जयउ जए सीआ, जीसे पयमा जसपमाया ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—जेना शील प्रन्नावथी ज्वाजल्यमान एवो पण अग्नि पाणीरूप थयो. ते सीता जगत्मां जयवंती वर्ते छे के, जेनी यशपताका प्रगट छे. ॥ ६ ॥

चालणिजलेण चंपा—ए जीइ उग्घामियं डुवारतियं ॥
कस्स न हरेइ चित्तं, तीयं चरियं सुन्नदाए ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—जेणे चालणीनां जले करीने चंपा नगरीना त्रण दरवाजा उघाड्या ते सुन्नद्रानुं चरित्र कोनां चित्तने हरनारुं न थाय ? ॥ ७ ॥

नंदउ नमयासुंदरि, सा सुचिरं जीइ पालियं सीलं ॥
गहिलत्तणंपि काउं, सहिआ य विमंवणा विविहा ८

शब्दार्थ—ते नर्मदा सुंदरी आनंद पामो के, जेणे गांडापणुं करीने पण विविध प्रकारनी विटंवना सहन करीने शील पाळ्युं.

न्नद्दं कलावईए, न्नीसणरन्नंमि रायचत्ताए ॥
जंसा सीलगुणेणं, छिन्नंगं पुण नवा जाया ॥ ९ ॥

शब्दार्थ—न्नयंकर अरण्यमां राजाए त्यजी दीधेली कलावतीनुं कल्याण थाउ के, जेना शीलगुणथी छेदायेला अंगो पण फरी नवा थया. ॥ ९ ॥

सीलवईए सीलं, सक्कइ सक्कोवि वन्निउं नेव ॥
रायनिउत्ता सचिवा, चउरोवि पवंचिआ जीए ॥१०॥

शब्दार्थ—शीलवतीना शीलने इंद्र पण वर्णववाने समर्थ

नथी कारणके, जे शीलवंतीये राजाना मोकलावेला चार प्रधा
नोने पण वेतरया वे, ॥ १० ॥

सिरिवद्धमाणपहुणा, सुधम्मलाभुत्ति जीई पठविउ ॥
सा जयउ जए सुलसा, सारयससि विमलशीलगुणा ११

शब्दार्थ–श्री वर्द्धमान स्वामीये जेने धर्मलाभ मोकल्यो
हतो, ते शरद रुतुना चन्द्रसमान निर्मल गुणवाली सुलसा जग
तमा जयवंती वर्त्तो ॥ ११ ॥

हरिहरबंभपुरदर–मयभंजण पंचबाण बलदप्पो ॥
लीलाइ जेण दलिउ, स थूलभद्दो दिसउ भद्दं १२

शब्दार्थ–हरि, हर, ब्रह्मा, अने इन्द्रना मदने भागनार तथा
बलथी गर्ववत एवा कामदेवने जेणे लीलामात्रथी दली नाख्यो
वे ते स्थूलभद्र कल्याण आपो, ॥ १२ ॥

मणाहरतारुणभरे, पभिजंतोवि तरुणि नियरेणं ॥
सुरगिरिनिच्चलचित्तो, सो वयरमहारिसी जयउ ॥१३॥

शब्दार्थ–जे मनोहर तारुण्यना भारवाली स्त्रीरूप जलस
मूहे प्रार्थना कर्या बता पण मेरुपर्वतनी पेठे निश्चल चित्तवाला
रहेला वे, ते श्री वज्रस्वामी जयवंता वर्त्तो ॥१३॥

थुणियं तस्स न सक्का, सड्डस्स सुदंसणस्स गुणनिवह ॥
जो विसमसंकमेसुवि, पमिउवि अखमशीलधणो १४

शब्दार्थ–ते सुदर्शन श्रावकनो गुणसमूह स्तुति करवो
शक्य नथी अर्थात् स्तुति करी शकाय तेवो नथी कारण के, जे
विषम शंकटमा पड्या बता पण अखंम शीलरूपधन वालो रह्यो वे

सुदरि सुनंद चिल्लणा, मणोरमा अंजणा मिगावइ अ ॥
जिणसासणसु पसिद्धा, महासईउ सुह दिंतु ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—सुंदरी, सुनंदा, चिल्लणा, मनोरमा, अंजना अने मृगावती. जिनशासनमां प्रसिद्ध एवी ए महा सतीयो (तमने) सुख आपो.

अच्चंकारिय चरिअं. सुणिऊणं को न धुणाई किर सीसं
जा अखंडियसीला, भिल्लवइकयच्छिआवि दढं ॥१६॥

शब्दार्थ—अचंकारी भटानुं चरित्र सांभलीने कोण पोतानुं मस्तक निश्चे न धुणावे ? के, जे भिल्लपतिये कष्ट आप्या छतां दृढ अखंडित शीलवाली रही ॥ १६ ॥

नियमित्तं नियभाया, नियजणउ नियपियामहो वावि ॥
नियपुत्तोवि कुसीलो, न वल्लहो होइ लोआणं ॥१७॥

शब्दार्थ—पोतानो मित्र, पोतानो भाइ, पोतानो बाप अथवा पोताना बापनो बाप पण, वली पोतानो पुत्र पण जो कुशील होय तो ते लोकोने वहालो थतो नथी. ॥ १७ ॥

सव्वेसिंपि वयाणं, भग्गाणं अत्थि कोइ पडिआरो ॥
पक्कघडस्सव कन्ना, न होइ सीलं पुणो भग्गं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—सर्वे एवाय पण भागेलां व्रतनो कोइ पण आलोयणादि उपाय छे, पण जेम पाका घडाने कांठा चोडवानो कोइ उपाय नथी तेम भागेला शीलनो फरी कोइ उपाय नथी. १८

वेयालभूअरक्कस—केसरिचित्तयगइंदसप्पाणं ॥
लीलाइ दलइ दप्पं, पालंतो निम्मलं सीलं ॥१९॥

शब्दार्थ—निर्मल शील पालनारो पुरुष वैताल, भूत, राक्षस, केशरीसिंह, चित्रा, हाथी अने सर्पना गर्वने लीला मात्रमां दली नाखे छे.

जे केइ कम्ममुक्का, सिद्धा सिज्झंति सिज्झिहिंति तहा ॥
सव्वेसिं तेसिं बलं, विसाल सीलस्स माहप्पं ॥ २० ॥

शब्दार्थ—जे कोइ कर्म मुक्त जीवो सिद्ध थया, सिद्ध थाय छे तेमज

सिद्ध थशे, ते सर्वेने विशाल शीलनुं महात्म्यज वल छे. अर्थात् शीलना वलथी सिद्धिपद पामे ॥ २० ॥

॥ इति शील कुलक ॥

॥ अथ तपकुलक ॥

सो जयउ जुगाइजिणो, जस्संसे सोहए जमामज्जो ॥
तवझाणग्गिपलिविय, कम्मिंधणधूमपत्तिव ॥ १ ॥

शब्दार्थ–तप ध्यानरूप अग्निथी वलता एवा कर्मरूप इंधणाना धूमाडानी पेठे जेमना खन्नाने विषे जटारूप मुकुट शोन्नतो हतो ते श्री युगादि जिनेश्वर जयवंता वर्त्तो ॥१॥

संवच्छरियतवेणं, काउसग्गंमि जो ठिउ न्नयव ॥
पूरियनियपइन्नो, हरउ दुरिआइ बाहुबली ॥ २ ॥

शब्दार्थ–जे न्नगवाने संवत्सरीना तपथी काउसग्गमा उन्ना रही पोतानी प्रतिज्ञा पूर्ण करी ते श्री बाहुबली पापोने दूर करो

अथिरंपिथिर वकं–पि उजुअ दुल्लहपि तह सुलह ॥
दुस्सज्झपि सुसज्झं, तवेण संपज्जए कज्जं ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–तपथी अस्थिर कार्य होय ते स्थिर, वक्र होय ते सरल, दुर्लंन्न होय ते सुलन्न अने दुःसाध्य होय ते सुसाध्य थायछे

छठ छठेण तव, कुणमाणो पढमगणहरो न्नयवं ॥
अरकीणमहाणसोउ, सिरि गोअमसामिउ जयउ ॥४॥

शब्दार्थ–छठ छठना तपने करता, प्रथम गणधर अने अक्षीण महालब्धीवाला थयेला एवा न्नगवान् श्री गौतमस्वामी जयवंता वर्त्तो

छज्जइ सणंकुमारो, तवबलखेलाइलद्धिसंपन्नो ॥
निठुअखवलिअंगुलि–सुवन्नकंतिपयासंतो ॥५॥

शब्दार्थ—तपना बलथी खेलादि लब्धीने पामेलो अने पोतानां थुंकथी लिप्त करेली आंगलोनी सुवर्णना सरखी कांतिने प्रकाश करतो सनत् कुमार चक्रवर्ती शोभे छे. ॥५॥

गोबंभगब्भ गब्भिणि—बंभणिघाताइ गुरुअपावाइं ॥
काऊणवि कणयंपिव, तवेण सुद्धो दढपहारी ॥६॥

शब्दार्थ—गाय, ब्राह्मण, गर्भ अने गर्भवती ब्राह्मणी ए चार हत्यानां म्होटां पापने करीने पण सुवर्णनी पेठे तप करी दृढ प्रहारी शुद्ध थयो छे. ॥६॥

पुव्वभवे तिव्वतवो, तविउ जं नंदिसेणमहरिसिणा ॥
वसुदेवो तेण पिउ, जाउ खयरी सहस्साणं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—पूर्वभवमां नंदिषेण महामुनिये जे तीव्र तप कर्यो, तेथी ते हजारोनो विद्याधरीयोने प्रियकारी वासुदेव थयो. ॥७॥

देवावि किंकरत्तं, कुणंति कुलजाइविरहिआणंपि ॥
तवमंतपभावेणं, हरिकेसबलस्स वरिसिस्स ॥ ८ ॥

शब्दार्थ—देवता पण कुलजाति रहितनुं पण दासपणुं करे छे. जुउ देवताए चंमालना कुलमां जन्मेला हरिकेशी महा मुनिनुं तपरूप मंत्रना प्रभावथी दासपणुं करयुं छे. ॥८॥

पमसयमेगपमेणं, एकेण घमेण घमसहस्साइं ॥
जं किर कुणंति मुणिणो, तवकप्पतरुस्स तं खू फलं ए

शब्दार्थ—मुनियो जे एक वस्त्रवमे हजारो वस्त्र अने एक घमावमे हजारो घमाउ निश्चे करे छे, ते खरेखर तपरूप कल्पवृक्षनुं फल छे. ॥ ए ॥

निआणस्स विहीए, तवस्स तवियस्स किं पसंसामो
छ जेण विणासो, निकाइयाणंपि कम्माणं ॥१०॥

शव्दार्थ–नीयाणा रहित विधिवमे करेला तपने शु वखाणीये ?
कारण के, जे तपथी निकाचित एवा पण कर्मनो विनाश करायछे
अइडुक्करतवकारी, जगगुरुणा कन्हपुच्छिएण तया ॥
वाहरिउ स महप्पा, समरिज्जउ ढंढणकुमारो ॥११॥
शव्दार्थ–श्री कृष्णना पूछवा उपरथी ते श्री जगत् गुरु ने
मिनाथे "जेने अतिडुष्कर तप करनार छे" एम कह्युं हतुं, ते
महात्मा श्री ढढणकुमारने स्मरण करो. ॥११॥
पइदिवसं सत्तजणे, वहिऊणं गहियवीरजिणदिक्खा ॥
डुग्गाभिग्गहनिरउ, अज्जुणउ मालिउ सिद्धो ॥१२॥
शव्दार्थ–दररोज (छ पुरुष अने एक स्त्री) एम सात मा
णसनो वध करीने पछी श्री वीरप्रभु पासे दीक्षा लइ डुष्कर एवा
अभिग्रहमा आसक्त थयेलो अर्जुनमाली सिद्ध थयो. ॥१२॥
नंदीसररुचगेसुवि, सुरगिरिसिहरेसु एगफालाए ॥
जंघाचारणमुणिणो, गच्छति तवप्पभावेण ॥१३॥
शव्दार्थ–जंघाचारण मुनियो तपना प्रभावथी एक फाले
करीने आठमा नदीश्वरद्वीपमा, वारमा रुचकद्वीपमां अने मेरुप
र्वतना शिखर उपर जाय छे. ॥१३॥
सेणियपुरउ जेसि, पसंसिअं सामिणा तवोरूवं ॥
ते धन्ना धन्नमुणि, उभवि पचुत्तरे पत्ता ॥ १४ ॥
शव्दार्थ–श्रेणिक राजानी आगल श्री महावीरप्रभुए जेनु
तपस्वरूप वर्णव्यु छे, ते धनकुमार अने धनाकाकदी ए बन्ने मुनि
उ पण पाचमा अनुत्तर विमानने विषे प्राप्त थया ॥१४॥
सुणिऊण तव सुंदरी-कुमरीए अंबिलाणि अणवरय ॥
सट्ठिवाससहस्सा, भण कस्स न कपए हियय ॥१५॥

शब्दार्थ—हे भाइ! सुंदरी कुमारीनुं साठ हजार वर्षसुधी निरंतर आंबील तप सांभली कोनुं हृदय न कंपे? कहे. १५

जं विहिअमंबिलतवं, वारसवरिसाइं सिवकुमारेण ॥
तं दट्ठु जंबुरूवं, विम्हइओ कोणिओ राया ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—शिवकुमारे (जंबूस्वामीने पाछले भवे) वारवर्ष पर्यंत जे आंबिल तप कर्यो, तेथी बीजा भवमां जंबूस्वामीना रूपने जोइ कोणिक राजा विस्मय पाम्यो. ॥१६॥

जिणकप्पिय परिहारिय, पडिमापडिवन्न लंदयाईणं ॥
सोऊण तवसरूवं, को अन्नो वहउ तवगव्वं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—जिनकल्पी, परिहारविशुद्धि चारित्रवाला, पडिमाना धारणहार एवा लंदी साधुनां तपस्वरूपने सांभलीने बीजो कयो पुरुष तपना गर्वने धारण करे? ॥१७॥

मासद्धमासखवओ, वलभद्दो रूववंपि हु विरत्तो ॥
सो जयउ रन्नवासी, पडिबोहिअसावयसहस्सो १८

शब्दार्थ—मासखमण अथवा पखखमण करनारा, रूपवंत छतां पण निश्चे विरक्त थयेला, अरण्यमां वसनारा अने सिंहादि हजारो हिंसक पशुओने बोध करनारा ते वलभद्र मुनि जयवंता वर्त्तो.

थरहरियधरं झलहलि-य सायरं चलियसयलकुलसेलं
जमकासि जयं विहूणु, संघकए तं तवस्स फलं ॥१९॥

शब्दार्थ—पृथ्वी कंपी, समुद्रो खलभल्या, सर्वे हिमवंतादि कुलपर्वतो कंप्या. ए प्रमाणे जयवंता विष्णुकुमारे श्री संघने माटे जे कांइ कर्युं, ते सर्व तपनुं फल छे. ॥१९॥

किं बहुणा भणिएणं, जं कस्सवि कहवि कछवि सुहाइं
दिसंति भवणमज्झे, तछ तवो कारणं चेव ॥ २० ॥

शब्दार्थ—बहु कहेवाथी शुं? कारणके, भुवननी मध्ये जे काइ कोइने पण क्याइ सुखादि देखाय छे, त्या तपनु कारण निश्चे जाणवु अर्थात् तपथी सर्व प्रकारनुं सुख मले छे ॥ २० ॥

॥ इति तप कुलक ॥

॥ अथ भावकुलक ॥

कमठासुरेण रइय-मि भीसणे पलयतुल्लजलबोले ॥
भावेण केवललच्छि, विवाहिउ जयउ पासजिणो ॥१॥

शब्दार्थ—कमठासुरे रचेला भयकर प्रलयकाल समान जलमा भावे करीने छ काय जीवनुं हित चिंतववाथी केवलज्ञानरूप लक्ष्मीने पामेला श्री पार्श्वनाथ प्रभु जयवंता वर्तो ॥१॥

निच्चुन्नो तंबोलो, पासेण विणा न होइ जह रंगो ॥
तह दाणसीलतवभा-वणाउ अहलाउ भावविणा ॥२॥

शब्दार्थ—जेम चूना विना तांबुल अने पास विना वस्त्र रंग न पामे, तेम भाव विना दान, शील, तप अने भावना अफल जाणवी ॥ २ ॥

मणिमतउसहीणं, जतयतताण देवयाणंपि ॥
भावेण विणा सिद्धी, न हु कस्सइ दीसई लोए ॥३॥

शब्दार्थ—लोकमा मणि, मत्र, औषधी, जत्र, तत्र अने देवतानी उपासनानी पण भाव विना सिद्धि कोइने देखाती नथीज

सुहभावणावसेणं, पसदचदो मुहुत्तमित्तेण ॥
खविऊण कम्मगठि, संपत्तो केवल नाण ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—शुभ भावनाना वश्यथी प्रसन्न चद्रराजा मुहूर्त्त मात्रमा कर्मनी गाठ खपावी केवलज्ञान पाम्यो. ॥४॥

सुस्सूसंती पाए, गुरुणीणं गरहिऊण नियदोसे ॥
उप्पन्नदिव्वनाणा, मिगावई जयओ सुहभावा ॥५॥

शब्दार्थ–गुरुणीना पगनी सेवा करती अने पोतानां दोषनी निंदा करवाथी शुभ भावने लीधे उत्पन्न थयेला केवलज्ञानवाली मृगावती जयवंती वर्त्तो. ॥ ५ ॥

भयवं इलाइपुत्तो, गुरुए वंसंमि जो समारुढो ॥
दट्ठूण मुनिवरिंदे, सुहभावा केवली जाओ ॥६॥

शब्दार्थ–म्होटा वांस उपर चमेला पूज्य इलाचि पुत्र गोचरीए फरता मुनीश्वरने जोइ शुभ भावथी केवली थया.

कविलोअ बंभणमुणी, असोगवणिआइ मज्झयारंमि॥
लाहालोहत्तिपयं, झाणंतो जायजाईसरो ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–कपिल नामना ब्राह्मण मुनि अशोकवामीमां पोतानां मनथी (जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवढ्ढइ ॥ दो मासा कणयकज्जं, कोमीए न नीठइ ॥१॥) ए श्लोकनुं ध्यान करता जातिस्मरण ज्ञान पाम्या. ॥७॥

खवगनिमंतणपुव्वं, वासियभत्तेण शुद्ध भावेण ॥
भुजंतो नरनाणं, संपत्तो कूरगड्डुओ ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–शुद्ध भाववमे वासित भातथी तपस्वीयोने निमंत्रणापूर्वक भोजन करता कूरगड्डु मुनि केवलज्ञान पाम्या. ॥८॥

पुव्वभवसूरिविरईय–नाणासायणपभावदुम्मेहो ॥
नियनामं झायंतो, मासतुसो केवली जाओ ॥९॥

शब्दार्थ–पूर्वभवमां आचार्यपदे रह्या वता करेली ज्ञाननी आशातलाना प्रभावथी मूर्ख रहेला मासतुष मुनि पोतानां नामनुं ध्यान करता वता केवली थया. ॥९॥

हत्थिमि समारूढा, रिद्धि दहूण उसभसामिस्स ॥
तक्खण सुहज्झाणेणं, मरुदेवी सामिणी सिद्धा ॥१०॥

शब्दार्थ—हाथी उपर बेठेला श्रीमरुदेवी माता श्री रुषभ स्वामीनो समृद्धि जोइ तुरत शुभ्र ध्यानथी सिद्धिपद पाम्या

पडिजागरमाणीए, जंघाबलखीणमन्निआपुत्त ॥
संपत्तकेवलाए, नमो नमो पुप्फचूलाए ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—जाघना बलथी क्षीण थयेला अन्निकापुत्र मुनिनी सेवा करवाथी केवल ज्ञान पामेली पुष्पचूला साध्वीने नमस्कार थाउ' नमस्कार थाउ'! ॥११॥

पनरसयतावसाण, गोयमनामेणं दिन्नदिक्खाण ॥
उप्पन्नकेवलाण, सुहभावाणं नमो ताण ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—श्री गौतम स्वामीये दीक्षा आपेला अने शुभ्र भाववाला होवाने लीधे उत्पन्न थयेला केवल ज्ञानवाला ते पंदरसो तापसोने नमस्कार थाउ ॥ १२ ॥

जीवस्स सरीराओ, भेअं नाउं समाहिपत्ताणं ॥
उप्पाडिअनाणाण, खंदगसीसाण तेसि नमो ॥१३॥

शब्दार्थ—शरीरथी जीवनु जूदापणुं जाणी समाधि पामेला अने उपजावेला केवल ज्ञानवाला ते स्कदकसूरिना शिष्योने नमस्कार थाउ ॥१३॥

सिरिवद्धमाणपाए, पूअत्थि सिंदुवारकुसुमेहि ॥
भावेण सुरलोए, दुग्गई नारी सुहं पत्ता ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—नगोडना फुलथी श्री वर्द्धमान प्रभुना चरणने भावथी पूजवानी इच्छावालो दुर्गता नामनी स्त्री देवलोकमा सुख पामी ॥ १४ ॥

भावेण भुवणनाहं, वंदेउं दुद्दरोवि संचलिओ ॥
मरिऊण अंतराले, नियनामंको सुरो जाओ ॥१५॥

शब्दार्थ—दडको पण भावथी श्री वीरप्रभुने वांदवा माटे वाव्यमांथी निकलीने चाल्यो; परंतु रस्तामां मृत्यु पामीने, पोताना नाम वालो (दर्दुर नामवालो) देवता थयो. ॥ १५ ॥

विरयाविरय सहोअर, उदगस्स भरेण भरिअसरिआए॥
भणिआइ साविआए, दिन्नो मग्गुत्ति भाववसा ॥१६॥

शब्दार्थ—विरक्त तथा अविरक्त (मुनि तथा राजा) एवा बे सगा भाइयोए कहेवाथी पाणीना समूहथी भरेली नदीये भावथी श्राविकाने मार्ग आप्यो. ॥ १६ ॥

सिरिचंमरुद्दगुरुणा, ताम्भिज्जंतोवि दंमघाएहिं ॥
तक्कालं तस्सीसो, सुहलेसो केवली जाओ ॥१७॥

शब्दार्थ—श्री चंडरूद्राचार्ये दंमना प्रहारथी ताडन करेलो एवोय पण तेमनो शुभलेश्यावालो शिष्य तुरत केवली थयो. ॥ १७ ॥

जं न हु भणिओ बंधो, जीवस्स वहेवि समिइगुत्ताणं ॥
भावो तत्थ पमाणं, न पमाणं कायवावारो ॥१८॥

शब्दार्थ—जीवना वधने विषे पण समिती तथा गुप्तीवंतने जे निश्चे बंध नथी कह्यो; तेमां भाव प्रमाण छे; परंतु काय व्यापार प्रमाण नथी. ॥ १८ ॥

भाव चिय परमत्थो, भावो धम्मस्स साहओ भणिओ ॥
समत्तस्सवि बीअं, भाव चिय बिंति जगगुरुणो ॥१९॥

शब्दार्थ—भाव एज निश्चे परमार्थ छे अने भाव एज धर्मनो साधक कह्यो छे. तीर्थंकरो सम्यक्त्वनुं बीज भावज कहे छे.

किं बहुणा जणिएणं, तत्त निसुणेह जो महासत्ता ॥
मुक्खसुहबीयजूओ, जीवाण सुहावहो जावो ॥२०॥

शब्दार्थ–बहु कहेवाथी शु ? हे महासत्ववतो ! तत्वनी वात सान्नलो जूवोने, मोक्षना सुखनु बीजन्नूत सुखकारी जावजछे

ईय दाणसील तव जा-वणाओ जो कुणईसत्ति भत्तिजरो॥
देविदविंदमहिअ, अ ईरा सो लहई सिद्धिसुह ॥२१॥

शब्दार्थ– जे शक्ति अने जक्तिना समूहवालो पुरुष आ उपर कहेला दान, शील, तप अने जावनाने आचेरे छे, ते देवताना इंद्रोना समूहे अथवा देवेन्द्रसूरिये पूजेला मोक्ष सुखने थोडा वखतमा पामे छे ॥ २१ ॥

॥ इति जावकुलक ॥

॥ अथ उपदेशरत्न कोश ॥

उवएसरयणकोस, नासिअनीसेसलोगदोगच्चं ॥
उवएसरयणमालं, वुछं नमिऊण वीरजिण ॥१॥

शब्दार्थ–श्री वीरप्रजुने नमस्कार करीने हु नाश कर्या छे सर्व लोकना दारिद्र जेणे एवा अने उपदेशरूप रत्ननी माला रूप उपदेश रत्नकोशने कहु छु ॥ १ ॥

जीवदयाइं रमिज्जइ, इंदियवग्गो दमिज्जइ सयावि ॥
सच्चं चेव चविज्जइ, धम्मस्स रहस्समिणमेव ॥२॥

शब्दार्थ–जीव दयामा रमवु, इन्द्रियोना समूहने नित्य दमवो अने सत्यज बोलवु एज धर्मनु रहस्य छे ॥ २ ॥

सील न हु खंमिज्जइ, न सवसिज्जइ समं कुसीलेहि ॥
गुरुवयण न खलिज्जइ, जइनज्जइधम्मपरमत्थो ॥३॥

शब्दार्थ—निश्चे शीलने न खंमवुं. कुशीलियानी साथे न वसवुं, गुरुनुं वचन न उलंघवुं. एज श्री जिनेश्वरना धर्मनो उत्कृष्ट अर्थ छे. ॥ ३ ॥

चवलं न चंकमिज्जइ, विरइज्जइ नेव उप्नमो वेसो ॥
वंकं न पलोइज्जइ, रुठावि जणंति किं पिसुणा ॥४॥

शब्दार्थ—चपलपणाथी (अयतनाथी) न चालवुं, उद्भट वेष न पहेरवो, वांकी दृष्टिथी न जोवुं के, जेथी रीसायला एवा पण चाडीया शुं बोले ? ॥ ४ ॥

निअमिज्जइ नीअजीह, अविआरिअ नेव किज्जए कज्जं॥
न कुलक्कमोअ लुप्पइ, कुविउ किं कुणइ कलिकालो ॥५

शब्दार्थ—पोतानी जीभने वश करवो, अविचार्युं काम न करवुं अने पोताना सारा कुलाचारने न लोपवो; तो पछी को प पामेलो कलिकाल पण शुं करे ? अर्थात् कांइ न करे. ॥५॥

मम्मं नउ छविज्जइ, कस्सवि आलं न दिज्जइ कया ॥
कोवि न उक्कोसिज्जइ, सज्जणमग्गो इमो दुग्गो ॥६॥

शब्दार्थ—कोइनुं मर्म वचन न बोलवुं, कोइने क्यारे पण आल न देवुं तेमज कोइने तिरस्कार पण न करवो. आ प्रमाणे सज्जननो मार्ग दुर्लभ छे. ॥ ६ ॥

सव्वस्स उवयरिज्जइ, न पम्हसिज्जइ परस्स उवयारो ॥
विहलं अवलंबिज्जइ, उवएसो एस विउसाणं ॥७॥

शब्दार्थ—सर्वने उपकार करवो, पारको उपकार न विसारवो, दुःखीने आधार आपवो. ए डाह्या पुरुषोनो उपदेश जाणवो.

कोवि न अब्भथ्थिज्जइ, किज्जइ कस्सवि न पथ्थणाभंगो॥
दीणं न य जंपिज्जइ, जीविज्जइ जाव जिअलोए ॥८॥

शब्दार्थ—ज्या सुधी जीवलोकमा जीविये त्यां सुधी कोइ नो पासे याचना न करवी, तेमज कोइनी याचनानो भंग न करवो अने दीन वचन न बोलवु ॥ ८ ॥

अप्पा न पससिज्जइ, निंदिज्जइ दुज्जणोवि न कयावि ॥
वहु वहुसो न हसिज्जइ, लब्भइ गुरुअत्तणं तेण ॥ए॥

शब्दार्थ—पोताना वखाण न करवा, दुर्जनने क्यारे पण न निंदवो, वहु वहु न हसवु के, जेथी म्होटाइपणु पामीये ए

रिउणो न वीससिज्जइ, कयावि वंचिजए न वीसत्थो ॥
न कयग्घेहिं हविज्जइ, एसो नायस्स नीसंदो ॥१०॥

शब्दार्थ—शत्रुनो विश्वास न करवो, विश्वासवालाने क्यारे पण न ठगवो, कर्या गुणना लोपक (कृतघ्न) न थवु ए न्या यनो रस्तो जाणवो ॥ १० ॥

रच्चिज्जइ सुगुणेसु, वज्झइ राउ न नेहवप्पेसु ॥
किज्जइ पत्तपरिरका, दरकाण इमोअ कसवट्टो ॥११॥

शब्दार्थ—सारा गुणवालाने विषे राचीये, साचा स्नेह रहि तनी साथे राग न बांधीये अने पात्रनी परीक्षा करीये माह्या पुरुषनी एज कसोटी छे ॥ ११ ॥

नाकज्जमायरिज्जइ, अप्पा पाम्मिजए न वयणिज्जे ॥
न य साहसं चइज्जइ, उन्निज्जइ तेण जगहत्थो ॥१२॥

शब्दार्थ—अकार्य न आदरवु, पोते निंदनीकमा न पडवु अने साहसने न त्यजी देवु के, तेथी जगत्मा हाथ ऊचो रहे १२

वसणेवि न मुम्निज्जइ, मुच्चइ माणो न नाम मरणेवि ॥
विहवरकएवि दिज्जइ, वयमसिधारं खु धीराणं ॥१३॥

शब्दार्थ—दुःखमा पण न मुंझावु, मरण आय तो पण मा

ननुं नाम न मूकवुं, लक्ष्मीनो नाश थाय तो पण दान आपवुं, ए वीरपुरुषोनुं असिधारा (तरवारनी धार सरखुं) वृत छे. १३

अइनेहो न वहिज्जइ, रूसिज्जइ न य पिएवि पयदिहं ॥
वघारिज्जइ न कली, जलंजली दिज्जइ दुहाणं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ—कोइनी साथे बहु स्नेह न करवो, स्नेही उपर निरंतर न रीसावुं, क्लेश न वधारवो तेमज दुःखोने जलांजली आपवी. अर्थात् दुःखने त्यजी देवुं. ॥ १४ ॥

न कुसंगेण वसिज्जइ, बालस्सवि घिप्पए हिअं वयणं ॥
अनयाउ निवहिज्जइ, न होइ वयणिज्जया एवं ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—कुसंगीनी साथे न वसवुं, बालकनुं पण हित वचन ग्रहण करवुं, अन्यायथी पाछा फरवुं के, जेथी आपणुं कोइ माठुं न बोले ॥ १५ ॥

विहवेवि न मच्चिज्जइ, न विसीइज्जइ असंपयाएवि ॥
वहिज्जइ समभावे, न होइ रणरणइ संतावो ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—धनवंतपणामां अभिमान न करवुं तेमज निर्धनपणामां खेद न करवो, शत्रु मित्रने विषे समभाव राखवो के, जेथी सारे खोटे संताप न होय ॥ १६ ॥

वन्निज्जइ भिच्चगुणो, न परुक्कं न य सुअस्स पच्चखं॥
महिलाउ नो भयाविहु, न नस्सए जेण माहप्पं ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—सेवकना गुण पाछल न वर्णववा, तेमज पुत्रना गुण समक्ष न वर्णववा, स्त्रीना गुण पाछल अने समक्ष न वर्णववा के, जेथी आपणी म्होटाइ नाश न पामे. ॥१७॥

जंपिज्जइ पिअवयणं, किज्जइ विणउअ दिज्जए दाणं ॥
परगुणगहणं किज्जइ, अमूलमंतं वसीकरणं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—प्रीय वचन बोलवुं, विनय करवो, दान आपवुं अने पारका गुण ग्रहण करवा ए मूल विनानो वशीकरण मंत्रछे

पत्थावे जंपिजइ, सम्माणिज्जइ खलोवि बहुमज्झे ॥
न जइ सपरविसेसो, सयलत्था तस्स सिज्झंति ॥१९॥

शब्दार्थ—उचित अवसरे बोलवुं, बहु माणसोनी मध्ये खलने पण सन्मान आपवु, स्वपरनु विशेषपणु न त्यजवुं ए प्रमाणे चालनाराना सर्वे अर्थों सिद्ध थाय छे ॥ १९ ॥

मंतताण न पासे, गम्मइ नइ परग्गहे अबीएहिं ॥
पडिवन्नं पालिजइ, सुकुलीणत्तं हवइ एवं ॥ २० ॥

शब्दार्थ—मंत्र तंत्रने न जोवा, एकला पारका घरमा न जवु अने पोतानु कहेलु पालवुं ए प्रमाणे चालवाथी सारु कुलीन पणुं होय छे ॥ २० ॥

भुंजइ भुंजाविजइ, पुच्छिज्ज मणोगयं कहिज्ज सयं ॥
दिजइ लिजइ उचिअं, इच्छिजइ जइ थिरं पिम्मं ॥२१॥

शब्दार्थ—जो मित्रनी साथे स्थिर प्रेम इच्छिये तो तेने घेर जमीये अने तेने जमाडीये, आपणा मननो विचार तेने पूछीए अने ते पूछे तेनो उतर आपीए, वली योग्य वस्तु आपीए अने लइए

कोवि न अवमन्निजइ, न य गव्विजइ गुणेहिं निअएहिं ॥
न य विम्हओ वहिजइ, बहुरयणा जेणिमा पुहवी ॥२२॥

शब्दार्थ—कोइने पण अपमान न आपवु, तेम पोताना गुणथी गर्व पण न करवो वली मनमा आश्चर्य पण न पामवुं कारण के, आ पृथ्वी बहु रत्नवाली छे ॥ २२ ॥

आरंभिजइ लहुअं, किजइ कज्ज महत मविपत्ता ॥
न य उक्करिसो किजइ, लप्पइ गुरुअत्तणं जेण ॥२३॥

शब्दार्थ—प्रथम आरंभ थोमो करवो अने पाछलथी म्होटुं कार्य पण करवुं. वली पोतानुं उत्कृष्टपणुं न करवुं के, जेथी म्होटाइपणुं पामीये, ॥ २३ ॥

झाइज्जइ परमप्पा, अप्पसमाणो गणिज्जइ परो ॥
किज्जइ न रागदोसो, छिन्निज्जइ तेण संसारो ॥ २४॥

शब्दार्थ—परमात्मानुं ध्यान करवुं, बीजाने पोतानां समान गणवा, राग दोष पण न करवो, तथी संसार छेदाइ जाय छे.२४

उवएसरयणमालं, जो एवं ठवइ सुद्ध नित्रकंठे ॥
सो नर सिवसुहलच्छी, वच्छयले रमइ सच्छाइं ॥२५॥

शब्दार्थ—जे पुरुष आ प्रमाणे उपदेशरत्नमालाने पोताना कंठने विषे स्थापन करे छे; तेनां वक्षस्थलमां मोक्ष सुखनी लक्ष्मी पोतानी इच्छा प्रमाणे क्रीमा करे छे. ॥ २५ ॥

॥ इति उपदेश रत्न कोष.

॥ अथ शाश्वताजिन नामादि संख्या स्तवन ॥

सिरि उसह वद्धमाणं, चंदाणण वारिसेण जिणचंदं ॥
नमिउं सासय जिण भव-ण संख परिकित्तणं काहं॥१॥

शब्दार्थ—सामान्य केवलीनी मध्ये चंद्र समान श्री रुषभ देव, श्री वर्द्धमान स्वामी, श्री चंद्रानन अने श्री वारिषेणने नमस्कार करीने शाश्वता जिनभुवननी संख्यानुं कीर्तन करुं छुं.॥१॥

जोइ वणेसु असंखा, सग कोमि बिसयरि लक्ख भवणेसु
चुलसी लक्खा सगनवइ, सहस तेवीसुवरि लोए ॥२॥

शब्दार्थ—ज्योतसी अने व्यंतरने विषे असंख्याता, भुवनपतिमां सात क्रोम अने बोतेर लाख, तथा उर्ध्व लोकमां चोरा

सी लाख सत्ताणुं हजार अने त्रेवीस जिन भुवन छे ॥ २ ॥
बावन्ना नंदीसर–वरंमि चउ चउ कुंमले रुअगे ॥
इअ सव्वे चउवारा, तिउवारा सेसजिण भवणा ॥३॥
शब्दार्थ–आठमा नंदीश्वर द्वीपमा बावन तथा कुंमल द्वीप अने रुचकद्वीपमा चार चार एम साठ जिनभुवन चार बारणा वाला छे अने बाकीना जिनभुवनो त्रण बारणावाला छे ३
पत्तेअं बारेसु, मुहमंमव रंगमंमवे तत्तो ॥
मणिमयपीढं तदुवरि, थूभे चउदिसिसु चउ पमिमा ४
शब्दार्थ–प्रत्येक बारणामा मुखमंमप अने रंगमंमपछे त्यार पछी मणिमयपीठ छे ते पीठ उपर स्थूभ अने ते स्थूभ उपर चार दिशामा चार प्रतिमा छे ॥ ४ ॥
तत्तो मणीपीढजुगे, असोग धम्मभउ अ पुक्खरणी ॥
पइभवण पमिमाणं, मझे अट्ठुत्तर सयं च ॥ ५ ॥
शब्दार्थ–त्यार पछी मणिपीठनु जोमलु, अशोक वृक्ष, धर्म ध्वज अने पुष्करिणी वाव्य छे प्रत्येक भुवननी मध्ये (गभारा मा) एकसो आठ प्रतिमाउ छे ॥ ५ ॥
पमिमा पुण गुरुआउ, पण धणुसय लहु अ सत्तहत्थाउ॥
मणिपीढे देवछं–दयंमि सीहासणनिसन्ना ॥ ६ ॥
शब्दार्थ–वली म्होटी प्रतिमाउ पांचसो धनुष्यनी अने न्हानी प्रतिमाउ सात हाथनी छे ते प्रतिमाउ मणिपीठ उपर देवछंदामा सिंहासन उपर बेठेली छे ॥ ६ ॥
जिण पिढे छत्तधरा, पमिमा जिणभिमुह दुन्नि चमरधरा
नागा भूआ जक्खा, कुंडधरा जिणमुहा दो दो ॥ ७ ॥
शब्दार्थ–जिनप्रतिमानी पाछल एक छत्रधर प्रतिमा अने

सन्मुख बे चामरधारक प्रतिमा छे. वली जिनेश्वरना सन्मुख नागदेवनी, भूतदेवनी, जक्षदेवनी अने कुंमधारीनी बे बे प्रतिमा छे. (छत्रधरादिकनी सर्व मली अगीयार प्रतिमा थाय छे.) ॥७॥

सिरिवच्छ नाभि चुच्चुअ, पय कर केस महि जीह तालु रुणा ॥
अंकमया नह अच्छी, अंतो रत्ता तहा नासा ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–श्री जिनेश्वरना श्रीवत्स, नाभि, चुंचुक, हाथेली, पगनां तलीयां, मस्तक. जीभ अने तालवुं एटलां राता वर्णवालां छे. नख अने आंख अंकरत्नमय छे तेमज बेडे राता वर्ण वाली नासिका छे. ॥ ८ ॥

ताराइ रोमराइ, अच्छिदला भमुहि केस रिठमया ॥
फलिह मय दसणा वयरम–य सीस विद्दुममया उठा॥९॥

शब्दार्थ–आंखनी कीकी, रुंवाडानो पंक्ति, आंखनी पांपण, नेण अने केश एटला श्यामरत्नमय छे, दांत स्फटिक रत्नमय छे, मस्तक वज्ररत्नमय छे अने होठ परवालां सरखा छे. ए

कणगमय जाणु जंघा, तणुजठी नास सवण भालोरू ॥
पलीयंक निसन्नाणं, इअ पडिमाणं भवे वन्नो ॥ १० ॥

शब्दार्थ–ढींचण, जांघ, शरीरनी यष्टी, नासिका, कान, कपाल अने साथल ए सर्व सुवर्णमय छे, वली पद्मासने बेठेली ए प्रतिमाना आ उपर कहेवा प्रमाणे वर्ण छे. ॥ १ ॥

भवणवण कप्पजोइस, उववाय भिसेअ तह अलंकारा
ववसाय सुहम्म सभा, मुहमंम्व माइ छक्कजुआ ॥११॥

शब्दार्थ–भुवनपति, व्यंतर, ज्योतसी अने बार देव लोक ए सर्वेमा मली पांच सभा छे. तेनां नाम उत्पात, अभिषेक, अलंकार, व्यवसाय अने सुधर्मा. ए सभाउ मुखमंडप विगेरे छ सहित छे.

तिडुवारा पत्तेअं, तोपुण सन्न थून सढि विबेहि ॥
चेइअ विबेहि समं, पञ्नवण बिब असीइसय ॥१२॥

शब्दार्थ–त्रण द्वारना जिनन्नूवनमा प्रत्येके चोमुखनी वार प्रतिमा ठे त्यारपढी दरेक बारणानी पाच पाच सन्नाना स्थून मा साठ जिनप्रतिविब ठे ते चैत्य (मूल) प्रतिविवनी साथे गणता दरेक न्नूवन प्रत्ये एकसो एसी जिनबिब थाय ठे ॥१॥ ६०–१०८–११२ ॥

जोयण सयंच पन्ना, विसयरि दीहत्त पिहुल उच्चत्तं ॥
वेमाणिअ नंदीसर, कुन्डल रुअगे न्नवणमाणं ॥१३॥

शब्दार्थ–वैमानीकना, नदीश्वर द्वीपना, कुंडलद्वीपनां अने रुचकद्वीपना वैमानो अनुक्रमे सो योजन, पचास योजन अने बोतेर योजन लांबपणे पहोलपणे अने उंचपणे जाणवा ॥१३॥

तीसकुलगिरिसुदस कुरु, मेरुवणिअसीइवीसगयदंते ॥
वक्खारेसु असीई, चउ चउ इसुआर मणुअ नगे ॥१४॥

शब्दार्थ–हिमवतादि त्रीस कुलगिरि पर्वत उपर त्रीस, देवकुरु उत्तर कुरुमा दश, मेरु पर्वतना वनमा ऐंसी, गजदंता पर्वत उपर वीश, वक्कारा पर्वत उपर ऐंसी अने इक्षुकार तथा मानुष्योत्तर पर्वत उपर चार २ जिन न्नुवन ठे ॥ १४ ॥

एआइ असुर न्नवण–ठिआइं पुव्वुत्त माण अद्धाइ॥
दल मित्तो नागाई–नवसु वणेसु इउ अद्धं ॥ १५ ॥

शब्दार्थ–असुर कुमारमा रहेला ए विगेरे जिनन्नुवननु (लांबा, पहोला अने उंचानु) प्रमाण पूर्वे कहेलाथी अर्द्धु जाणवु नागकुमारादि नव निकायमा तेथी अर्धुं जाणवुं अने व्यंतर भूवनमा तेनाथी अर्धुं जाणवु (असुर कुमारमा लांबा ५०

पहोला २५–उंचा ३६ नागकुमारमां–२५–१२॥–१८ व्यंतरमां १२॥–६॥–ए–योजन अनुक्रमे जाणवा. ॥ १५ ॥

दिग्गयगिरिसु चत्ता, दहे असी कंचणेसु इगसहसो ॥
सत्तरि महानईसु, सतरिसयं दीह वेअड्ढे ॥ १६ ॥

शब्दार्थ–दिग्गज पर्वत उपर चालीश, द्रहमां एंसी, कंचन गिरिने विषे एक हजार, महा नदीयोमां सीतेर अने लांबा वैताढ्य उपर एकसो सीत्तेर जिन जुवन छे. ॥ १६ ॥

कुंमेसु तिसय असीआ, वीसं जमगेसु पंच चूलासु ॥
इक्कारस सय सत्तरि, जंबूपमुहे दसतरूसु ॥ १७ ॥

शब्दार्थ–कुंडने विषे त्रणसो एंसी, यमक पर्वत उपर वोस, मेरुपर्वतनी चूलिका उपर पांच अने जंबू प्रमुख दश वृक्ष उपर अगीयार सो सीत्तेर जिनजुवन छे. ॥ १७ ॥

वट्टवेअड्ढे वीसा, कोस तयद्धंच दीहविछारा ॥
चउदस धणुसय चालीस, अहिअ उच्चत्तणो सव्वे १८

शब्दार्थ–वृत्त वैताढ्य उपर वीश जिनजुवन छे. ए सर्वे दिग्गजादि दश स्थानना २८५५ जिनजुवनो एक गाउ लांबां अने अर्धो गाउ पहोलां तेमज चौद सो चालीस धनुष्य उंचां छे.

अफदीविविदिसिसोलस, सोहम्मीसाणग्गदेविनयरीसु ॥
एवं बत्तीससया, गुणसठि जुआ तिरिअलोए ॥१९॥

शब्दार्थ–आठमा द्वीपनी विदिशाए सौधर्म अने ईशान ए बे इंद्रनी सोल देवीनी सोल नगरीयोमां सोल जिनभुवन छे. एम तिर्छालोकमां सर्व मली बत्रीससो ने उगणसाठ जिनजुवनछे

एवं तिहुअणमज्झे, अफ कोमी सत्तवन्न लरकाइं ॥
दोअसया बासीया, सासय जिणजवण वंदामि ॥२०॥

शब्दार्थ–ए प्रमाणे पूर्वे कहेला जर्द्द, अधो अने तिर्छा ए त्रणे लोकमा आठ क्रोड, सत्तावन लाख, बसोने ब्याली शाश्वता जिनभुवनने हु वाडु ॥ २० ॥

सठी लक्खा गुणनवइ कोमि, तेरकोमि सय विव जवणेसु
तिअसय वीसा इगनवइ, सहस लक्ख तिग तिरिअ २१

शब्दार्थ–तेरसो क्रोड, नव्यासी क्रोड अने साठ लाख एट ला जिनबिंब भुवनपतिमा छे, तेमज त्रण लाख, एकाणु हजार त्रणसो वीस जिनबिंब तिर्छालोकमा छे ॥ २१ ॥

एग कोमि सय खलु, बावन्ना कोमि चउणवइ लक्खा ॥
चउ चत्त सहस सगसय, सठा वेमाणि विंवाणि ॥२२॥

शब्दार्थ–एकसो क्रोम, बावन क्रोड, चोराणु लाख, चुमालीश हजार सातसो साठ एटला जिनबिंब वैमानिक देव लोकमा छे

पनरस कोमि सयाइ, डुचत्त कोडि अमवन्न लक्खाइं ॥
वत्तीससहस असीआ, तिहुअण विंवाणि पणमामि २३

शब्दार्थ–पदर सो क्रोम, बेतालीसक्रोम, अठावन लाख, बत्रीस हजार अने एसी एटला त्रण जुवनमा सर्व जिनबिंबने हु प्रणाम करुं ॥ २३ ॥

सिरि जरह निवइ पमुहे–हि जाइ अन्नाइं इत्र विहिआइ
देविंद मुणिंदथुआइ, दितु जवीयाण सिद्धिसुहं ॥२४॥

शब्दार्थ–श्री जरतचक्रवर्ती विगेरे राजाउए आ अढीद्वीप मा जे प्रतिबिंबो निपजाव्या छे अने देवेन्द्र सूरीश्वरे स्तव्या छे, ते जिनबिंब जव्यजनोने सिद्धि सुख आपो ॥ २४ ॥

जस्सेह मंगलेण, अह जक्षमसेस सत्त रयणाउ ॥
निरिलोए पण धणु सय, सासय पमिमा पणिवयामि२५

शब्दार्थ—उत्सेधांगुलनां प्रमाणे करी अधोलोकमां अने ऊर्ध्वलोकमां सर्वे सात हाथनी अने तिर्च्छालोकमां पांचसो धनुष्य नी शाश्वति प्रतिमाने हुं प्रणमुं छुं. ॥ २५ ॥

॥ इति शाश्वत जिननामादि संख्या स्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ त्रिलोक चैत्य बिंब संख्या ॥

॥ अधोलोकमां जिनभुवनबिंब संख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नाम	भुवन संख्या	जिनबिंब संख्या
१	असुरकुमारमां ॥	६४००००	११५२००००००
२	नागकुमारमां ॥	८४०००००	१५१२००००००
३	सुवर्णकुमारमां ॥	७२ लाख	१२९६००००००
४	विद्युत्कुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
५	अग्निकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
६	द्वीपकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
७	उदधिकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
८	दिग्कुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
९	वायुकुमारमां ॥	९६ लाख	१७२८००००००
१०	स्तनितकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
प्रत्येक	चैत्ये प्रतिमा १८० छे	कुल ७७२०००००	कुल १३८९६००००००

॥ उर्द्धलोकमां जिनभुवन बिंबसख्या ॥

स्थान सख्या	स्थानना नाम		भुवन संख्या	जिनबिंब सख्या
१	सौधर्मदेवलोके	॥	३२ लाख	५७६००००००
२	ईशानदेवलोके	॥	२८ लाख	५०४००००००
३	सनत्कुमारमा	॥	१२ लाख	२१६००००००
४	माहेन्द्रदेवलोके	॥	८ लाख	१४४००००००
५	ब्रह्मदेवलोके	॥	४ लाख	७२००००००
६	लातकदेवलोके	॥	५००००	९००००००
७	महाशुक्रदेवलोके	॥	४००००	७२०००००
८	सहस्त्रारदेवलोके	॥	६०००	१०८००००
९	आनतदेवलोके	॥	२००	३६०००
१०	प्राणतदेवलोके	॥	२००	३६०००
११	आरणदेवलोके	॥	१५०	२७०००
१२	अच्युतदेवलोके	॥	१५०	२७०००
३	प्रथमत्रीके (नवग्रैवेयकना)	॥	१११	१३३२०
३	बीजेत्रीके (नवग्रैवेयकना)	॥	१०७	१२८४०
३	त्रीजेत्रीके (नवग्रैवेयकना)	॥	१००	१२०००
५	अनुत्तरपाचे	॥	५	६००
			कुल ८४९७०२३	कुल १५२९४४४७६०

प्रथमदेवलोकथी १२ मा सुधी प्रत्येक चैत्ये १८० प्रतीमा छे ॥ पाच सभानी ६० प्रतीमा । त्रण वारणाना चोमुखनी १२ प्रतीमा । मध्य चैत्यनी १०८ प्रतीमा । सर्व मली १८० जाणवी ॥ ग्रैवेक अनुत्तरे १२० कल्पातीत छे, माटे सभा नथी ॥

॥ तिर्च्छालोकमां चैत्य बिंबसंख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नांम	जिनचैत्य संख्या	जिनबिंब संख्या
१	व्यंतर असंख्यनगरे॥	असंख्यभुवन	असंख्यबिंब
२	जोतषीचरथरमां ॥	असंख्यभुवन	असंख्यबिंब
३	नंदीश्वरद्वीपमां प्र०१२४	५२	६४४८
४	कुंडलद्वीपमां ॥	४	४९६
५	रुचकद्वीपमां ॥	४	४९६
६	कुंडलगिरिमां प्र०१२०	३०	३६००
७	देव उत्तरकुरुमां ॥	१०	१२००
८	मेरुवनने विषे ॥	८०	९६००
९	गजदंता पर्वते ॥	२०	२४००
१०	वखार पर्वते	८०	९६००
११	इखुकार पर्वते ॥	४	४८०
१२	मानुषोत्तर पर्वते ॥	४	४८०
१३	दिग्गजे ॥	४०	४८००
१४	द्रहे ॥	८०	९६००
१५	कंचनगिरिये ॥	१०००	१२००००
१६	महानदीयोये ॥	७०	८४००
१७	दिर्घ वैताढय गिरिये॥	१७०	२०४००
१८	कुंडे ॥	३८०	४५६००
१९	यमकगिरिये ॥	२०	२४००
२०	मेरुपर्वतनी चूलीकाये	५	६००
२१	जंबुप्रमुख वृक्षे ॥	११७०	१४०४००
२२	वृतवैताढ्यगिरिये॥	२०	२४००
२३	नगरी वीजयादिके ॥	१६	१९२०
		कुल ३२५९	कुल ३९१३२०

एह्मा ६० प्रासाद तेमां प्रत्येके १२४ पातिमा बाकी ३१७७ प्रासाद त्रीभुवारा । तेमा प्रत्येके १२० पतिमा ॥

॥ त्रिजगसंख्या ॥

अधोलोके ॥	७७२०००००	१३७७६००००००
उर्ध्वलोके ॥	८४७७०२३	१५२७४४७६०
तिर्छालोके ॥	३२५७	३७१२०

॥ एम त्रणलोकमां ॥

साश्वता प्रासाद ॥	साश्वता जिनबिंब ॥
८५७००२८२	१५४२५८३६०८०

॥ इति सास्वता जिनभुवन तथा जिनबिंब संख्यायंत्र समाप्तम्॥

॥ अथ शत्रुंजय लघुकल्प ॥

अइमुत्तयकेवलिणा, कहिअ सेत्तुंजतित्थमाहप्पं ॥
नारयरिसिस्स पुरउ, त निसुणह भावउ भविआ ॥१॥

शब्दार्थ–हे भव्यजनो! अति मुक्त मुनिये नारदरुपिनी आगल शत्रुंजय तीर्थनु महात्म्य कह्यु छे, तेने तमे भावथी साभलो.

सेत्तुजे पुंडरीउ, सिद्धो मुणिकोडीपंचसजुत्तो ॥
चित्तस्स पुण्णिमाए, सो भन्नइ तेण पुंडरिउ ॥ २ ॥

शब्दार्थ–शत्रुंजय उपर पुंडरिक गणधर पाच क्रोड साधु सहित चैत्रमासनी पुनमे सिद्ध थया छे, तेथी ते पर्वतनु नाम पुंडरिक कहेवाय छे ॥ २ ॥

नमि विनमि रायाणो, सिद्धा कोमिहिं दोहीं साहुणं ॥
तह दविरू वालीखिल्ला, निव्वुआ दसय कोडिन्न ॥३॥

शब्दार्थ—नमि अने विनमि राजा बे क्रोड साधुसहित सिद्ध थया. तेमज डाविरू अने वालीखिल बे बंधु मुनियो दशक्रोरू साधु साथे सिद्ध थया छे. ॥ ३ ॥

पज्जुन्नसंबपमुहा, अद्धु ठाउ कुमारकोमिउ ॥
तह पमवावि पंचय, सिद्धिगया नारयरिसि य ॥४॥

शब्दार्थ—प्रद्युम्न सांब विगेरे साडा आठ क्रोरू कुमारो तेमज पांच पांमवो अने नारदऋषि सिद्धि पद पाम्या. ॥ ४ ॥

थावच्चा सुय सेलं—गाय मुणिणोवि तह राममुणि ॥
जरहो दसरहपुत्तो, सिद्धा वंदामि सेत्तुंजे ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—थावच्चा पुत्र मुनि, शुकमुनि, शेलकमुनि तेमज दशरथना पुत्र राममुनि अने जरतमुनि शत्रुंजय उपर सिद्ध थया छे, तेमने हुं वांदु छुं. ॥ ५ ॥

अन्नेवि खवियमोहा, उसजाइविसालवंससंजूआ ॥
जे सिद्धा सेत्तुजे, तं नमह मुणि असंखिजा ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—बीजा पण मोहने खपावनारा अने ऋषजादिकना विशाल वंशमां उत्पन्न थयेला जे मुनियो शत्रुंजय उपर सिद्ध थया छे ते असंख्याता मुनियोने हुं वांडु छुं. ॥६॥

पंनास जोयणाइं, आसी सेत्तुंजविछडो मूले ॥
दसजोयण सिहरतले, उच्चत्तं जोयणा अठ ॥ ७ ॥

शब्दार्थ—मूलमां शत्रुंजयनो विस्तार पचास जोजन हतो, शिखर उपर दश जोजन अने उंचपणे आठ जोजन हतो.

जं लहइ अन्नतिछे, उग्गेण तवेण बंन्नचेरेण ॥
तं लहइ पयत्तेणं, सेत्तुंजगिरिम्मी निवसते ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–अन्यतीर्थमा उग्रतपथी अथवा ब्रह्मचर्यथी जे फल प्राप्त थाय ते फल प्रयत्ने शत्रुजय उपर वसवाथी थाय छे ८

ज कोम्मिए पुन्नं, कामियआहारन्नोइआ जेउ ॥
जं लहइं तछ पुन्नं, एगो वासेण सेत्तुंजे ॥ ९ ॥

शब्दार्थ–इछित न्नोजन वडे क्रोम माणसने जमामवाथी जे पुण्य थाय, ते पुण्य शत्रुंजय उपर एक उपवास करवाथी थाय छे.

जं किची नामतीछं, सग्गे पायाले माणुसे लोए ॥
त सव्वमेव दिछ, पुमरिए वदिए संते ॥ १० ॥

शब्दार्थ–स्वर्ग, पाताल अथवा मनुष्य लोकमा जे कोइ पण नाम मात्र तीर्थ होय, ते सर्व फक्त शत्रुजयने वादवाथी दीठा जाणवा ॥ १० ॥

पम्लािन्नते संघ, दिछमदिछेय साहूसेत्तुंजे ॥
कोम्गिुणं च अदिछे, दिछेअ अणतये होई ॥११॥

शब्दार्थ–शत्रुजय पर्वतने दीठा अणदीठा पण तेना सन्मुख चालवाथी चतुर्विध संघनी न्नक्ति करवा जेटलु पुण्य थाय छे, न देखवाथी क्रोम गणु अने देखवाथी अनतगणुं थाय छे

केवलनाणुप्पत्ती, निव्वाण आसि जछ साहूणं ॥
पुमरिए वदित्ता, सव्वे ते वंदिया तछ ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–ज्या साधुउने ज्ञाननी उत्पत्ति अने मोक्षप्राप्ति होय छे, त्या ते पुमरीकगिरिने वंदन करवाथी ते सर्वे मुनियोने वाद्या जाणवा ॥ १२ ॥

अष्टावयं समेए, पावा चंपाइ उज्जंत नगे य ॥
वंदिता पुन्न फलं, सयगुणं तंपि पुंडरीए ॥ १३ ॥

शब्दार्थ—ऋषभ देवनुं मोक्ष क्षेत्र अष्टापद, जिन सिद्धक्षेत्र समेतशिखर, वीरप्रभुनुं मोक्षस्थान पावापुरी, वासुपूज्यनुं सिद्धक्षेत्र चंपानगरी अने नेमनाथनुं मोक्षस्थान गिरनार. ए सर्व तीर्थने वांदवाथी सो गणुं पुण्य पुंडरिक तीर्थने भेटवाथी थाय छे.

पूआ करणे पुन्नं, एगगुणं सयगुणं च पडिमाए ॥
जिणभवणेण सहस्सं, णंतगुणं पालणे होइ ॥१४॥

शब्दार्थ—पूजा करवाथी जे पुण्य थाय ते एक गणुं, तेथी सो गणुं प्रतिमा भरावववाथी थाय छे, तेथी जिन भुवन करावबाथी हजारगणुं अने अनंतगणुं फल तीर्थरक्षाथी होय छे. १४

पडिमं चेइहरं वा, सित्तुंजगिरीस्स मथ्थए कुणइ ॥
भूत्तूण भरहवासं, वसइ सग्गेण निरुवसग्गे ॥१५॥

शब्दार्थ—जे माणस शत्रुंजय पर्वत उपर प्रभुनी प्रतिमा अथवा जिनमंदिर करावे छे, ते माणस भरत क्षेत्रनुं राज्य भोगवीने स्वर्ग अथवा मोक्ष पामे छे. ॥ १५ ॥

नवकार पोरिसीए, पुरिमढे गासणं च आयामं ॥
पुंडरीयं च सरंतो, फलकंखी कुणइ अभत्तठं ॥१६॥

शब्दार्थ—फलनी इच्छा करनारो नोकारसीनुं, पोरसीनुं, पुरिमढनुं, एकासणानुं अने आंबीलनुं एटलानुं पच्चक्खाण करे तेमज पुंडरिकनुं स्मरण करतो छतो उपवास करे. ॥ १६ ॥

छठ्ठ ठ्ठम दसम दुवा—लसाण मास ध्धमास खवणाणं ॥
तिगरणसुध्धो लहइ, सित्तुंजं संभरंतोअ ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—छठ, अठम, दशम, दुवालस, पक्षक्षमण अने मा

सक्रमण. ए सर्व करवानु फल मन, वचन अने कायाथी शुद्द एवो जे माणस शत्रुंजयने संज्ञारे ते पामे छे ॥ १७ ॥

छठेण ज्ञत्तेण, अपाणेणं तु सत्त जत्ताइ ॥
जो कुणइ सेत्रुंजे, तइय ज्ञवे लहइ सो मुरकं ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—जे माणस चोवीहार छठ्ठज्ञक्ते शत्रुजयनी सात जात्रा करे छे ते त्रीजा ज्ञवे मोक्ष पामे छे ॥ १८ ॥

अज्ञवि दीसइ लोए, ज्ञत्तं चईऊण पुंमरीयनगे ॥
सग्गे सुहेण वच्चइ, सीलविहूणोवि होऊण ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—आज पण लोकमा देखाय छे के, जे माणस शील रहित छतो पण पुंडरिक गिरि ज्ञपर अनशन करे छे ते सुखे स्वर्गमा जाय छे ॥ १९ ॥

छत्तं अय पमागं, चामर ज्ञिगार थालदाणेण ॥
विज्ञाहरोअ हवइ, तह चक्की होइ रहदाणा ॥ २० ॥

शब्दार्थ—माणस छत्र ध्वजा, पताका, चामर, कलश अने थाल ए वस्तुउना दानथी विद्याधर थाय छे अने रथदानथी चक्रवर्ती पद पामे छे ॥ २० ॥

दस वीस तीस चत्ता, लरकपन्नासा पुप्फदामदाणेण ॥
लहइ चउत्थ छठ—ठम दसम डुवालस फलाइं ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—दशलाख, वीशलाख, त्रीशलाख, चालीशलाख, अथवा पच्चासलाख पुष्पनी मालाना दानथी (चडावाथी) अनुक्रमे एक उपवासनु, बे उपवासनु, त्रण उपवासनु, चार उपवासनु अथवा पाच उपवासनु फल थाय छे ॥ २१ ॥

धूवे परकुववासो, मासरकमणं कपूरधूवंमि ॥
कित्तिय मासरकमणं, साहूपमिलाज्ञिए लहइ ॥ २२ ॥

शब्दार्थ—कृष्ण अगुरुना धूपथी पंदर दिवसना उपवासनुं फल अने कर्पूरना धूपथी एक मासना उपवासनुं फल थाय छे. वली साधुने शुद्ध आहारादिक आपवाथी केटलाक मासना उपवासनुं फल थाय छे. ॥ २२ ॥

न वितं सुवन्न भूमी–भूसणदाणेण अन्नतिछेसु ॥
जं पावइ पुन्न फलं, पुआ न्हवणेण सित्तंजे ॥ २३ ॥

शब्दार्थ—शत्रुंजय उपर तीर्थपतिने पूजा न्हावण कराववाथी जेटलुं पुण्यफल प्राप्त थाय, तेटलुं पुण्यफल बीजा तीर्थमां सुवर्ण, भूमी अथवा आभूषणनां दानथी पण न थाय. ॥२३॥

कंतार चोर सावय, समुद्द दारिद्द रोग रिउ रुद्दा ॥
मुच्चंति अविग्घेणं, जे सेत्तुंजं धरंति मणे ॥ २४ ॥

शब्दार्थ—जे माणस मनमां शत्रुंजयनुं ध्यान करे छे ते माणस अरण्यना, चोरना, सिंहादिकना, समुद्रना, दारिद्रना, रोगना, शत्रुना अने भयंकर अग्निना भयने निर्विघ्नपणे त्यजी दे छे.

सारावली पयन्नग, गाहाउ सुअहरेण भणिआउ ॥
जो पढइ गुणइ निसुणाई, सो लहइ सित्तुंजजत्तफलं २५

शब्दार्थ—श्रुतधरे सारावली नामना प्रज्ञापना सूत्रमां जे गाथाउ कही छे, तेने जे माणस भणे छे, गणे छे अथवा सांभले छे, ते शत्रुंजयनी जात्राना फलने पामे छे. ॥२५॥

॥ इति शत्रुंजय लघुकल्प समाप्त ॥



॥ अथ उपगारी श्री रत्नागरसूरिजी कृत ॥

॥ श्री रत्नाकर पचीसी ॥

श्रेयःश्रिया मंगलकेलिसद्मः, नरेन्द्रदेवेन्द्रनताघ्रीपद्म ॥
सर्वज्ञ सर्वातिशय प्रधान, चिर जय ज्ञानकलानिधान १

शब्दार्थ–मोक्ष लक्ष्मीने मंगल एवु क्रीडा करवानु मंदिर, चक्रवर्त्ती अने इंद्रो जेमना चरण कमलमा नमस्कार करी रह्या छे एवा, सर्व जाण, चोत्रीश अतिशये करीने प्रधान अने ज्ञान कलाना भंडार एवा हे प्रभो ! तमे दीर्घकाल जयवंता वर्त्तो १

जगत्त्रयाधार कृपावतार, दुर्वारसंसारविकारवैद्य ॥
श्रीवीतरागत्वयिमुग्धभावा,द्विज्ञप्रभोविज्ञपयामिकिंचित्॥

शब्दार्थ–त्रण जगत्ना आधार, कृपाना अवतार, दुःखे निवारवा योग्य ससाररूप विकारने दुर करनारा वैद्य एवा हे विशेष जाण प्रभो ! हु भोला भावथी तमारी आगल काइ विनती करुं छु ॥ २ ॥

किं बाललीलाकलितो न बालः,
पित्रोःपुरो जल्पति निर्विकल्पः ॥
तथा यथार्थं कथयामि नाथ,
निजाशय सानुशयस्तवाग्रे ॥ ३ ॥

शब्दार्थ–हे नाथ ! बालक्रीडा सहित एवो बालक माता पितानी आगल विकल्प रहित शुं नथी बोलतो ? तेम हुं पण तमारी आगल पश्चाताप करतो छतो म्हारो पोतानो आशय कहु छु ॥ ३ ॥

दत्त न दान परिशीलित च,
न शालिशील न तपोभितप्तम् ॥

शुन्नो न न्नावोऽप्यन्नवन्नवेऽस्मिन्,
विन्नो मया न्रांतमहो मुधैव ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—हे विन्नो! में दान आप्युं नथी, सुशोन्नित एवुं शील पाळ्युं नथी, तप कर्युं नथी तेमज आ न्नवमां मने शुन्न न्नाव पण थयो नथी, माटे अहो! हुं फोगटज न्रांती पाम्योछुं.

दग्धोऽग्निना क्रोधमयेन दष्टो,
दुष्टेन लोन्नाख्यमहोरगेण ॥
ग्रस्तोऽन्निमानाजगरेण माया-
जालेन बद्धोऽस्मि कथं न्नजे त्वां ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—हे प्रन्नो! क्रोधरूप अग्निथी बळेलो, लोन्नरूप दुष्ट महा सर्पे डसेलो, अन्निमान रूप अजगरे गळेलो अने मायाथी बंधाइ रहेलो हुं तमने शी रीते न्नजी शकुं? ॥ ५ ॥

कृतं मयामुत्र हितं न चेह,
लोकेऽपि लोकेश सुखं न मेऽन्नूत् ॥
अस्मादृशां केवलमेव जन्म,
जिनेश जज्ञे न्नवपूरणाय ॥ ६ ॥

शब्दार्थ—हे लोकेश! में परलोकमां हितकारी अने आ लोकमां पण हितकारी एवुं कांइ कर्युं नथी, जेथी मने आ जन्ममां सुख नथी मळ्युं. हे जिनेश्वर! ते माटे अमारा सरखानो जन्म फक्त न्नव पूरवा माटेज थयो छे. ॥ ६ ॥

मन्ये मनो यन्न मनोज्ञवृत्तं,
त्वदास्यपीयूषमयूखलान्नात् ॥
द्रुतं महानंदरसं कठोर-
मस्मादृशां देव तदश्मतोऽपि ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–हे मनोज्ञवृत्त ! हुं जाणु छु के, तमारा मुखरूप अमृतना किरणोनो लाभ थयाथी पण अमारु मन महा आनंद ने ग्रहण करतु नथी, तेथी ते पत्थरथी पण कठीण छे ॥ ७ ॥

त्वत्‌ सुद्‌.प्राप्यमिदं मयाप्तं, रत्नत्रयं भूरिभवभ्रमेण ॥
प्रमादनिद्रावशतो गतं तत्‌ .कस्याग्रतो नायकपूत्करोमि

शब्दार्थ–ससारमा वहु भटकता एवा में दुखे मेलवी श काय एवा आ ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप त्रण रत्न तमाराथी मेलव्या हता ते प्रमाद निद्रना वशथी गुमावी दीधा छे, तो हवे हे नायक ! हुं कोनी आगल जइने पोकार करुं ॥ ८ ॥

वैराग्यरंगो परवचनाय, धर्मोपदेशो जनरंजनाय ॥
वादाय विद्याध्ययनं च मे भूत्‌, कियद्‌ब्रुवे हास्यकरं स्वमीश

शब्दार्थ–हे ईश ! म्हारो वैराग्य रंग बीजाने ठगवाने अर्थे थयो, धर्मोपदेश माणसोने राजो करवाने अर्थे थयो अने विद्या भ्यास वाद करवा माटे थयो आवुं म्हारु हास्यकारक कृत्य केटलुं कहुं ? ॥ ९ ॥

परापवादेन मुखं सदोषं, नेत्रं परस्त्रीजनवीक्षणेन ॥
चेतःपरापायविचिंतनेन,कृतं भविष्यामि कथं विभोहम्‌१०

शब्दार्थ–हे विभो बीजाना अछता दोष बोलवाथी मुखने, परस्त्रीने जोवाथी नेत्रने अने बीजाओने कष्ट चितववाथी चित्त ने एम ए त्रणेने मलीन कर्या छे, तो हवे म्हारी शी गति थशे ?

विडंबितं यत्स्मरघस्मरार्ति–दशावशात्स्वंविषयांधलेन ॥
प्रकाशितं तद्भवतो ह्रियैव, सर्वज्ञ सर्वं स्वयमेव वेत्सि ११

शब्दार्थ–हे सर्वज्ञ कामदेवना पापनी पीडाना वश्यथी वि षयवडे आंधला थयेला में म्हारु पोतानु जे कुकृत्य हतु ते सर्व

आपनो आगल लज्याथी कह्युं छे. वधारे शुं कहुं? कारण आ
पज सर्व जाणो छो. ॥ ११ ॥

ध्वस्तोऽन्यमंत्रैःपरमेष्ठिमंत्रं, कुशास्त्रवाक्यैर्निहितागमोक्तिः
कर्त्तुंवृथाकर्मकुदेवसंगात्, अवांछिहिनाथमतिभ्रमोमे १२

शब्दार्थ—में मारणादि बीजा मंत्रोथी परमेष्ठि मंत्रनो नाश
कर्यो, कुशास्त्र वचनोथी आगम वचननो नाश कर्यो अने कु
देवना संगथी वृथा कर्म करवानी इच्छा करी. हे नाथ! आ सर्व
मने मतिभ्रम थयो छे. ॥ १२ ॥

विमुच्यदृक्लक्ष्यगतंभवंतं, ध्यातामयामूढधियाहृदंतः ॥
कटाक्षवक्षोजगभीरनाभी, कटीतटीयःसुदृशांविलासाः॥

शब्दार्थ—हे प्रभो! नेत्रनी सन्मुख रहेला तमने त्यजी दइ
मूढ बुद्धिवाला में स्त्रीयोनां कटाक्ष, स्तन, गंभीर नाभी, केडना
भाग अने विलासोनुं हृदयमां ध्यान कर्युं छे. ॥ १३ ॥

लोलेक्षणावक्त्रनिरीक्षणेन, योमानसोरागलवोविलग्नः ॥
नशुद्धसिद्धांतपयोधिमध्ये, धौतोप्यगात्तारककारणंकिं १४

शब्दार्थ—हे तारक! स्त्रीयोनां मुखने जोवाथी जे म्हारां
मनने विषे थोडो रंग लाग्यो छे, ते रंगने में शुद्ध सिद्धांत समुद्र
मां धोइ नांख्यो तो पण गयो नहि, तेनुं शुं कारण? ॥ १४ ॥

अंगंनचंगंनगणोगुणानां, ननिर्मलःकोपिकलाविलास॥
स्फुरत्प्रभानप्रभुताचकापि,तथाप्यहंकारकदर्थितोहम् १५

शब्दार्थ—म्हारुं अंग सारुं नथी, म्हारामां कोइ गुणसमूह
नथी, कोइ निर्मल कलाविलास नथी, तेम देदीप्यमान कांति अ
थवा कोइ पण प्रभुता नथी, तो पण हुं अहंकारथी कद
र्थना पाम्यो छुं. ॥ १५ ॥

आयुर्गलत्याशुनपापबुद्धि., गतवयोनोविषयाभिलाषः ॥
यत्नश्चभैषज्यविधौनधर्मे, स्वामिन्महामोहविडंबनामे १६

शब्दार्थ—हे स्वामिन्! हमेशा आयुष्य गलतु जाय छे, पण पाप बुद्धि गली जती नथी, बाल्यादि अवस्था गइ, पण विषयनो अभिलाप गयो नहि, वली औषधविधिमा यत्न कर्यो, पण धर्ममा यत्न कर्यो नहि खरेखर आ मने म्होटी मोह विटंबना लागी छे १६

नात्मानपुण्यनभवोनपापं, मयाविटानाकटुगीरपीयं ॥
आधारिकर्णेत्वयिकेवलार्के, परिस्फुटेसत्यपिदेवधिग्मा॥

शब्दार्थ—हे देव! केवल ज्ञाने करीने सूर्यरूप आप प्रगट छता में, 'आत्मा नथी, पुण्य नथी, भव नथी, पाप नथी' आवी नास्तिकोनी कडवी वाणीने पान करी तथा कानमा धारण करी, तेथी मने धिक्कार छे ॥ १७ ॥

न देवपूजा न च पात्रपूजा, न श्राद्धधर्मश्च न साधुधर्म ॥
लब्ध्वापिमानुष्यमिदसमस्त,कृतं मयारण्यविलापतुल्यं॥

शब्दार्थ—मे मनुष्य जन्म पामीने देव पूजा न करी, पात्र पूजा न करी, श्रावक धर्म न पाल्यो तेमज साधुधर्म पण न पाल्यो, तेथी में ए सघलो मनुष्य जन्म अरण्यमा विलाप करवा तुल्य कर्यो छे अर्थात् फोगट गुमावी नाख्यो छे ॥१८॥

चक्रेमयासत्स्वपिकामधेनु., कल्पद्रुचिंतामणिषुस्पृहार्त्ति ॥
नजैनधर्मेस्फुटशर्मदेपि, जिनेशमेपश्यविमूढभाव ॥१९॥

शब्दार्थ—हे जिनेश्वर! मे असत्य एवी कामधेनु, कल्प वृक्ष अने चिंतामणि रत्न विगेरे वस्तुमा स्पृहा करी, परतु प्रगट सुख आपनारा जिन धर्मने विषे स्पृहा करी नहि ए म्हारा विशेष मूढ भावने जूओ ॥ १९ ॥

सङ्गोगलीलानचरोगकीला, धनागमोनोनिधनागमश्च ॥
दारानकारानरकस्यचित्ते, विचिंतिनित्यंमयकाधमेन २०

शब्दार्थ—में अधम चित्तमां नित्य शब्दादि सारा जोगनी लीलानो विचार कर्यो पण तेथी थता रोगरूप खीलनो विचार कर्यो नहि; धन मेलववानो विचार कर्यो, पण मरणनो विचार कर्यो नहि; स्त्रीयोनो विचार कर्यो, पण नरकनी बेडीनो विचार कर्यो नहि. ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोरहृदिसाधुवृत्तात्, परोपकाराञ्चयशोऽर्जितंच॥
कृतंनतीर्थोद्धरणादिकृत्यं, मयामुधाहारितमेवजन्म २१

शब्दार्थ—म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि तेम में परोपकार माटे यश पण मेलव्यो नहि. वली तीर्थ उद्धारादि कार्य पण कर्युं नहि, तेथी में खरेखर म्हारो जन्म फोगट गुमावी नाख्यो. ॥ २१ ॥

वैराग्यरंगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शांतिः ॥
नाध्यात्मलेशोममकोपिदेव, तार्यःकथंकारमयंजवाब्धिः॥

शब्दार्थ—मने गुरुए केहेलां वचनमां वैराग्यरंग न थयो, दुर्जनोनां वचनमां शांति पण न थइ. वली मने कोइ पण अध्यात्म लेश प्रगट्यो नहि; तेथी हे देव! म्हाराथी आ संसार समुद्र शी रीते तराय ॥ २२ ॥

पूर्वेजवेकारिमयानपुण्यं, आगामिजन्मन्यपिनोकरिष्ये॥
यदीदृशोहंममतेननष्टा, नूतोद्भवद्भाविजवत्रयीशः ॥२३॥

शब्दार्थ—में पूर्वजवमां पुण्य कर्युं नथी, आवता जवने विषे पण करीश नहि के, जेथी हुं आवो दुःखी रह्योछुं;माटे हे इश म्हारा भूत, जविष्य अने वर्त्तमान कालना त्रणे जन्म वृथा नाश पाम्या.

किवामुधाहंवहुधासुधाभुक्, पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप–निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शव्दार्थ–हे अमृतभोजी ! हु तमारी आगल फोगट म्हारु चरित्र वधारे शु कहु ? कारण के, हे पूज्य ! तमे त्रण जगत्ना स्वरूपने निरुपण करानारा छो, तो पछी आ म्हारु कहेवु कोण मात्र छे ॥ २४ ॥

दीनोद्धारधुरधरस्त्वदपरो नास्ते मदन्य· कृपा–
पात्र नात्र जने जिनेश्वर तथाप्येता न याचे श्रीयम् ॥
कित्वर्हन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्नं शिवः,
श्रीरत्नाकरमंगलैकनिलयश्रेयस्कर प्रार्थये ॥२५॥

शव्दार्थ–हे जिनेश्वर तमारा विना बीजो कोइ दीन माणसोनो उद्धार करवाने समर्थ नथी तेमज लोकमा म्हारा विना बीजो कोइ दया करवा योग्य पात्र नथी, तो पण हु ते लक्ष्मीने मागतो नथी, परतु हे अरिहंत ! हे मोक्षलक्ष्मीना समुद्र ! हे मगलना एक स्थान हु फक्त कल्याणकारी एवा अने मोक्षनु हेतु एवा उत्तम बोधीबीजरूप रत्ननी याचना करु छु २५

॥ इति रत्नाकर पच्चीशी ॥

॥ अथ समाधि शतक ॥

येनात्माबुध्यतात्मैव, परत्वेनैव चापरम् ॥
अक्षयानंतबोधाय, तस्मै सिद्धात्मने नमः ॥१॥

शब्दार्थ—जेमणे आत्माने आत्मारूपे जाण्यो छे अने आत्माना भेद पणाए करीने शरीरने जाण्युं छे ते अक्षय अने अनंत बोधवाला सिद्ध भगवानने नमस्कार थाओ. ॥ १ ॥

जयंति यस्यावदतोऽपि भारती-
विभूतयस्तीर्थकृतोऽप्यनीहितुः ॥
शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे,
जिनाय तस्मै सकलात्मने नमः ॥ २ ॥

शब्दार्थ—तीर्थंकर छता पण वांछा रहित अने ताल्वादिकथी अक्षरोने नहि उच्चारता एवाय पण जे प्रभुनी वाणीनी संपत्तियो (अथवा वाणी अने छत्र चामरादि संपत्तियो) जयवंती वर्ते छे. ते मोक्ष पामेला, ऋष्यादिद्वारा लोकोनो उद्धार करनारा, उत्तम ज्ञानवाला, केवल ज्ञानथी सर्व लोकना व्यापक एवा, अनेक प्रकारनां भवदुःखने आपनारां कर्मने जीतनारा, तेमज आत्मरूपे रहेला ते प्रभुने नमस्कार थाओ ॥ २ ॥

श्रुतेन लिंगेन यथात्मशक्ति,
समाहितांतःकरणेन सम्यक्
समीक्ष्य कैवल्यसुखस्पृहाणां,
विविक्तमात्मानमथाभिधास्ये ॥ ३ ॥

शब्दार्थ—हुं म्हारी शक्ति प्रमाणे शास्त्रथी, हेतुथी अने निश्चल एवा अंतःकरणथी उत्तमरीते अनुभव करीने पछी सर्व क

र्मना रहित पणाने विषे (मोक्षने विषे) सुखनी इछा करनारा तेनुं कर्ममलरहित जीवस्वरूप कहीश ॥ ३ ॥

वहिरंत परश्चेति. त्रिधात्मा सर्वदेहिषु ॥
उपेयात्तत्र परमं, मध्योपायाद्वहिस्त्यजेत् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–सर्वे प्राणीयोमा वहिरात्मा, अतरात्मा अने पर मात्मा एम त्रण प्रकारना आत्मा छे तेमा मध्य अंतरात्माना उपायथी परमात्माने पामवु तथा वहिरात्माने त्यजी देवो ॥४॥

वहिरात्मा शरीरादौ, जातात्मभ्रांतिरांतरः ॥
चित्तदोषात्मविभ्रांतिः परमात्मातिनिर्मलः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–शरीर, वाणी, मन इत्यादिकने विषे आत्मा एवी जेनी भ्राति थाय ते वहिरात्मा जाणवो चित्त, दोष अने आत्मा तेमने विषे जेनी भ्राति नाश पामे अर्थात् चित्तने चित्तपणाथी, दोषो ने दोषपणाथी अने आत्माने आत्मापणाथी जाणे ते अतरा त्मा जाणवो अने जेना सर्व कर्ममल क्षय थइ गया होय ते परमात्मा जाणवो ॥ ५ ॥

निर्म्मलः केवलः शुद्धो, विविक्तः प्रभुरव्ययः ॥
परमेष्टी परात्मेति, परमात्मेश्वरो जिन ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–कर्मना मलरहित, शरीरादि सबध रहित, द्रव्य भाव कर्मना अभावथी अत्यत शुद्ध, शरीर अने कर्मथी न स्पर्श थयेलो, इन्द्रादिकनो स्वामी, नहि चवे तेवो, इन्द्रादि देवोने वादवा योग्य पदने विषे रहेलो, ससारी जीवोथी उत्कृष्ट, निरतर उत्तम ऐश्वर्ययुक्त अने सर्व कर्मने उखेडी नाखनारो जे होय ते परमात्मा जाणवो ॥ ६ ॥

वहिरात्मेन्द्रियद्वारै–रात्मज्ञानपराङ्मुख ॥
स्फुरितस्वात्मनो देहमात्मत्वेनाध्यवस्यति ॥७॥

शब्दार्थ—इंद्रिय द्वारे करीने ब्हारना अर्थने ग्रहण करतो बहिरात्मा आत्मज्ञानथी अवला मुखवालो होय छे; तेथी ते बहिरात्मा प्रगट पोताना देहने आत्मारूपज जाणे छे. ॥ ७ ॥

नरदेहस्थमात्मानमविद्वान्मन्यते नरम् ॥
तिर्यंचं तिर्यगङ्गस्थं, सुराङ्गस्थं सुरं तथा ॥८॥

शब्दार्थ—बहिरात्मा मनुष्य देहमां रहेला आत्माने मनुष्य, तिर्यंचना शरीरमां रहेला आत्माने तिर्यंच, तेमज देवतानां शरीरमां रहेला आत्माने देवता माने छे. ॥ ८ ॥

नारकं नारकांगस्थं, न स्वयं तत्वतस्तथा ॥
अनंतानंतधीशक्तिः, स्वसंवेद्योऽचलस्थितिः ॥९॥

शब्दार्थ—वली नारकीना शरीरमां रहेला आत्माने नारकी माने छे, परंतु तत्त्वथी तेवी रीते पोताने जाणतो नथी. परमात्मा पोते तो अनंत अनंत बुद्धि अने शक्तिवालो, पोतानेज जाणवा योग्य अने अचल स्थितिवालो छे. ॥ ९ ॥

स्वदेहसदृशं दृष्ट्वा, परदेहमचेतनम् ॥
परात्माधिष्ठितं मूढः, परत्वेनाध्यवस्यति ॥१०॥

शब्दार्थ—परमात्माए कर्मना वश्यथी अंगीकार करेला अने अचेतन एवा परदेहने पोताना देह सरखा जोइ मूढ एवो बहिरात्मा ते परदेहने परमात्मपणाए अंगीकार करे छे ॥ १० ॥

स्वपराध्यवसायेन, देहेष्वविदितात्मनाम् ॥
वर्त्तते विभ्रमः पुंसां, पुत्रभार्यादिगोचरः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ—आत्मस्वरूप न जाणनारा पुरुषोने देहने विषे पोतानो अने परना अध्यवसायथी पुत्र स्त्री विगेरेने गोचर एवो विभ्रम थाय छे. अर्थात् अनात्मारूप अने अपकार करनारा

एवाय पण स्त्री पुत्रादिकने अने धन धान्यादिकने पोतानो उप कार करनारा जाणे छे वली तेमना लाभने विषे संतोष अने अलाभने विषे परिताप तथा आत्मवध पण करे छे ॥ ११ ॥

अविद्यासंज्ञितस्तस्मात्संस्कारो जायते दृढः ॥
येन लोकोऽङ्गमेव स्वं, पुनरप्यभिमन्यते ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–ते विभ्रम थकी अविद्या नामवालो अविचल संस्कार थाय छे के, जे संस्कारे करीने अविवेकी लोक जन्मांतरने विषे पण पोताना शरीरनेज आत्मा माने छे. ॥ १२ ॥

देहे स्वबुद्धिरात्मानं, युनक्त्येतेन निश्चयात् ॥
स्वात्मन्येवात्मधीस्तस्माद्वियोजयति देहिनम् ॥१३॥

शब्दार्थ–शरीरने विषे आत्मबुद्धि करनारो बहिरात्मा परमार्थथी ए देहे करीने आत्माने जोडे छे अर्थात् दीर्घ संसारी करे छे अने पोताना आत्माने विषे आत्मबुद्धि करनारो अंतरात्मा ते शरीरादिथी आत्माने वियोग करावे छे. अर्थात् मुक्ति पमाडे छे

देहेष्वात्मधिया जाताः, पुत्रभार्यादिकल्पनाः ॥
संपत्तिमात्मनस्ताभिर्मन्यते हा हतं जगत् ॥ १४ ॥

शब्दार्थ–देहने विषे आत्मबुद्धि करवाथी पुत्र भार्यादि कल्पना थइ छे अने ते अनात्मिय कल्पनाथी पुत्र भार्यादिने आत्मानी संपत्ति माने छे हाय हाय ! एज कारणे पोताना स्वरूपना ज्ञानथी भ्रष्ट थयेलु जगत् नाश पाम्यु छे अर्थात् बहिरात्मा रूप बन्यु छे ॥ १४ ॥

मूलं संसारदुःखस्य, देह एवात्मधीस्ततः ॥
त्यक्त्वैनां प्रविशेदन्तर्बहिरव्यावृत्तेन्द्रियः ॥ १५ ॥

शब्दार्थ–शरीर एज आत्मा एवी जे बुद्धि तेज संसारना

दुःखनुं कारण छे, माटे ते शरीर एज आत्मा एवी बुद्धिने त्यजी दइ बहार अप्रवृत्त छे इंद्रियो जेनी एवो पुरुष अंतरमां प्रवेश करे छे. अर्थात् आत्माने विषे आत्मबुद्धि करे छे. ॥ १५ ॥

मत्तश्च्युत्वेन्द्रियद्वारैः पतितो विषयेष्वहम् ॥
तान्प्रपद्याहमिति मां, पुरा वेद न तत्त्वतः ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—पोताथी (आत्मस्वरूपथी) चवीने हुं इंद्रियद्वारे करीने विषयने विषे पडेलो छुं. अर्थात् प्रवृत्त थयेलो छुं. माटे ते विषयोने (आ मने उपकार करनारा छे, एवा विचारथी) अंगीकार करीने अनादि कालथी हुं मने पोताने तत्वथी जाणतो नथी. ॥ १६ ॥

एवं त्यक्त्वा बहिर्वाचं, त्यजेदंतरशेषतः ॥
एष योगः समासेन, प्रदीपः परमात्मनः ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे कहेला न्यायथी पुत्र, स्त्री, धन धान्यादि लक्षणवाली बहिर्वाणीने त्यजी दइने पछी (हुं कर्त्ता छुं, सुखी छुं, दुखी छुं, इत्यादि लक्षणवाली) अंतर्वाणीने सर्व प्रकारे त्यजी देवी. ए प्रमाणे बहिरात्माने अने अंतरात्माने त्यजी देवारूप योग संक्षेपथी परमात्मानां स्वरूपने प्रकाश करनारो छे.

यन्मया दृश्यते रूपं, तन्न जानाति सर्वथा ॥
जानन्न दृश्यते रूपं, ततः केन ब्रवीम्यहम् ॥ १८ ॥

शब्दार्थ—हुं जे स्वरूपने जोवुं छुं, तेने हुं सर्व प्रकारे जाणतो नथी अने जेने हुं जाणुं छुं ते स्वरूप देखातुं नथी तो पछी हुं कोनी साथे बोलुं ? ॥ १८ ॥

यत्परैः प्रतिपाद्योऽहं, यत्परान् प्रतिपादये ॥
उन्मत्तचेष्टितं तन्मे, यदहं निर्विकल्पकः ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—उपाध्यायादिकथी जे हु शिक्षण कराउं छुं अथवा हु शिष्यादिकने जे शिक्षण करुछु ते सर्व म्हारुं उन्मत्त चेष्टित छे कारणके, हुं निर्विकल्प छु ॥ १९ ॥

यदग्राह्य न गृह्णाति, गृहीत नापि मुचति ॥

जानाति सर्वथा सर्व, तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥ २० ॥

शब्दार्थ—जे शुद्ध एवु आत्मस्वरूप, नहि गृहण करवा योग्य एवा कर्मना उदय निमित्त क्रोधादिस्वरूपने गृहणतुं नथी अने गृहण करेला अनंतज्ञानादि स्वरूपने त्यजी देतु नथी वली द्रव्य पर्यायादिके करीने सर्व चेतन तथा अचेतनने जाणे छे, ते हु पोतायीज जाणवा योग्य आत्मा छु ॥ २० ॥

उत्पन्नपुरुषभ्रातेः, स्थाणौ यद्वद्विचेष्टितम् ॥

तद्वन्मे चेष्ठित पूर्व, देहादिष्वात्मविभ्रमात् ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—थाम्भलामा उत्पन्न थयेली पुरुष भ्रातिने लीधे जेवी रीते विविध उपकारादि चेष्टित कराय छे तेवीज रीते आ कहेला आत्मस्वरूपनु ज्ञान थवा पूर्वे देहादिकने विषे आत्मबुद्धिना भ्रमथी म्हारु चेष्टित हतु ॥ २१ ॥

यथासौ चेष्टते स्थाणौ, निवृत्ते पुरुषग्रहे ॥

तथा चेष्टोऽस्मि देहादौ, विनिवृत्तात्मविभ्रमः ॥२२॥

शब्दार्थ—जेवी रीते (थाम्भलामा उत्पन्न थयेली पुरुष भ्रातिवालो) पुरुष, पुरुषारोप निवृत पामेला जड पदार्थमा उपकार तथा अपकार न करवारूप जे चेष्टा करे छे तेवी रीते देहादिकमा निवृत्त पामी छे आत्मभ्राति जेने एवी चेष्टा वालो हु थइश ॥ २२ ॥

येनात्मनानुभूयेऽह—मात्मनैवात्मनाऽत्मनि ॥

सोऽहं न तन्न सा नासौ, नैको न द्वौ न वा बहुः २३

शब्दार्थ—जे चैतन्यस्वरूप आत्माए करीने हुं पोतानां स्वरूपने विषे पोताने जाणवाना स्वभाववाला आत्मावडेज अनुभव करुं छुं के, ते हुं पुरुष, स्त्री के नपुंसक नथी. वली एक, बे अथवा बहु नथी. ॥ २३ ॥

यदभावे सुषुप्तोऽहं, यद्भावे व्युत्थितः पुनः ॥
अतींद्रियमनिर्देश्यं, तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥ २४ ॥

शब्दार्थ—जे पोताने जाणवा योग्य शुद्ध स्वरूपने न पामवारूप गाढ निद्राथी सूतेलो अने वली जे पोताने जाणवा योग्य शुद्ध स्वरूपने पामवारूप जागी उठेलो छे ते हुं इंद्रियोने अग्राह्य, वाणीने अगोचर अने पोताथीज जाणवा योग्य छुं ॥ २४ ॥

क्षीयंतेऽत्रैव रागाद्या—स्तत्वतो मां प्रपश्यतः ॥
बोधात्मानं ततःकश्चिन्न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥ २५ ॥

शब्दार्थ—आज जन्मने विषे ज्ञान स्वरूप एवा मने तत्ववडे जोवाथी रागादिक शत्रुओ क्षय पामे छे. पछी मने कोइ शत्रु नथी अने मित्र पण नथी. ॥२५॥

मामपश्यन्नयं लोको, न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥
मां प्रपश्यन्नयं लोको, न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥२६॥

शब्दार्थ—मने न जोई शकतो एवो आ लोक म्हारो शत्रु अने मित्र नथी तेमज मने जोइ शकतो एवो पण आ लोक म्हारो शत्रु अने मित्र नथी ॥२६॥

त्यक्त्वैवं बहिरात्मानमंतरात्मव्यवस्थितः ॥
भावयेत्परमात्मानं, सर्वसंकल्पवर्जितः ॥ २७ ॥

शब्दार्थ—ए प्रमाणे अंतरात्माने विषे रहेलो पुरुष बहिरात्माने त्यजी सर्व प्रकारना संकल्प रहित थया छतो परमात्माने भावे.

सोऽहमित्यात्तसंस्कारस्तस्मिन्भावनया पुनः ॥
तत्रैव दृढसंस्काराल्लभते ह्यात्मनः स्थितिम् ॥२८॥

शब्दार्थ–वली ते परमात्माने विषे भावनावडे ग्रहण करी छे वासना जेणे एवो ते अनंतज्ञानस्वरूप परमात्मारूप हु, ते परमात्माने विषे दृढ संस्कारथी (अविचल वासनाथी) आत्मानी स्थितिने पामु छु ॥ २८ ॥

मूढात्मा यत्र विश्वस्तस्ततो नान्यद्भयास्पदम् ॥
यतो भीतस्ततो नान्यदभयस्थानमात्मन ॥ २९ ॥

शब्दार्थ–बहिरात्मा जे पुत्र स्त्री विगेरेने विषे (आ म्हारा छे अने हुं तेमनो छु) एवो विश्वास पाम्यो छे, तेथी तेने बीजो भय नथी अर्थात् शरीरने लीधेज भय रहेलो छे वली जे परमात्म स्वरूपने जाणवाथी भय पाम्यो छे, तेथी बीजु आत्माने अभय स्थान नथी ॥ २९ ॥

सर्वेंद्रियाणि संयम्य, स्तिमितेनांतरात्मना ॥
यत्क्षणं पश्यतो भाति, तत्तत्त्व परमात्मन ॥ ३० ॥

शब्दार्थ–सर्वे इंद्रियोने नियममा राखीने क्षण मात्र अनुभव करवाथी निश्चल एवा मन वडे जे स्वरूप देखाय छे, तेज परमात्मानुं स्वरूप छे ॥ ३० ॥

य परात्मा स एवाहं, योऽहं स परमस्ततः ॥
अहमेव मयोपास्यो, नान्य कश्चिदिति स्थिति ३१

शब्दार्थ–जे परमात्मा तेज हुं अने जे हु ते परमात्मा तेथी हुज म्हारे पोताने उपासना करवा योग्य छु बीजो कोइ उपासना करवा योग्य नथी, ए स्थिति छे ॥ ३१ ॥

प्राच्याव्य विषयेभ्योऽहं, मा मयैव मयि स्थितम् ॥
बोधात्मानं प्रपन्नोऽस्मि, परमानंदनिर्वृत्तम् ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ—आत्मस्वरूपवडे करीने विषयथी निवृत्ति पामीने आत्मस्वरूपने विषे रहेला म्हारा ज्ञानस्वरूप अने उत्तम आनंदथी सुखी एवा आत्माने हुं प्राप्त थयेलो छुं. ॥ ३२ ॥

यो न वेत्ति परं देहा–देवमात्मानमव्ययम् ॥
लभते न स निर्वाणं, तप्त्वापि परमं तपः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ—जे पुरुष, प्राप्त थयेला देहथी पर अने अव्यय एवा आत्माने कहेली रीते नथी जाणतो, ते उत्कृष्ट एवां तपने करतो छतो मोक्षपद पामतो नथी. ॥ ३३ ॥

आत्मदेहांतरज्ञान–जनिताह्लादनिर्वृतः ॥
तपसा दुष्कृतं घोरं, भुंजानोऽपि न खिद्यते ॥३४॥

शब्दार्थ—आत्मा अने देहना भेदज्ञानथी उत्पन्न थयेला हर्षे करीने सुखी थयो छतो बार प्रकारनां तपथी घोर पापने भोगवतो एवो पण माणस खेद पामतो नथी. ॥ ३४ ॥

रागद्वेषादिकल्लोलैरलोलं यन्मनोजलम् ॥
स पश्यात्यात्मनस्तत्त्वं, स तत्त्वं नेतरो जनः ॥३५॥

शब्दार्थ—रागद्वेषादि कल्लोलथी जेनुं मन रूप जल मोलाइ गयुं नथी, ते आत्मतत्त्वने जूए छे. वली ते जोनारो पोतेज परमात्मरूप छे. बीजो परमात्म रूप नथी. ॥ ३५ ॥

अविक्षिप्तं मनस्तत्त्वं, विक्षिप्तं भ्रांतिरात्मनः ॥
धारयेतदविक्षिप्तं, विक्षिप्तं नाश्रयेत्ततः ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ—रागादिकथी अपरिणामित एवुं आत्मानुं वास्तविक स्वरूप छे अने तेनाथी जे उलटुं ते आत्मानी भ्रांति आत्मरूप रहित छे. ते कारण माटे रागादिकथी अपरिणामित एवा मनने धारण करवुं, परंतु रागादिकना विकारवाला मननो आश्रय करवो नहि. ॥ ३६ ॥

अविद्याभ्याससंस्कारैरवशं क्षिप्यते मनः ॥
तदेव ज्ञानसंस्कारैः, स्वतस्तत्त्वेऽवतिष्ठते ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ—शरीरने विषेज पवित्र अने स्थिर एवु आत्मा तथा आत्मिय विगेरे जे ज्ञान ते अविद्या, ते अविद्याना अभ्यासथी उत्पन्न थयेली वासनाये करीने अवश (विषयने अने इंद्रियोने आधिन तथा आत्माने आधिन नहि) एवुं मन थाय छे तेज मन ज्ञानसंस्कारे करीने आत्मस्वरूपने विषे रहे छे ॥ ३७ ॥

अपमानादयस्तस्य, विक्षेपो यस्य चेतसः ॥
नापमानादयस्तस्य, न क्षेपो यस्य चेतसः ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ—जेना चित्तने रागादि परिणाम छे तेने अपमानादि होय छे अने जेना चित्तने रागादि परिणाम नथी तेने अपमानादि पण नथी ॥ ३८ ॥

यदा मोहात्प्रजायेते, रागद्वेषौ तपस्विनः ॥
तदेव भावयेत् स्वस्थमात्मानं शाम्यतः क्षणात् ३९

शब्दार्थ—ज्यारे तपस्विने मोहनीय कर्मना उदयथी रागद्वेष उत्पन्न थाय छे त्यारे तेज क्षणमात्रमां रागद्वेषने शांति पमाडता छता पोताना स्वरूपमा रहेला आत्माने भावे छे ॥३९॥

यत्र काये मुनेः प्रेम, ततः प्रच्याव्य देहिनम् ॥
बुद्ध्या तदुत्तमे काये, योजयेत्प्रेम नश्यति ॥ ४० ॥

शब्दार्थ—मुनिने जे पोताना अथवा परना शरीरने विषे स्नेह थाय छे ते शरीरथी बुद्धिवडे आत्माने पाछो फेरवीने तेथी पण उत्तम एवा चिदानंदमय आत्म स्वरूपने विषे जोडे छे के, जेथी काया उपर स्नेह थतो नथी ॥४०॥

आत्मविभ्रमजं दुःख—मात्मज्ञानात्प्रशाम्यति ॥
नायतास्तत्र निर्वांति, कृत्वापि परमं तपः ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ–शरीरादिकमां आत्मा एवा विभ्रमथी थयेलुं दुःख आत्मज्ञानथी नाश पामे छे. वली आत्मस्वरूपमां असावधान एवा पुरुषो उत्कृष्ट एवुं तप करीने पण मोक्ष पामता नथी. ४१

शुभ्रं शरीरं दिव्यांश्च, विषयानभिवांछति ॥
उत्पन्नात्ममतिर्देहे, तत्त्वज्ञानी ततश्च्युतिम् ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ–शरीरने विषे उत्पन्न थयेलो आत्म बुद्धिवालो अर्थात् बहिरात्मा पुरुष शुभ्र एवा शरीरने अने दिव्य एवा विषयोने इच्छे छे. तथा तत्त्वज्ञानी पुरुष शरीरनी निवृत्तिने इच्छे छे.

परत्राहंमतिः स्वस्माच्च्युतो बध्नात्यसंशयम् ॥
स्वस्मिन्नहंमतिश्च्युत्वा, परस्मान्मुच्यते बुधः ॥४३॥

शब्दार्थ–शरीरने विषे आत्मबुद्धिवालो बहिरात्मा आत्मस्वरूपथी भ्रष्ट थइने खरेखर बंधन पामे छे अने आत्मस्वरूपने विषे आत्मबुद्धिवालो अंतरात्मा शरीरादिकथी जूदो थइने मुक्ति पामे छे. ॥ ४३ ॥

दृश्यमानमिदं मूढस्त्रिलिंगमवबुध्यते ॥
इदमित्यवबुद्धस्तु, निष्पन्नं शब्दवर्जितम् ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ–बहिरात्मा आ देखाता पुरुष, स्त्री अने नपुंसक रूप त्रण लिंगने त्रिलिंगरूप माने छे अने अंतरात्मा अनादिसिद्ध अने विकल्पादिके वर्जित एवा आत्मतत्त्वनेज माने छे. ॥४४॥

जानन्नप्यात्मनस्तत्त्वं, विविक्तं भावयन्नपि ॥
पूर्वविभ्रमसंस्काराद्भ्रांतिं भूयोऽपि गच्छति ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ–अंतरात्मा आत्मतत्त्वने जाणतो छतो तथा शरीरादिकथी जूदुं मानतो छतो पण पूर्व विभ्रमना संस्कारथी फरीने पण भ्रांति पामे छे. ॥४५॥

अचेतनमिद दृश्य–मदृश्य चेतन तत ॥
क रुष्यामि क तुष्यामि, मध्यस्थोऽहं जवाम्यतः ४६

शब्दार्थ–आ देखातुं एवु शरीरादि जड छे अने न देखातुं एवु आत्मस्वरूप चैतन्यरूप छे, माटे हु कोना उपर क्रोध अने कोना उपर संतोष करु तेथी हवे हुं मध्यस्थरूप थाउ छु ४६

त्यागादाने वहिर्मूढः, करोत्यध्यात्ममात्मवित् ॥
नातर्वहिरुपादानं, न त्यागो निष्टितात्मन. ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ–वहिरात्मा बाह्यवस्तुने विषे त्याग अने अभिलाप करे छे अंतरात्मा आत्मस्वरूपने विषे त्याग अने अभिलाप करे छे, परंतु कृत कृत्य एवा परमात्माने तो अतरात्माने विषे अभिलाप अने वहिवस्तुने विषे त्याग एमानुं काइ नथी ॥ ४७ ॥

युंजीत मनसात्मान, वाक्कायाभ्या वियोजयेत् ॥
मनसा व्यवहारं तु, त्यजेद्वाक्काययोजितम् ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ–मानसिक ज्ञानथी आत्मानुं ध्यान करवु, पण वाणी अने कायाथी आत्माने जूदो करवो वली मननी साथे वाणी अने कायाथी जोडाएला व्यवहारने मने करीने त्यजी देवो

जगद्देहात्मदृष्टीना, विश्वास्य रम्यमेव च ॥
स्वात्मन्येवात्मदृष्टीना, क विश्वास क वा रति ४९

शब्दार्थ–शरीरने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् वहिरात्माने जगत् विश्वास करवा योग्य अने मनोहर लागे छे, परतु आत्माने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् अंतरात्माने क्या विश्वास अने क्या रति होय छे? अर्थात् तेने पुत्रादिकने विषे विश्वास अथवा प्रीति होती नथी. ॥४९॥

आत्मज्ञानात्परं कार्यं, न बुधो धारयेच्चिरम् ॥
कुर्यादर्थवशात्किंचिद्वाक्कायाभ्यामतत्पर ॥ ५० ॥

शब्दार्थ—आत्मज्ञान विना बीजुं कार्य बहु वखत मनमां धारवुं नहि अने तेवुं भोजन व्याख्यानादिक कार्य करवुं पडे तो ते आसक्ति रहित थइने फक्त पोताना अने परना उपकारना वशथीज करवुं. ॥ ५० ॥

यत्पश्यामीन्द्रियैस्तन्मे, नास्ति यन्नियतेन्द्रियः ॥
अंतः पश्यामि सानंदं, तदस्य ज्योतिरुत्तमम् ॥५१॥

शब्दार्थ—हुं इंद्रियोवडे जे शरीरादिक जोउं छुं, ते म्हारुं रूप नथी, परंतु इंद्रियोने स्वाधिन करीने हुं म्हारी अंदर उत्तम सुखरूप अने इंद्रियोने अगोचर एवुं जे ज्ञान जोउं छुं, ते म्हारुं स्वरूप छे. ॥५१॥

सुखमारब्धयोगस्य, बहिर्दुःखमथात्मनि ॥
बहिरेवासुखं सौख्य-मध्यात्मं भावितात्मनः ॥५२॥

शब्दार्थ—आत्मस्वरूप जाणवामां उद्यमवंत थयेलाने बाह्य विषयमां सुख थाय छे तथा आत्मविषयमां दुःख थाय छे अने यथार्थ आत्मस्वरूप जाणेलाने बाह्यविषयमां दुःख तथा आत्मविषयमां सुख थाय छे. ॥५२॥

तद्ब्रूयात्तत्परान्पृच्छे—त्तदिच्छेत्तत्परो भवेत् ॥
येनाविद्यामयं रूपं, त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत् ॥५३॥

शब्दार्थ—ते आत्मस्वरूप पोते कहेवुं, बीजाने पूछवुं, ते आत्मस्वरूपनेज इच्छवुं अने तेमां तत्पर थवुं के, जेथी बहिरात्मरूप त्यजी दइ आत्मस्वरूपने पमाय. ॥५३॥

शरीरे वाचि चात्मानं, संधत्ते वाक्शरीरयोः ॥
भ्रांतोऽभ्रांतः पुनस्तत्त्वं, पृथगेषां निबुध्यते ॥५४॥

शब्दार्थ—वाणी अने शरीरने विषे भ्रांति पामेलो बहिरा

त्मा पोताने शरीरमा अने वाणीमा आरोपण करे छे. वली यथार्थ ते स्वरूपने जाणनारो अतरात्मा वाणीना, शरीरना अने आत्मा-ना स्वरूपने जूदा जूदा जाणे छे. ॥ ५४ ॥

न तदस्तीन्द्रियार्थेषु, यत्क्षेमंकरमात्मनः ॥
तथापि रमते बाल-स्तत्रैवाज्ञानभावनात् ॥५५॥

शब्दार्थ—इन्द्रियार्थने विषे तेवु काइ नथी के, जे आत्मानु कुशल करनार थाय तो पण अज्ञानी बहिरात्मा ते इन्द्रियोना अर्थने विषे मिथ्यात्वना सस्कारथी रमे छे ॥ ५५ ॥

चिर प्रसुप्तास्तमसि, मूढात्मान. कुयोनिषु ॥
अनात्मीयात्मभूतेषु, ममाहमिति जाग्रति ॥५६॥

शब्दार्थ—अनादि मिथ्यात्व संस्कार होवाने लीधे चोराशी लाख कुयोनिमा दीर्घकालथी सूतला बहिरात्मा परमार्थथी पो-ताना सबधी नहि एवा पुत्र स्त्री विगेरेने विषे ' हु अने म्हारुं ' एम कहेता छता जागे छे ॥ ५६ ॥

पश्येन्निरतर देहमात्मनोऽनात्मचेतसा ॥
अपरात्मधियाऽन्येषामात्मतत्वे व्यवस्थित. ॥५७॥

शब्दार्थ—आत्मतत्वने विषे रहेलो अतरात्मा पोताना शरीरने अनात्मबुद्धिथी (आ आत्मा नथी एवा विचारथी) निरतर जूए छे तेमज बीजाओने आ परमात्मा नथी ए एवी बुद्धिथी जूए छे

अज्ञापित न जानति, यथा मा ज्ञापितं तथा ॥
मूढात्मानस्ततस्तेषा, वृथा मे ज्ञापनाश्रम ॥ ५८ ॥

शब्दार्थ—मूढात्मा जेम आत्मस्वरूप न समजाव्या छता नथी जाणतो तेमज समजाव्या छता पण नथी जाणतो, तेथी ते मूढात्माने म्हारे समजाववानो श्रमज फोगट छे ॥५८॥

यद्बोधयितुमिच्छामि, तन्नाहं यदहं पुनः ॥
ग्राह्यं तदपि नान्यस्य, तत्किमन्यस्य बोधये ॥५९॥

शब्दार्थ–जे विकल्पमां व्याप्त थइ रहेला आत्मस्वरूपने अथवा देहादिकने समजाववानी इच्छा करुं छुं. ते हुं पोते परमार्थथी आत्मस्वरूप नथी अने वली जे हुं चिदात्मरूप छुं ते बीजाने ग्राह्यमां आवुं तेम नथी. तो पछी हुं बीजाने शा माटे आत्म तत्वनो बोध करुं? ॥ ५९ ॥

बहिस्तुष्यति मूढात्मा, पिहितज्योतिरंतरे ॥
तुष्यत्यन्तः प्रबुद्धात्मा, बहिर्व्यावृत्तकौतुकः ॥६०॥

शब्दार्थ–अंदरना तत्त्व विषयने विषे मोहथी ढंकाइ गयेला ज्ञानवालो बहिरात्मा शरीरादि बाह्य अर्थने विषे प्रसन्न थाय छे अने शरीरादिकने विषे प्रीति रहित एवो अंतरात्मा पोतानां स्वरूपने विषे प्रसन्न थाय छे. ॥६०॥

न जानंति शरीराणि, सुखदुःखान्यबुद्धयः ॥
निग्रहानुग्रहधियं, तथाप्यत्रैव कुर्वते ॥ ६१ ॥

शब्दार्थ–शरीरो सुख दुःखने जाणतां नथी, तो पण बहिरात्मा एज शरीरादिकने विषे उपवासादि करवाथी निग्रह करवानी अने कुंडल कम्मा विगेरेथी शणगारवावडे अनुग्रह करवानी बुद्धि करे छे. ॥ ६१ ॥

स्वबुद्ध्या यावद्गृह्णीयात्, कायवाक्चेतसां त्रयम् ॥
संसारस्तावदेतेषां, भेदाभ्यासे तु निर्वृत्तिः ॥ ६२ ॥

शब्दार्थ–ज्यांसुधी शरीर, वाणी अने चित्त ए त्रणने आत्मबुद्धिथी ग्रहण करे त्यांसुधी संसार थाय छे अने ते त्रणनो भेद अभ्यास थयो एटले मुक्ति थाय छे. ॥६२॥

घने वस्त्रे यथात्मानं, न घनं मन्यते तथा ॥
घने स्वदेहेप्यात्मान न घनं मन्यते बुध ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ–ज्ञानी पुरुष जेम मजबुत वस्त्र पहेरवाथी पोताने मजबुत मानतो नथी तेम शरीर पण मजबुत होय तोपण आत्माने मजबुत मानतो नथी ॥६३॥

जीर्णे वस्त्रे यथात्मानं, न जीर्णं मन्यते तथा ॥
जीर्णे स्वदेहेप्यात्मानं, न जीर्णं मन्यते बुधः ॥६४॥

शब्दार्थ–ज्ञानीपुरुष जेम जीर्ण वस्त्र पहेरवाथी पोताने जीर्ण मानतो नथी तेम जीर्ण शरीर छता आत्माने जीर्ण मानतो नथी

नष्टे वस्त्रे यथात्मान, न नष्ठ मन्यते तथा ॥
नष्टे स्वदेहेऽप्यात्मान, न नष्टं मन्यते बुधः ॥६५॥

शब्दार्थ–ज्ञानीपुरुष जेम वस्त्र फाटी जवाथी पोताने नाश पामेलो जाणतो नथी तेम देह नाश पाम्या छता आत्माने नाश पामेलो मानतो नथी ॥ ६५ ॥

रक्ते वस्त्रे यथात्मानं, न रक्त मन्यते तथा ॥
रक्ते स्वदेहेऽप्यात्मानं, न रक्त मन्यते बुधः ॥६६॥

शब्दार्थ–ज्ञानी पुरुष जेम वस्त्र रक्त छता पोताने रक्त मानतो नथी तेम पोतानो देह रक्त छता आत्माने रक्त मानतो नथी ॥ ६६ ॥

यस्य सस्पदमाज्ञाति, निस्पंदेन सम जगत् ॥
अप्रज्ञमक्रियाज्ञोग, स काम याति नेतर ॥६७॥

शब्दार्थ–जेने चंचल एवु आ जगत् जड, तेमज पदार्थनु ज्ञान अने सुखादिकनो अनुभव न होवाने लीधे काष्ट अने पाषाण तुल्य जणाय छे, ते शांतिने पामे छे, बीजो पामतो नथी.

शरीरकंचुकेनात्मा, संवृतज्ञानविग्रहः ॥
नात्मानं बुध्यते तस्माद्भ्रमत्यतिचिरं भवे ॥ ६८ ॥

शब्दार्थ—शरीर रूप कंचवाथी ढंकाइ गयो छे ज्ञानरूपदेह जेनो एवो बहिरात्मा पोताने जाणी शकतो नथी, तेथी ते संसारमां बहु कालथी भटके छे. ॥ ६८ ॥

प्रविशद्गलतां व्यूहे, देहेऽणूनां समाकृतौ ॥
स्थितिभ्रांत्या प्रपद्यते, तमात्मानमबुद्धयः ॥६९॥

शब्दार्थ—पेसतां अने निकलतां एवा परमाणुनां समूहरूप अने समानकृतिवाला देहने विषे स्थितिनी भ्रांतिथी बहिरात्मा ते देहने आत्मा माने छे. ॥ ६९ ॥

गौरः स्थूलः कृशो वाहमित्यङ्गेनाविशेषयन् ॥
आत्मानं धारयेन्नित्यं, केवलज्ञप्तिविग्रहम् ॥७०॥

शब्दार्थ—हुं गोरो छुं जाडो छुं अथवा पातलो छुं. एम अंगनी साथे एकमेक न करतो छतो फक्त जाणपणारूप शरीरवाला आत्माने नित्य धारण करे छे. ॥ ७० ॥

मुक्तिरेकांतिकी तस्य, चित्ते यस्याचला धृतिः ॥
तस्य नैकांतिकी मुक्तिर्यस्य नास्त्यचला धृतिः॥७१॥

शब्दार्थ—जेनां चित्तमां अविचल आत्मस्वरूपनुं धारण करवापणुं छे. तेने अवश्य मुक्ति प्राप्त थाय छे अने जेनां चितमां अविचल आत्मस्वरूपनुं धारण करवा पणुं नथी तेने अवश्य मुक्ति प्राप्त थती नथी. ॥ ७१ ॥

जनेभ्यो वाक्ततः स्पंदो, मनसश्चित्रविभ्रमाः ॥
भवंति तस्मात्संसर्गं, जनैर्योगी ततस्त्यजेत् ॥७२॥

अन्य॥शब्दार्थ—माणसोना समागमथी वचन प्रवृत्ति थाय छे, व

चन प्रवृत्तिथी मननी व्यग्रता थाय छे अने तेथी नाना प्रकारना विकल्पो थाय छे. माटे योगी पुरुषोये माणसोनी साथे समागम त्यजी देवो ॥ ७२ ॥

ग्रामोऽरण्यमिति द्वेधा, निवासोऽनात्मदर्शिनाम् ॥
दृष्टात्मना निवासस्तु, विविक्तात्मैव निश्चल ॥ ७३ ॥

शब्दार्थ–आत्मस्वरूपने न पामेलाने गाम अने अरण्य एम बे प्रकारे निवास स्थान छे तथा आत्मस्वरूपने पामेलाने व्याकुलता रहित एवो शुद्ध आत्माज निवास स्थान छे ॥७३॥

देहांतरगतेर्बीज, देहेऽस्मिन्नात्मभावना ॥
बीजं विदेहनिष्पत्तेरात्मन्येवात्मभावना ॥७४॥

शब्दार्थ–आ देहने विषे आत्मभावना करवी एज बीजा भवनी प्राप्तिनु कारण छे अने आत्माने विषे आत्मभावना करवी एज मोक्ष प्राप्तिनु बीज छे ॥७४॥

नयत्यात्मानमात्मेव, जन्म निर्वाणमेववा ॥
गुरुरात्मात्मनस्तस्मान्नान्योऽस्ति परमार्थत ॥७५॥

शब्दार्थ–आत्मा आ देहादिकने विषे आत्मभावना वडयथी पोताने ससारमा भटकावे छे अने आत्माने विषे आत्मभावनाना वडयथी पोताने मोक्ष प्रत्ये पमाडे छे, माटे परमार्थथी आत्मानो गुरु तो आत्माज छे बीजो कोइ नथी. ॥७५॥

दृढात्मबुद्धिर्देहादावुत्पश्यन्नाशमात्मन ॥
मित्रादिभिर्वियोग च, बिभेति मरणाद्भृशम् ॥७६॥

शब्दार्थ–देहादिकने विषे दृढ एवी आत्मबुद्धिवालो बहिरात्मा पोताना मरणने जोतो छतो अने मित्रादिकना वियोगने जाणतो छतो मृत्युथी बहु भय पामे छे ॥७६॥

आत्मन्येवात्मधीरन्या, शरीरगतिमात्मनः ॥
मन्यते निर्भयं त्यक्त्वा, वस्त्रं वस्त्रांतरग्रहम् ॥७७॥

शब्दार्थ—एक वस्त्रने त्यजी दइ बीजा वस्त्रने ग्रहण करवा नी पेठे आत्माने विषे आत्मबुद्धिवालो अंतरात्मा जय रहितपणे शरीरनी परिणतिने (बाल्यादि अवस्थाने) पोताथी जूदो माने छे. अर्थात् शरीरनी उत्पत्ति अने नाशना अवसरे पोतानी उत्पत्ति अने नाश नथी मानतो. ॥७७॥

व्यवहारे सुषुप्तो यः, स जागर्त्यात्मगोचरे ॥
जागर्ति व्यवहारेऽस्मिन्सुषुप्तश्चात्मगोचरे ॥ ७८ ॥

शब्दार्थ—प्रवृत्ति निवृत्तिरूप व्यवहारमां जे सूतेलो (अतत्पर) छे ते आत्मविषयमां जागतो (तत्पर) छे अने जे प्रवृत्ति निवृत्ति रूप व्यवहारमां जागतो (तत्पर) छे ते आत्मविषयमां सूतेलो (अतत्पर) छे. ॥ ७८ ॥

आत्मानमंतरे दृष्ट्वा, दृष्ट्वा देहादिकं बहिः ॥
तयोरंतरविज्ञानादभ्यासादच्युतो जवेत् ॥ ७९ ॥

शब्दार्थ—आत्माने अंदर जोइ अने शरीरादिकने व्हार जोइने ते बन्नेना जेद ज्ञानना जावनाथी मुक्त थवाय छे. ॥७९॥

पूर्वं दृष्टात्मतत्त्वस्य, विज्ञात्युन्मत्तवज्जगत् ॥
स्वभ्यस्तात्मधियः पश्चात्काष्ठपाषाणरूपवत् ॥८०॥

शब्दार्थ—प्रथम आत्मतत्त्वने जोनारा अर्थात् योगारंजी पुरुषने आ जगत् उन्मत्त समान देखाय छे अने पछी आत्मतत्त्वनो सारी रीते अभ्यास करनाराने काष्ट अने पाषाण सरखुं देखाय छे.

शृण्वन्नप्यन्यतः कामं, वदन्नपि कलेवरात् ॥
आत्मानं जावयेद्भिन्नं, यावत्तावन्न मोक्षजाक् ॥८१॥

शब्दार्थ—वीजा पासेथी अत्यंत सांनळतो अने पोते वीजा ने कहेलो ठतो पण ज्यासुधी शरीरथी आत्माने जूदो नावतो नथी त्यासुधी मोक्नु पात्र थतो नथी ॥८१॥

तथैव नावयेद्देहाद्—व्यावृत्यात्मानमात्मनि ॥
यथा न पुनरात्मानं, देहे स्वप्नेऽपि योजयेत् ॥८२॥

शब्दार्थ—देहथी जूदो करीने आत्माने आत्माने विषे तेवी रीते नाववो के, जेथी ते फरीथी स्वप्नामा देहने आत्मरूप न माने

अपुण्यमव्रतैः पुण्य, व्रतैर्मोक्षस्तयोर्व्ययः ॥
अव्रतानीव मोक्षार्थी, व्रतान्यपि ततस्त्यजेत् ८३

शब्दार्थ—हिंसादिक विकल्पोथी पाप अने अहिंसादिक विकल्पोथी पुण्य थाय ठे तथा ते बन्नेनो त्याग करवाथी मोक्ष थाय ठे, तो मोक्षना अर्थीये हिंसादिकनी पेठे पुण्यादिकने त्यजी देवा

अव्रतानि परित्यज्य, व्रतेषु परिनिष्ठित ॥
त्यजेत्तान्यपि संप्राप्य, परमं पदमात्मन ॥८४॥

शब्दार्थ—प्रथम हिंसादि अव्रतोने त्यजो दइ पुण्यादि व्रतने विषे सावधान थाय अने पठी आत्माना परम पदने पामीने अर्थात् वीतरागपणु पामीने ते पुण्यादि व्रतने पण त्यजी दे ८४

यदन्तरर्जल्पसपृक्तमुत्प्रेक्षाजालमात्मन. ॥
मूल ऽ खस्य तन्नाशे, शिष्टमिष्टं पर पदम् ॥८५॥

शब्दार्थ—जे अतर वचनना व्यापारे सहित एवी चितारूप जाल तेज आत्माने ऽ खनु मूल ठे, माटे ते जालनो नाश थये इष्ट एवु परमपद प्राप्त थाय ठे ॥

अव्रती व्रतमादाय, व्रती ज्ञानपरायण. ॥
परात्मज्ञानसपन्न . स्वयमेव परो नवेत् ॥ ८६ ॥

शब्दार्थ–हिंसादि करवावालो अव्रती हिंसा न करवारूप व्रत लइ अने पछी ते व्रत लेनारो व्रती ज्ञानमां तत्पर एवो थाय छे. पछी ते उत्कृष्ट एवा आत्मज्ञानमां लीन थइने पोतेज परमात्मा रूप थाय छे. ॥८६॥

लिंगं देहाश्रितं दृष्टं, देह एवात्मनो भवः ॥
न मुच्यंते भवात्तस्मात्ते ये लिंगकृताग्रहाः ॥८७॥

शब्दार्थ–जटाधारण अथवा नग्नपणुं ए विगेरे लिंग, देहने आश्रिने देखाय छे अने देह एज आत्माने संसाररूप छे, माटे जेउ लिंगने विषे आग्रह करनारा छे तेउ ते संसारथी मूकाता नथी.

जातिर्देहाश्रिता दृष्टा, देह एवात्मनो भवः ॥
न मुच्यंते भवात्तस्मात्ते ये जातिकृताग्रहाः ॥८८॥

शब्दार्थ–जाति ए पण देहने आश्रिने देखाय छे अने देह छे ते आत्माने संसार छे, माटे जेउ जातिमां आग्रह करनारा छे तेउ ते संसारथी मूकाता नथी. ॥८८॥

जातिलिंगविकल्पेन, येषां च समयाग्रहः ॥
तेऽपि न प्राप्नुवंत्येव, परमं पदमात्मनः ॥ ८९ ॥

शब्दार्थ–जाति अने लिंगना भेदे करीने जेउने आगम उपर आग्रह छे तेउ पण आत्माना परम पदने पामता नथीज.

यत्त्यागाय निवर्तन्ते, भोगेभ्यो यदवाप्तये ॥
प्रीतिं तत्रैव कुर्वंति, द्वेषमन्यत्र मोहिनः ॥ ९० ॥

शब्दार्थ–जे शरीरना निर्ममत्वने अर्थे पुष्पनी माला अथवा स्त्री विगेरेथी निवृत्ति पामे छे अथवा उत्तम एवा वीतरागपणानी प्राप्तिने अर्थे निवृत्ति पामे छे. वली ते शरीरने विषे प्रीति करे छे अने वीतरागपणामां द्वेष करे छे. तेउने मोहवाला जाणवा.

अनंतरज्ञः संधते, दृष्टि पंगोर्यथांधके ॥
संयोगाद्दृष्टिमंगेऽपि, संधते तद्वदात्मनः ॥९१॥

शब्दार्थ–जेम पागलानी दृष्टि आंधलाने विषे धारण कराय छे तेम शरीर अने आत्माने विषे अभेदनो आग्रह करनारो पुरुष देह अने आत्माना संयोगथी आत्मानो आशय देहने विषे पण धारण करे छे. ॥ ॥ ९१ ॥

दृष्टभेदो यथा दृष्टि, पंगोरधे न योजयेत् ॥
तथा न योजयेद्देहे, दृष्टात्मा दृष्टिमात्मन. ॥ ९२ ॥

शब्दार्थ–पागलानो अने आंधलानो भेद जाणनारो पुरुष जेम पागलानी दृष्टि आंधलाने विषे न धारण करे तेम देह अने आत्मानो भेद जाणनारो अंतरात्मा पुरुष आत्मानी दृष्टि देहने विषे न धारण करे ॥ ९२ ॥

सुप्तोन्मत्ताद्यवस्थैव, विभ्रमोऽनात्मदर्शिनाम् ॥
विभ्रमोऽक्षीणदोषस्य, सर्वावस्थात्मदर्शिन ॥९३॥

शब्दार्थ–बहिरात्माने सुप्तावस्थानी पेठे अने उन्मत्तादि अवस्थानी पेठे विभ्रम छे. तथा बालकुमारादि लक्षणवाली सर्व अवस्थाने आत्मा एम जोनारा बहिरात्माने विभ्रमज होय छे

विदिताशेषशास्त्रोऽपि, न जाग्रदपि मुच्यते ॥
देहात्मदृष्टिर्ज्ञातात्मा, सुप्तोन्मत्तोऽपि मुच्यते ॥९४॥

शब्दार्थ–बहिरात्मा सर्व शास्त्रने जाणवाने लीधे जागतो छतो पण मूकातो नथी अने अंतरात्मा सुप्त तथा उन्मत्त छतो पण मूकाय छे ॥ ९४ ॥

यत्रैवाहितधी. पुंस, श्रद्धा तत्रैव जायते ॥
यत्रैव जायते श्रद्धा, चित्त तत्रैव लीयते ॥ ९५ ॥

शब्दार्थ–जे विषयमां बुद्धि आश्रय करे, पुरुषने तेज विषयमां श्रद्धा थाय छे अने जे विषयमां श्रद्धा थाय छे तेज विषयमां चित्त आसक्त थाय छे. ॥ ९५ ॥

यत्रैवाहितधीः पुंसः, श्रद्धा तस्मान्निवर्त्तते ॥
यस्मान्निवर्तते श्रद्धा, कुतश्चित्तस्य तल्लयः ॥९६॥

शब्दार्थ–जे विषयमां बुद्धि आश्रय न करे, पुरुषने ते विषयथी श्रद्धा निवृत्ति पामे अने जे विषयथी श्रद्धा निवृत्ति पामे ते विषयमां चितनी आशक्ति क्यांथी होय. ॥ ९६ ॥

भिन्नात्मानमुपास्यात्मा, परो भवति तादृशः ॥
वर्तिर्दीपं यथोपास्य, भिन्ना भवति तादृशी ॥९७॥

शब्दार्थ–जेम दीवाथी जूदी एवी वाट दीवाने पामीने दीवारूप बनी जाय छे तेम आत्माथी जूदो एवो आराधक पुरुष अर्हत् सिद्धरूप आत्मानी उपासना करीने तेवो परमात्मारूप बनी जाय छे. ॥ ९७ ॥

उपास्यात्मानमेवात्मा, जायते परमोऽथवा ॥
मथित्वात्मानमात्मैव, जायतेऽग्निर्यथा तरुः ॥९८॥

शब्दार्थ–जेम वृक्ष पोतानां शरीरने घर्षण करीने पोते अग्निरूप थाय छे तेम आत्मा (उपासक) चिदानंदमय पोताना आत्मस्वरूपनी उपासना करीने परमात्मारूप थाय छे. ९८

इतीदं भावयेन्नित्य–मवाचागोचरं पदम् ॥
स्वत एव तदाप्नोति, यतो नावर्तते पुनः ॥९९॥

शब्दार्थ–आ कह्या प्रमाणे जे भिन्न अने अभिन्न एवा आत्मपदनी नित्य भावना करे छे ते वाणीने अगोचर एवा मोक्ष स्थानने पोतानी मेलेज पामे छे अने ते प्राप्त थयेला पदथी फरी पाछो आवतो नथी. ॥ ९९ ॥

अयत्नसाध्यं निवार्णं, चित्तत्वं भूतज यदि ॥
अन्यथा योगतस्तस्मान्नदुःखं योगिना कचित् १००

शब्दार्थ—जो चेतना लक्षण तत्त्व पृथ्वी आदि पाच महा भूतथी उत्पन्न थयेलुं जाणीये तो पछी मोक्ष, यत्न कर्या विना पण साध्य छे अने प्रारब्ध योगनी अपेक्षाये जो ते तत्त्व पृथ्वी आदि पाच महाभूतथी उत्पन्न थयेलु न जाणीये तो पछी योग थी मोक्ष प्राप्ति छे, माटे दुर्धर अनुष्ठान अथवा भेदन छेदनादि कोइ पण अवस्थामा योगीजने दुःख थतु नथी ॥ १०० ॥

स्वप्ने दृष्टे विनष्टेऽपि, न नाशोऽस्ति यथात्मनः ॥
तथा जागरदृष्टेऽपि, विपर्यासाविशेषतः ॥ १०१ ॥

शब्दार्थ—जेम स्वप्नावस्थामा नाश पामेला शरीरादिकने दीठा छता आत्मानो नाश नथी देखातो तेम विपर्यासना अवि शेष पणाथी जाग्रत अवस्थामा पण नाश पामेला शरीरादिक ने दीठा छता आत्मानो नाश नथी देखातो ॥ १०१ ॥

अदुःखभावितज्ञान, क्षीयते दुःखसंनिधौ ॥
तस्माद्यथाबलं दुःखै—रात्मानं भावयेन्मुनिः ॥ १०२ ॥

शब्दार्थ—काय क्लेशादि कष्ट विना एकाग्रपणाथी एकठुं करेलु ज्ञान दुःख प्राप्त थवाथी नाश पामी जाय छे, माटे योगी पुरुष पोतानी शक्तिने अनुसारे कायक्लेशादि कष्टोवडे आत्माने चितवन करे छे ॥ १०२ ॥

प्रयत्नादात्मनो वायु—रिच्छाद्वेषप्रवर्तितात् ॥
वायोःशरीरयत्राणि, वर्तन्ते स्वेषु कर्मसु ॥१०३॥

शब्दार्थ—इच्छा अने द्वेषथी उत्पन्न थयेला प्रयत्नने लीधे आत्मा सबधी वायु शरीरने विषे चाली रह्यो छे अने ते वायु थी शरीररूपी यत्रो पोताने साध्य एवी क्रीयाने विषे वर्त्ती रह्या छे

तान्यात्मनि समारोप्य, साक्षाण्यास्ते सुखं जडः ॥
त्यक्त्वारोपं पुनर्विद्वान्, प्राप्नोति परमं पदम् ॥ १०४ ॥

शब्दार्थ–जड एवो बहिरात्मा इंद्रियो सहित ते शरीररूप यंत्रोने आत्माने विषे आरोपण करी "हुं गोरवुं, हुं सारां नेत्र वालो हुं." एम मानीने न सुख छतां सुख माने छे अने अंतरात्मा ते आरोपने त्यजी दइ मोक्षपदने पामे छे. ॥ १०४ ॥

मुक्त्वा परत्र परबुद्धिमहंधियं च,
संसारदुःखजननीं जननाद्विमुक्तः ॥
ज्योतिर्मयं सुखमुपैति परात्मनिष्ठ–
स्तन्मार्गमेतदधिगम्य समाधितंत्रम् ॥१०५॥

शब्दार्थ–संसारथी मुक्त अने परमात्म स्वरूपनो जाण एवो पुरुष परमास्वरूपना जाणपणानो एकाग्रताने प्रतिपादन करनारा मोक्षमार्गना उपायरूप आ शास्त्रने पामीने शरीरादिक पदार्थमां परमात्म बुद्धिने अने संसारना दुःखने उत्पन्न करनारी अहंबुद्धिने त्यजी दइ ज्ञानमय एवां सुखने पामे छे. ॥१०५॥

॥ इति समाधि शतकं संपूर्णम् ॥



॥ अथ सज्जनचित्तवल्लभ ॥

नत्वा वीरजिनं जगत्त्रयगुरु मुक्तिश्रियो वल्लभं,
पुष्पेषुक्षयनीतबाणनिवह संसारदुःखापहम् ॥
वक्ष्ये भव्यजनप्रबोधजनन ग्रंथ समासादहं,
नाम्ना सज्जनचित्तवल्लभमिम शृण्वतु संतो जना १

शब्दार्थ–त्रण जगत्ना गुरु, मुक्तिरूप लक्ष्मीना पति, कामना बाण समूहने क्षय करनारा अने संसारना दुःखने नाश करनारा श्री वीर प्रभुने नमस्कार करीने भव्य माणसोने ज्ञान प्रगट करनारा आ सज्जनचित्तवल्लभ नामना ग्रंथने संक्षेपथी कहु छु, तेने संत पुरुषो सांभलो ॥ १ ॥

रात्रिश्चंद्रमसा विनाब्जनिवहैर्नो भाति पद्माकरो,
यद्वत्पण्डितलोकवर्जितसभा दंतीव दंत विना ॥
पुष्प गंधविवर्जित मृतपतिः स्त्री चेह तद्वन्मुनिः,
चारित्रेण विना न भाति सततं यद्यप्यसौ शास्त्रवान् २

शब्दार्थ–जेम रात्री चंद्र विना, तलाव कमलोना समूह विना, सभा पण्डितलोक विना, हाथी दांत विना, पुष्प गंध विना अने स्त्री पति विना नथी शोभती तेम जोके शास्त्रनो जाण एवो पण मुनि चारित्र विना शोभतो नथी ॥ २ ॥

किं वस्त्रत्यजनेन भो मुनिरसावेतावाता जायते,
क्ष्वेडेन च्युतपन्नगो गतविषः किं जातवान् भूतले ॥
मूलं किं तपस क्षमेन्द्रियजयः सत्य सदाचारता–
रागादींश्च बिभर्ति चेन्न स यतिर्लिंगी भवेत्केवलम् ३

शब्दार्थ–अरे ! वस्त्रने त्यजवाथी शुं ? आ पुरुष ए वस्त्रने त्यजी देवाथी शुं मुनि थाय ? अर्थात् न थाय विष खरी पडेलो

अर्थात् विष रहित एवो सर्प शुं पृथ्वीने विषे थाय खरो? अर्थात् न थाय. तपनुं मूळ क्षमा, इंद्रियजय, सत्य अने सदाचारपणुं छे छता जो यति रागादिकने धारण करेछे तो ते यति नहि, परंतु लिंगधारी कहेवाय ॥ ३ ॥

किं दीक्षाग्रहणेन ज्ञो यदि धनाकांक्षा ज्ञवेच्चेतसि,
किं गार्हस्थमनेन वेषधरणेनासुंदरं मन्यसे ॥
द्रव्योपार्जनचित्तमेव कथयत्यज्यंतरस्थांगजं,
नो चेदर्थपरिग्रहग्रहमतिर्जिक्षोर्न संपद्यते ॥ ४ ॥

शब्दार्थ—हे यति! जो धननी इच्छा थाय तो दीक्षा लेवाथी शुं? कारणके, ए यतिवेषने धारण करवाथी ग्रहस्थपणाने तुं शुं खोटो माने छे? द्रव्य मेलववानुं चित्तज अंतरना कामने देखाडी आपे छे अने जो अंतरनो कामविकार न होय तो साधुने धनने अने स्त्रीने ग्रहण करवानी इच्छा थतीज नथी. ॥४॥

योषापंडकगोविवर्जितपदे संतिष्ठ जिक्षो सदा,
ज्ञुक्ताहारमकारितं परगृहे लब्धं यथासंज्ञवम् ॥
षट्धावश्यकसत्क्रियासु निरतो धर्मादिरागं वहन्,
सार्द्धं योगिज्जिरात्मपावनपरै रत्नत्रयालंकृतैः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—हे साधो! स्त्री, जीव तथा पशु विनाना स्थानकने विषे निरंतर रहे अने पारके घेर नहि करावेला तेमज अवसर प्रमाणे मलेला आहारने ज्ञोजन कर. वली आत्माथी पवित्र तेमज ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप त्रण रत्नोथी सुशोज्ञित एवा योगी पुरुषोनी साथे धर्मादि राग करतो छतो छ प्रकारनी आवश्यक क्रियाने विषे तत्पर था. ॥५॥

दुर्गंधं वदनं वपुर्मलगृहं भिक्षाटनाद्भोजनम् ,
शय्या स्थण्डिलभूमिषु प्रतिदिनं कट्यां न ते कर्पटम् ॥
मुंडं मुण्डितमर्द्धदग्धशववत्त्वं दृश्यसे भो जनै ,
साधोऽद्याप्यबलाजनस्य भवतो गोष्ठी कथं रोचते ६

शब्दार्थ–मुख दुर्गंधवालुं, शरीर मलनुं घर, भिक्षा मागवाथी भोजन, प्रति दिवस पृथ्वीने विषे शयन, केड उपर वस्त्र पण नहि एवु, अर्द्ध शबनी पेठे माथु मुडेलुं आ प्रमाणे आकृतीवाला तने हमेशा माणसो जूवे छे छता हे साधो! तने आज सुधी स्त्रीयोनी साथे वातो करवी केम रुचे छे? ॥६॥

अंगं शोणितशुक्रसंभवमिदं मेदोस्थिमज्जाकुलं ,
बाह्ये माक्षिकपत्रसन्निभमहो चर्मावृत्तं सर्वत. ॥
नो चेत्काकवृकादिभिर्वपुरहो जायेत भक्ष्यं ध्रुवम् ॥
दृष्ट्वाद्यापि शरीरशद्मनि कथं निर्वेदना नास्ति ते ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–आ शरीर रुधिर अने वीर्यथी उत्पन्न थयुं छे ते मज ते चरवी, हाडका अने स्नायुथी भरपुर छे वली बहारना भागमा माखीउनी पाखोना सरखी चामडीथी चारे तरफ ढकायलु छे जो आ वर्णन करवा प्रमाणे शरीर न होय तो ते शरीर कागडा अने नार विगेरे जीवोथी आश्चर्यकारी रीते भक्षण कराय छे. तेवा शरीरने जोइने पण तने ते शरीर उपर वैराग्य केम नथी थतो

स्त्रीणां भावविलासविभ्रमगतिं दृष्ट्वानुरागं मनाक्,
मागास्त्वं विषवृक्षपक्कफलवत्सुस्वादवंत्यस्तदा ॥
ईषत्सेवनमात्रतोऽपि मरणं पुंसां प्रयच्छंति भो,
तस्मात् दृष्टिविषाहिवत्परिहर त्वं दूरतोऽमृत्यवे ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–स्त्रीयोना शृंगारादि विलासनो विभ्रमवाली गति

ने जोइ तुं जरा पण राग न कर. कारणके, ते फक्त जोवाने अव सरे विषवृक्षनां पाकेलां फलनी पेठे उत्तम स्वादवाली देखाय छे. परंतु हे मुनि! ते स्त्री जरापण सेवन करवाथी माणसोने मृत्यु आपे छे, माटे ते स्त्रीयोने तुं त्हारा पोतानां जीवितने माटे दृष्टि विष सर्पनी पेठे दूरथी त्यजी दे. ॥८॥

यद्यद्वांछसि तत्तदेव वपुषे दत्तं सुपुष्टं त्वया,
सार्द्धं नैति तथापि ते जडमते मित्रादयो यांति किम् ॥
पुण्यं पापमिति द्वयं च भवतः पृष्टेऽनुयायिष्यते,
तस्मात्त्वं न कृथा मनागपि महामोहं शरीरादिषु ॥९॥

शब्दार्थ—तुं जे जे वस्तुनी इच्छा करे छे ते ते वस्तु तें शरीरने आपीने तेने पुष्ट बनावी दीधुं, तोपण हे जडबुद्धि! ते शरीर त्हारी साथे आववानुं नथी. वली शुं मित्रादि आववाना छे? अर्थात् तेओ पण आववाना नथी. परंतु पुण्य अने पाप ए बन्ने त्हारी पाछल आववाना छे, माटे तुं शरीरादिकने विषे फोगट एवा महा मोह न कर. ॥ ९ ॥

अष्टाविंशतिभेदमात्मनि पुरा संरोप्य साधो वृत्तं,
साक्षीकृत्य जिनान् गुरूनपि कियत्कालं त्वया पालितम्
भंक्तुं वांछसि शीतवातविहतो भूत्वाधुना तद्वृतं,
दारिद्र्योपहतः स्ववांतमसनं भुंक्ते क्षुधार्तोऽपि किम् १०

शब्दार्थ—हे साधु! तें श्री जिनेश्वरने तथा गुरुने साक्षी करी अठाविश भेदवाला साधु व्रतने अंगीकार करीने केटलोक काल पाल्युं छे. वली हवणां ते तुं विषयरूप वायुथी हणायो छतो थइने तेने भांगवानी इच्छा करे छे. परंतु दारिद्र्यथी हणायेलो एवो पण भुख्यो माणस शुं पोताना वमन करेला पदार्थने खाय ख रो? अर्थात् न खाय. ॥१०॥

सौख्यं वांछसि किं त्वया गतभवे दानं तपो वा कृतं,
नो चेत्त्व किमिहैवमेव लभसे लब्धं तदत्रागतम् ॥
धान्यं किं लभते विनापि वपनं लोके कुटुंबीजनो-
देहे कीटकभक्षितेक्षुसदृशे मोहं वृथा मा कृथाः ॥११॥

शब्दार्थ—हे साधु ! तु देह सुखनी इच्छा करे छे ? तो शुं ते पूर्वभवे दान अथवा तप कर्युं छे ? जो ते दान अथवा तप नथी कर्यु तो तु आ भवमा शुं पामवानो छे ? अने सुख प्राप्त करवानी इच्छाथी जे शुभाशुभ कर्म कर्युं छे ते आ भवमा तेनी मेळेज प्राप्त थयेलु छे दृष्टांत कहे छे के, लोकमा कणबी लोक शुं वाव्या विना क्यारे पण धान्य पामे खरा ? माटे कीडाथी भक्षण करायेलो शेरडीना सरखा देहने विषे वृथा मोह न कर ॥११॥

यत्काले लघुभाजनमंडितकरो भूत्वा परेषां गृहे,
भिक्षार्थं भ्रमसे तदापि भवतो मानापमानौ नहि ॥
भिक्षो तापसवृत्तितः कदशनात्किं तप्स्यसेऽहर्निशं,
श्रेयोर्थं किल सह्यते मुनिवरैर्बाधा क्षुधाद्युद्भवा ॥ १२ ॥

शब्दार्थ—जे अवसरे न्हाना पात्रोथी सुशोभित हाथवालो थइ लोकोना घरने विषे भिक्षाने माटे भमे छे त्यारे पण तने मान अपमान थतु नथी, हे साधु ! तो पछी तापस वृत्तिने लीधे कुत्सित आहारथी रातदिवस शा माटे खेद करे छे ? कारण उत्तम मुनिओ कल्याणने माटे भुख आदिथी उत्पन्न थयेली बहु पीडाओने निश्चे सहन करे छे

एकाकी विरहत्यन स्थितबलिवर्दो यथा स्वेच्छया,
योषामध्यरतस्त्वमेवमपि भोत्यक्त्वात्मयूथं यते ॥
तस्मिंश्चेदभिलाषता न भवतः किं भ्राम्यसि प्रत्यहम्,
मध्ये साधुजनस्य तिष्ठसि न किं कृत्वा सदाचारताम् १३

शब्दार्थ—हे मुनि! जेम गामीमां जोडायेलो एक बलद पोतानी मरजी मुजब क्रीडा करे छे तेम तुं पण पोताना समूहने (मुनि समूहने) त्यजी दइ स्त्रीयोना मध्यमां आसक्त थयो छतो क्रीडा करे छे. जो कदापि त्हारे ते स्त्रीयोनी इच्छा न होय तो तुं ते ओना मध्ये निरंतर शा माटे फरे छे अने सदाचार पालीने साधु ओना समूहने विषे केम नथी रहेतो? ॥१३॥

क्रीतान्नं भवतो भवेत्कदशने रोपस्तदा श्लाघ्यते,
भिक्षायां यदवाप्यते यतिजनैस्तद्भुज्यते सादरात् ॥
भिक्षो भाटकसद्मसन्निभतनोः पुष्टिं वृथा मा कृथाः.
पूर्णे किं दिवसावधौ क्षणमपि स्थातुं यमो दास्यति १४

शब्दार्थ—जो त्हारे खराब भोजनमां पण वेचाथी अन्न ला वबुं पडतुं होय तो रोप करवो योग्य छे, परंतु मुनिजनोए भि क्षामां जे अन्न मेलवाय तेज आदरथी भोजन कराय छे, माटे हे भिक्षु! भाडाना घर सरखा आ शरीरने तुं वृथा पोषण न कर. कारणके, ते शरीरनी अवधि पूर्ण थइ रहेशे त्यारे तेने यम क्षण मात्र पण तेमां रहेवा देशे नहि. ॥१४॥

लब्धान्नं यदि धर्मदानं विषये दातुं न यैः शक्यते,
दारिद्रोपहतास्तथापि विषयाशक्तिं न मुचंति ये ॥
धृत्वा ये चरणं जिनेंद्रगदितं तस्मिन् सदा नादरा-
स्तेषां जन्म निरर्थकं गतमजाकंठे स्तनाकारवत् १५

शब्दार्थ—जो के जे गृहस्थो पोताने मलेलुं अन्न धर्मदान करवामां आपी शकाता नथी, जेओ दरिद्रथी हणाया छता पण विशयाशक्तिने मूकता नथी अने जेओ जिनराजे कहेला चारित्रने धारण करी तेने विषे आदर करता नथी. ते सर्वेनो जन्म बकरी

ना कंठे रहेला स्तननी पेठे निष्फल गयो छे ॥१५॥

दुर्गंधं नवभिर्वपुः प्रवहति द्वारैरिमै सतत,
मंदृष्ट्वापि हि यस्य चेतसि पुनर्निवेदता नास्ति चेत् ॥
तस्मायन्नुवि वस्तु किद्दशमहो तत्कारणं कथ्यते,
श्रीखमादिभिरगसंस्कृतिरिय व्याख्याति दुर्गंधतां १६

शब्दार्थ–आ शरीर नवद्वारोथी हमेशा दुर्गंधनेज वहन करे छे, ते शरीरने जोइने जे पुरुषना चित्तमा जो वैराग्य नथी थयो तो पछी आश्चर्य छे के, तेने पृथ्वी उपर बीजी कइ वस्तु वैराग्यनु कारण कहेवाय? आ प्रत्यक्ष श्रीखन्डचदन विगेरेथी करेली अगनी संस्कृती पण दुर्गंधनेज प्रगट करे छे ॥१६॥

शोचति न मृत कदापि वनिता यद्यस्ति गेहे धनं,
तच्चेन्नास्ति रुदति जीवनधिया स्मृत्वा पुनः प्रत्यहम् ॥
कृत्वा तद्दहनक्रिया निजनिजव्यापारचिंताकुला–
स्तन्नामापि च विस्मरति कतिभिःसवत्सरैर्योपित १७

शब्दार्थ–स्त्री जो घरने विषे धन होय तो मृत्यु पामेला पतिनो शोक करती नथी अने जो धन नथी होतु तो आजीविकानी बुद्धियो तेने दररोज वारवार संभारीने रुदन करे छे वली ते स्त्रीयो पतिनो ऊर्ध्वदेहिक क्रीया करीने पछी पोत पोताना काममा आकुल व्याकुल थइ छती केटलाक वर्ष तेनु नाम पण विसरी जाय छे ॥१७॥

अन्यषा मरण भवानगणयन्स्वस्यामरत्व सदा,
देहिन् चिंतयसींद्रियद्विपवशी भूत्वा परिभ्राम्यसि ॥
अद्य श्वःपुनरागमिष्यति यमो न ज्ञायते तत्वत,
तस्मादात्महित कुरुत्वमचिराद्धर्मं जिनेंद्रोदितम् १८

शब्दार्थ—हे देहधारी ! तुं बीजाउनां मरणने नहि गणकार तो छतो हमेशां पोतानां अमरपणानो विचार करे छे अने तेथीज तुं इंद्रियरूप हाथीउने वश थइ जटके छे; परंतु मृत्यु आजे आवशे अथवा काले आवशे ते तत्वथी जाणी शकातुं नथी, माटे तुं तरत पोताना हितकारक एवा जिनेश्वरे कहेला धर्मने आचरण कर. ॥ १७ ॥

देहे निर्ममता गुरौ विनयता नित्यं श्रुताभ्यासता,
चारित्रोज्वलता महोपशमता संसारनिर्वेदता ॥
अंतर्बाह्यपरिग्रहत्यजनता धर्मज्ञता साधुता,
साधो साधुजनस्य लक्षणमिदं संसारविछेदनम् ॥१८॥

शब्दार्थ—हे साधु! शरीरने विषे निर्ममपणुं, गुरुने विषे विनयपणुं, निरंतर शास्त्रने विषे अभ्यासपणुं, चारित्रनुं उज्वल पणुं, म्होटुं उपशमपणुं, संसारमां वैराग्यपणुं, अंतरना अने बाह्यना परिग्रहने त्यजवापणुं, धर्मज्ञपणुं अने साधुपणुं. आ उपर कहेलुं साधुजननुं लक्षण संसारनो नाश करनारुं छे. ॥१८॥

लब्ध्वा मानुषजातिमुत्तमकुलं रूपं च नीरोगतां,
बुद्धिं धीधनसेवनं सुचरणं श्रीमज्जिनेंद्रोदितम् ॥
लोभार्थं वसुपूर्णहेतुभिरलं स्तोकाय सौख्याय भो,
देहिन् देहसुपोतकं गुणभृतं भंक्तुं किमिछास्ति ते २०

शब्दार्थ—हे देहधारी! मनुष्यजातिने, उत्तमकुलने, रूपने, नीरोगीपणाने, बुद्धिने, बुद्धिवंतनी सेवाने अने श्री जिनराजे कहेला चारित्रने त्हारे पामीने लोभने अर्थे धनने एकठा करवाना कारणथी सर्युं शुं. तुं थोडा सुखने माटे गुणथी पूर्ण एवा आ देहरूप उत्तम नावने भांगी नाखवानी त्हारी इछा छे? ॥२०॥

वैतालाकृतिमर्द्धदग्धमृतक दृष्ट्वा ज्ञवतं यते,
यासा नास्ति ज्ञय त्वया सममहो जल्पति प्रत्युत्तरम् ॥
राक्षस्यो ज्ञुवि नो ज्ञवति वनिता मामागता ज्ञक्षितुं,
मत्वैवं प्रपलायता मृतिज्ञयात् त्वं तत्र मा स्था.क्षणम्॥

शब्दार्थ–हे यति! वैतालना सरखी आकृतीवाला अने अ र्द्ध दग्ध थयेला शब सरखा तने जोइ जे स्त्रीयोने ज्ञय थतो नथी, तेज स्त्रीउ तमने उत्तर आपे छे शु ते स्त्रीयो पृथ्वीने विषे राक्षसीयो न कहेवाय? अर्थात् कहेवाय 'ते स्त्रीउ मने ज्ञक्षण क रवा आवो छे' एम मानी तु मृत्युना ज्ञयथी नासी जा पण त्या क्षणमात्र रहिश नहि ॥२१॥

मागास्त्व युवतीगृहेषु सततं विश्वासता संशयो–
विश्वासे जनवाच्यता ज्ञवति ते न स्यात्पुमर्थ ततः ॥
स्वाध्यानुरतो गुरुक्तवचन चित्ते समारोपयन् ,
तिष्ट त्वं विकृति पुनर्व्रजसि चेद्यासि त्वमेव क्षयम् २२

शब्दार्थ–तु स्त्रीयोना घरने विषे निरतर विश्वासपणुं न कर कारणके, विश्वास करवाथी सशय अने लोकमा निदा थाय छे अने तेथी त्हारो काइ पुरुषार्थ थवानो नथी माटे तु गुरुना कहेला वचनने चित्तमा धारण करी ज्ञणवा ज्ञणाववामा आस थयो छतो रहे वली जो तु विकार पाम्यो तो निश्चे नाश पामीश

कि संस्कारशतेन विट् जगति ज्ञो कास्मीरज जायते,
कि देहःशुचिता व्रजेदनुदिन प्रक्षालनादंजसा ॥
संस्कारो नखदतवक्त्रवपुषा साधो त्वया युज्यते,
नाकामी किल मंडनप्रिय इति त्वं सार्थक मा कृथा.॥

शब्दार्थ–हे मुनि! जगत्मा शेकडों उपायोथी पण शु वि

ष्टा होय ते कंकु थाय खरुं? अथवा हमेशां शेंकडोवार प्रयत्नवमे धोवाथी शरीर शुं पवित्रपणाने पामे? माटे त्हारे नख उतारवा, दांत साफ करवा, मुख साफ राखवुं अथवा शरीर धोवुं विगेरे संस्कार करवा योग्य नथी? तो 'तुं शुं अकामी नथी? अथवा मंमनप्रिय बे?' ए वचनने तुं सार्थक न कर. ॥२३॥

आयुष्यं तव निद्रयार्द्धमपरं चायुस्त्रिनेदादहो,
बाल्यत्वे जरया कियद्व्यसनतो यातीति देहिन् वृथा ॥
निश्चित्यात्मनि मोहपासमधुना संछिद्य बोधासिना,
मुक्तिश्रीवनितावशीकरणसच्चारित्रमाराधय ॥ २४ ॥

शब्दार्थ–हे देहिन्! त्हारुं अर्धुं आयुष्य निद्रामां चाल्युं जाय बे अने बाकीनुं अर्धुं त्रण नेदथी चाल्युं जाय बे ते त्रण नेदमां केटलुंक बाल्यावस्थामां, केटलुंक वृद्धावस्थामां अने केटलुंक विषयादिव्यसनमां फोगट जाय बे. आ प्रमाणे तुं आत्माने विषे निश्चय करी हवणां बोधरूप खड्गथी मोह पासने कापी नाखी मुक्ति श्री रमणीने वशीकरण एवा उत्तम चारित्रने आराध.

वृत्तैर्विंशतिभिश्चतुर्भिरधिकैः सल्लक्षणेनान्वितः,
ग्रंथं सज्जनचित्तवल्लनमिमं श्रीमल्लिषेणोदितम् ॥
श्रुत्वात्मेंद्रियकुंजरान्समटतो रुंधंतु ते दुर्जयान्,
विद्वांसो विषयाटवीषु सततं संसारविछित्तये ॥ २५ ॥

शब्दार्थ–श्री मल्लिषेण गुरुए उत्तम लक्षणवाला चोवीश काव्योवमे कहेला आ सज्जनचित्तवल्लन नामना ग्रंथने सांनलीने ते पूर्वे कहेला संत पुरुषो संसारनो छेद करवा माटे विषयरूप अरण्यमां नटकता एवा दुर्जय इंडियरूप गजोने वश करो. २५

॥ इति सज्जनचित्तवल्लन संपूर्ण ॥

॥ अथ श्री वीरजिन स्तवन ॥

जइज्ञा समणे नयवं, महावीरे जिणुत्तमे ॥
लोगनाहे सयंबुद्धे, लोगंतिय विबोहिए ॥ १ ॥
वच्छर दिन्नदाणोहे, सपूरियजणासए ॥
नाणत्तयसमाउत्ते, पुत्ते सिद्धराइणो ॥ २ ॥
चिच्चा रज्ञ च रठ्ठ च, पुर अंतेउर तहा ॥
निक्कमित्ता आगाराउ, पव्वइए अणगारियं ॥ ३ ॥
परीसहाण नो नीए, नेरवाण खमाखमे ॥
पचहा समिए गुत्ते, बन्नयारी अकिंचणे ॥ ४ ॥
निम्ममे निरहंकारे, अकोहे माणवज्जिए ॥
अमाए लोनविमुक्के, पसते छिन्नवंधणे ॥ ५ ॥
पुक्खरवा अलेवेय सखोइव निरंजणे ॥
जीववा अप्पमिग्घाए, गयणव निरासए ॥ ६ ॥
वाउव्व अप्पडिबद्धे, कुम्मोवा गुत्तइदिए ॥
विप्पमुक्के विहगव्व, खग्गिसिंगव एगगे ॥ ७ ॥
नारंडेवा पमत्तेय, वसहेवा जाय थामए ॥
कुजरोइव सोंडीरे, सीहोवा दुद्धरिस्सए ॥ ८ ॥
सायरोइव गन्नीरे, चंदे इव सोमलेसए ॥
सूरोवा दित्त तेयल्ले, हेमवा जाय रूवए ॥ ९ ॥
सव्व सहे धरित्तिव्व, सायरवुव्व सछ्छे ॥
सुहुहुय हुयासुव्व, जलमाणेय तेयसा ॥ १० ॥
वासी चदण कप्पेय, समाणे लोट्ठु कचणे ॥
समे पूया वमाणेसु, समे मोक्खे नवे तहा ॥ ११ ॥
नाणेण दसणेण च, चरित्तेण मणुत्तरे ॥
आलएण विहारेण, मद्दवेण ज्ञवेणय ॥ १२ ॥

लाघवेणं च खंतीए, गुत्ती मुत्ती अणुत्तरे ॥
संजमेण तवेणंच, संवरेणं मणुत्तरे ॥ १३ ॥
अणेग गुण सयाइन्ने, धम्म सुक्काण जायए ॥
घाइरकएण संजाए, अणंतवर केवली ॥ १४ ॥
वीयराएय निग्गंथे, सव्वन्नु सव्वदंसणे ॥
देविंद दाणविंदेहिं; निव्वत्तिय महामहे ॥ १५ ॥
सव्व न्नासाणुगाएय, न्नासाए सव्व संसए ॥
जुगवं सव्वजीवाणं, छिंदिउ न्निन्नगोयरे ॥ १६ ॥
हिए सुहेय निस्सेय, कारए सव्व पाणिणं ॥
महव्वयाणि पंचेव, पन्नविता सन्नावणे ॥ १७ ॥
संसारसायरं वुड़, जंतुसंताण तारए ॥
जाणुव्व देसियं तिछ, संपत्ते पंचमं गइं ॥ १८ ॥
से सिवे अयले निच्चे, अरूवे अयरामरे ॥
कम्मप्पपंचउम्मुक्के, जएवीरे जएजिणे ॥ १९ ॥
से जिणे वद्धमाणेय, महावीरे महायसे ॥
असंखडुरककिन्नाणं, अम्हाणं देउ निव्वुइ ॥ २० ॥
इय परम पमोया संथुउ वीरनाहो,
परमपसमदाणा देउ तुल्लत्तणं मे ॥
असमसुहडुहेसु सग्गसिद्धी न्नवेसु,
कणयकयवरेसु सत्तु मित्तेसुवावि ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीवीरजिन स्तवन ॥

॥ अथ श्रीमधरस्वामीनु स्तवन ॥

केवलनाण सणाह, विदेहवासमि सठिय धीर ॥
सुरमणुअनमियचलण, सीमधरसामिय वंदे ॥१॥
जय सीमधर सामिय, जवियमहाकुमुयबोहणमयंक ॥
समरामि तं महायस, इह ठिउ जारहे वासे ॥ २ ॥
सीमधरदेव तुम, गामागरेयपट्टणेसु विहरंतो ॥
धम्म कहेसि जेसि, सहल चिय जीविय तेसि ॥ ३ ॥
किं जयव मह कम्म, समठियं तारिसेहि पावेहि ॥
ज नहजाउ जम्मो, तुह पयमूले सया काल ॥ ४ ॥
चिंतामणि सारिछो, अहवा कप्पद्दुमव्व सुहफलउ ॥
अप्पुव्व कामधेणू, नहु नहु ताणपि अहीयरो ॥ ५ ॥
वज्जइ तुह सामित्त, तिहूयण मज्जमि नजण अन्नस्स ॥
जम्हा एरिस रिद्दी, न हु दीसइ सेसपुरिसस्स ॥ ६ ॥
रुइया ह सामि तुमं, सिंहासणसठिय सपरिवार ॥
धम्म वागरमाण, पिछस्स नियनयणेहि ॥ ७ ॥
पुज्जतु ते मणोरह, निच्च जे हियरसंठिया मज्ज ॥
पावइ रकोवि फल, सपत्ते कप्परुक्कमि ॥ ८ ॥
निच्च झाएमि अह, तुह पयकमलसु निम्मल धीर ॥
तह कुरु देव पसाय, जह दरिसाय मम देसि ॥ ९ ॥
ते धन्ना कयपुन्ना, देवा देवीय माणवा सव्वे ॥
जे ससय वुच्छेय, करति तुहपायमूलंमि ॥ १० ॥
अहय पुन्नविहूणो, ठाणे ठाणमि संसया वमिउ ॥
इच्छामि विसूरतो, जवमज्जो नाणपरिहीणो ॥ ११ ॥
कुणसु पसाय गुरुय, वच्छीसमयाण जह होइ ॥
जम्हा महाणुजावा, सरणागय वच्छला हुति ॥ १२ ॥

कम्मवसेणय अहयं, भारहवासंमि जइवि चिठामि ॥
तहवि तुमं महियए, रयणायर चंदणाएण ॥ १३ ॥
तं पहु तं मम्म गुरू, तं देवो बंधवो तुमं चेव ॥
गुरु संसारगयाणं, जीवाणं हुज्ज तं सरणं ॥ १४ ॥
संसारजलहिमझे, निबुडुमाणेहिं भव्व सत्तेहिं ॥
पइदिवसं समरिज्जइ, सीमंधर सामि पयकमलं ॥ १५ ॥
जइ इच्छह परमपयं, निव्वंन्ना तहय जम्ममरणाणं ॥
ता समरह जिणनाहं, विदेहवासंमि विहरंतं ॥ १६ ॥
जो निच्चं भव्वाणं, विदेहवासंमि सामि विहरंतो ॥
स धम्मदेसणाए, मिछत्त पणासणं कुणइ ॥ १७ ॥
पच्चूसे मझणे, संझा समयंमि सव्वकालंमि ॥
सीमं धर तिछयरं, वंदेहं परम भत्तोए ॥ १८ ॥
पंच धणुस्सय माणो, चउरासी पुव्वलख वरिसाऊ ॥
सो सीमंधरनाहो, अणंतनाणी सया जयउ ॥ १९ ॥
मुणिसुव्वय नमि तिछयर, अंतरे रज्जलछि विछडुं ॥
छंम्मिय पव्वज्जदिरकं, सोमंधर सामियंवंदे ॥ २०
इय सीमंधरनाहो, थुउ मए भत्तिरायकलिएणं ॥
सासय सुहक्क जणउ, जयनाहो होउ भवियाणं ॥

॥ इति श्रीमंधरजिन स्तवनं ॥

॥ अथ श्रीगुरु पदक्कणा ॥

गोअम सुहम्म जम्बू, पन्नवो सिज्जम्भवाइ आयरिआ ॥
अन्नेवि जुगप्पहाणा, पइ दिठ्ठे सुगुरु ते दिठ्ठा ॥ १ ॥
अज्ज कयच्छो जम्मो, अज्ज कयठ्ठं च जीविय मज्झ ॥
जेण तुह दंसणामय–रसेण सत्ताइ नयणाइं ॥ २ ॥
सो देसो त नगरं, त गामो सोअ आसमो धन्नो ॥
जत्थ पहु तुम्हपाया, विहरंति सयावि सुपसन्ना ॥ ३ ॥
हत्था ते सुकयत्था, जे किइकम्मं कुणंति तुह चलणे ॥
वाणी बहुगुण खाणी, सुगुरु गुणा वन्निआ जीए ॥ ४ ॥
अवयरिया सुरधेणू, संजाया महगिहे कणवुठ्ठी ॥
दारिद्द अज्जगय, दिठ्ठे तुह सुगुरु मुहकमले ॥ ५ ॥
चिंतामणि सारिच्छ, समत्त पाविय मए अज्जा ॥
ससारो दूरिकठ्ठ, दिठ्ठे तुह सुगुरुमुहकमले ॥ ६ ॥
जा रिद्धी अमरगणा, भुजंता पियतमाइं संजुत्ता ॥
सापुण किंत्तियमित्ता, दिठ्ठे तुह सुगुरु मुहकमले ॥ ७ ॥
मणवयकाएहि मए, ज पावे अज्जिय सया भयव ॥
तं सव्वं अज्ज गय, दिठ्ठे तुह सुगुरुमुहकमले ॥ ८ ॥
दुल्लहो जिणिंदधम्मो, दुलहो जीवाण माणुसो जम्मो ॥
लध्धेपि मणुअजम्मे, अइ दुलहा सुगुरु सामग्गी ॥ ९ ॥
जत्थ न दीसंति गुरु, पच्चूसे उठिएहि सुपसन्ना ॥
तत्थ कह जाणिज्जइ, जिणवयण अमिअसारिच्छं ॥ १० ॥
जह पाउसम्मि मोरा, दिणयर उदयम्मि कमलवणसंडा ॥
विहसंति तेमतच्चिय, तह अम्हे दसणे तुम्ह ॥ ११ ॥
जइ सरइ सुरहि वच्छो, वसंतमास च कोइला सरइ ॥
वंझ सरई गइदा, तह अम्म मणं तुमं सरई ॥ १२ ॥

बहुयां बहुयां दिवसम्मां, जइ मई सुहगुरु दिठ ॥
लोचनवे विकसी रह्यां, हीअम्मइं अमिअ पइठ ॥ १३ ॥
अहो ते निज्जिन कोहो, अहो माणो पराजिन ॥
अहो ते निरक्किया माया, अहो लोहो वसोकीन ॥ १४ ॥
अहो ते अज्जवं साहु, अहो ते साहु मद्दवं ॥
अहो ते नत्तमा खंती, अहो ते मुत्ति नत्तमा ॥ १५ ॥
इहंसि नत्तमो नंते, इच्चाहोहिसि नत्तमो ॥
लोगुत्तमुत्तमं ठाणं, सिद्धि गच्चसि नीरन ॥ १६ ॥
आयरिय नमुक्कारो, जीवं मोएइ नवसहस्साउ ॥
नावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहिलान्नाए ॥ १७ ॥
आयरिअनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो ॥
मंगलाणं च सव्वेसिं, तईयं हवइ मंगलं ॥ १८ ॥

॥ इति श्री गुरु प्रदक्षणा समाप्त ॥

॥ अथ जीवानुशास्ति कुलक ॥

रेजीव किं न बुझसि, चनगइसंसारसायरे घोरे ॥
नमीन अणंतकाले, अरहट्ट घडिव्व जलमज्झे ॥ १ ॥
रेजीव चिंतसि तुमं, निमित्तमित्तं परो हवइ तुझ ॥
असुहपरिणामजणियं, फलमेयं पुव्वकम्माणं ॥ २ ॥
रेजीव कम्मनरिअं, नवएसं कुणसि मुढ विवरिअं ॥
डुग्गयगमणमणाणं, एसच्चिय हियइ परिणामो ॥ ३ ॥
रेजीव तुमं सीस, सवणा ढाऊण सुणसु महवयणं ॥
जं सुक्खं नइ पाविसि, ता धम्मविवज्जिन नूणं ॥ ४ ॥
रेजीव मा विसायं, जाहितुमं पिच्छिऊण पररिद्धी ॥
धम्मरहियाण कुत्तो, संपज्जइ विवहसंपत्ती ॥ ५ ॥

रेजीव किं न पिच्छसि, झिज्जंत जुव्वण धण जीअ ॥
तहविहु सिग्ध न कुणसि, अप्पहिय पवरजिणधम्म ॥ ६ ॥
रेजीव माणवजिअ, साहस परिहीण दीण गयलज्ज ॥
अच्छसि कि वीसत्थो, नहु धम्मे आयर कुणसि ॥ ७ ॥
रेजीव मणुयजम्मं, अकयत्थं जुव्वण च वोलीण ॥
नय चिन्न उग्गतव, नय लच्छी माणिआ पवरा ॥ ८ ॥
रेजीव किं न कालो, तुज्झ गत्तं परमुह नीयतस्स ॥
ज इच्छिअ न पत्त, तं असिधारावय चरसु ॥ ९ ॥
इयमामुह सुमणेण, तुज्झ सिरी जा परस्स आइत्ता ॥
ता अ।यरेण गिन्हसु, मगीय विहिपयत्तेण ॥ १० ॥
जीव मरणेरासम, नरज्जइ जुव्वण सह जराए ॥
रिद्धा विणास सहिआ, हरिस विसाउ नय कायव्वो ॥ ११ ॥

॥ इति जीवानुशास्ति कुलक समाप्त ॥



॥ श्री प्रकरणमाला समाप्त. ॥